उपलब्ध राहुल साहित्य

वोल्गा से गंगा
विस्मृति के गर्भ में
भागो नहीं दुनिया को बदलो
दिवोदास
सोने की ढाल
घुमक्कड़ स्वामी
घुमक्कड़ शास्त्र
बौद्ध दर्शन
तिब्बत में बौद्ध धर्म
इस्लाम धर्म की रूपरेखा
साम्यवाद ही क्यों
तुम्हारी क्षय
सतमी के बच्चे
सिंहल के वीर
अकबर
संस्कृत काव्यधारा
हिन्दी काव्यधारा (आदिकालीन)
हिन्दी काव्य (आदिकालीन)
निराले हीरे की खोज

प्रथम संस्करण : 1981
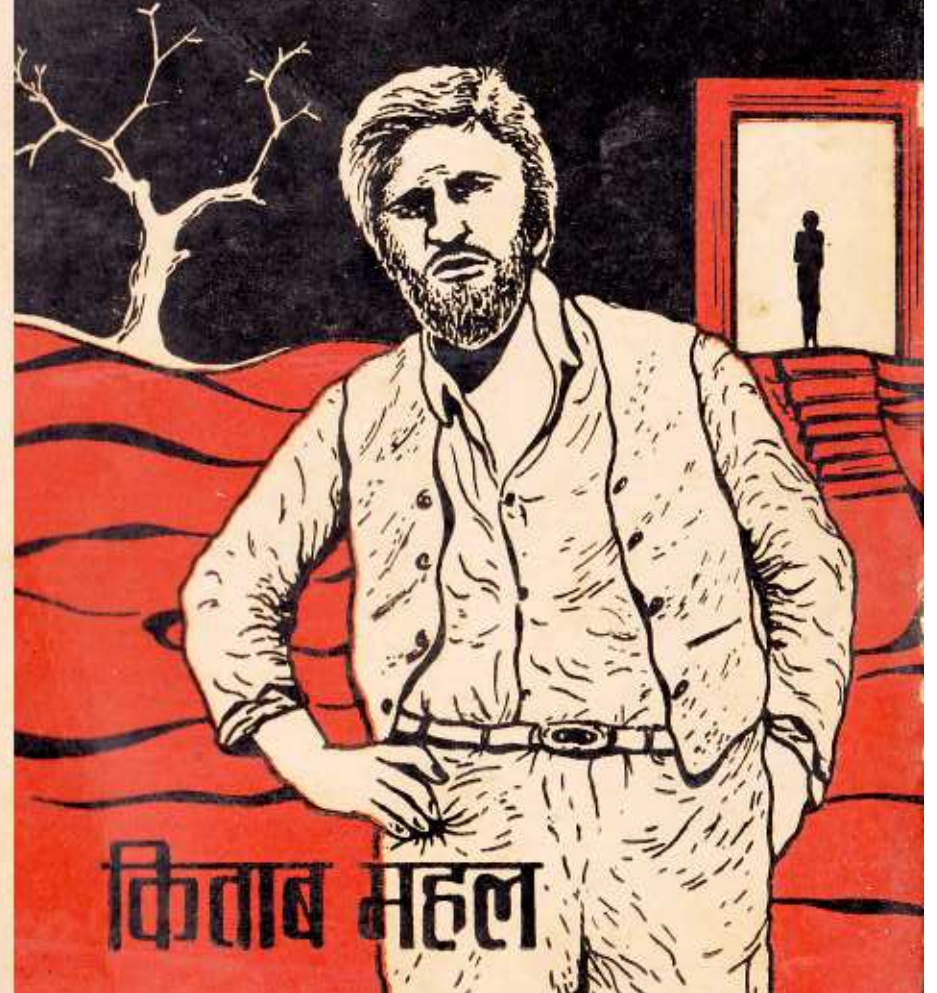
शाखाएँ : (1) 28 नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली
(2) अशोक राजपथ, पटना
(3) मनोज बिल्डिंग, सेन्ट्रल बाजार रोड, रामदास पेठ, नागपुर

मूल्य : नौ रुपये

प्रकाशक : किताब महल, इलाहाबाद।
मुद्रक : अनुपम प्रेस, 6 चक, इलाहाबाद।

परिचय

इस उपन्यास का लेखक ऐनी "जदीदों" (नवयुगवादियों) के आन्दोलन का एक प्रसिद्ध प्रतिनिधि तथा बुखारा की क्रांतिकारी हलचल में आरम्भ से ही काम करने वाला रहा। ऐनी यद्यपि उन व्यक्तियों में था, जिन्होंने बुखारा में जदीदी आन्दोलन की नींव डाली, तथापि 'जदीदवाद' के खोखलेपन से जल्दी ही परिचित हो, उसने बोल्शेविक क्रांति के पथ को अपना लिया।

ऐनी की तीस-साला जुबली मनाते समय 16 नवम्बर, 1945 को ताजिकिस्तान की राजधानी स्तालिनाबाद में ताजिक नेता आबिदोफ ने कहा था—"सामन्तवादी पूर्व (के देशों) में रुदकी, फिरदौसी, सादी, उमर खैय्याम, हाफिज-जैसे कितने ही योग्य और महान साहित्यकार पैदा हुए, किन्तु ये महामानव यदि सूली पर नहीं चढ़ाये गये, तो भी सदा उत्पीड़ित या निर्वासित रहे।......हमारे प्रसिद्ध लेखक (ऐनी) के जीवन का बहुत बड़ा भाग बुखारा के अमीरी अत्याचारपूर्ण जमाने में गुजरा था।"

ऐनी की जीवनी के बारे में बेहतर होगा, कि मैं उनके पत्र ही को यहाँ उद्धृत करूँ, जिसे ऐनी ने 23 अप्रैल, 1947 में समरकन्द से अनुवादक (राहुल) के पास भेजा था :

"मैं सन् 1878 में बुखारा जिले के गिजदुआन तहसील में साक्तारी गाँव में एक गरीब किसान के घर पैदा हुआ। 12 साल की वय में अनाथ हो गया। बड़ा भाई बुखारा में पढ़ रहा था। उसने मुझे अपनी संरक्षता में ले लिया। वहाँ मैं पढ़ता और मजूरी करता रहा। मदरसा आलमजान में एक बरस झाड़ूदार (फर्राश) का भी काम किया। 1905 से अध्यापकी और पाठ्य-पुस्तकों के लिखने का काम करता रहा। 1915–16 में एक साल किजिलतप्पा के कपास के कारखाने के ओटाई आफिस में काम किया।

1916 में बुखारा के एक मदरसे में मुदर्रिस (प्रोफेसर) नियुक्त हुआ। 1917 के राष्ट्रीय आन्दोलन या 'फरवरी-क्रांति' में अमीर के विरुद्ध काम किया। 16 अप्रैल को गिरफ्तार करके मुझे 75 कोड़े मारे गये, और 'आबखाना' नामक जेल में डाल दिया गया। रूसी क्रांति-सेना ने मुझे जेल से निकाल कर कागन के अस्पताल में रखा, जहाँ 52 दिन रहने के बाद मैं स्वास्थ्य-लाभ कर सका। 17 जून, 1917 को समरकन्द आया। तब से समरकन्द नगर में ही मेरा निवास है।

मार्च, 1918 में कोलिसोफ युद्ध-कांड के समय मेरे छोटे भाई को, जो कि

मुदर्रिस थे, अमीर ने पकड़वा कर मरवा दिया। 1918 से मैं सोवियत के हाई-स्कूलों में पढ़ाने लगा, साथ ही 1919–21 में समरकन्द के दैनिक और मासिक पत्र-पत्रिकाओं में साहित्य-सम्पादक का भी काम करता रहा। बुखारा की क्रांति में भाग ले अमीर के विरुद्ध जनता को उभाड़ने का काम किया। 1922 में मेरे बड़े भाई को साक्तारी गाँव में बसमाचियों (क्रांति-विरोधियों) ने मार डाला। 1921 के अन्त से 1923 तक मैं बुखारा-जन-सोवियत-प्रजातन्त्र के वकील के नायब के तौर पर समरकन्द में काम करता रहा।

1923 के अन्त से 1925 तक समरकन्द में सरकारी व्यापार का संचालक रहा। 1926 से 1933 तक तिरमिज में साहित्य और विज्ञान विषयक सम्पादन का काम करता रहा। सितम्बर, 1933 में ताजिक सरकार ने मुझे काम से छुट्टी दे दी, जिसमें कि मैं घर पर रह कर अपना साहित्य और विज्ञान-सम्बन्धी कार्य स्वतन्त्रता-पूर्वक कर सकूँ।

1935 से मैं उजबेकिस्तान की उच्च-शिक्षण-संस्थाओं, उजबेक सरकारी युनिवर्सिटी (समरकन्द), समरकन्द ट्रेनिंग कॉलेज, ताशकंद ट्रेनिंग कॉलेज, ताशकन्द लॉ कॉलेज, मध्य-एशिया युनिवर्सिटी (ताशकंद) में एम० ए०, डॉक्टर-उम्मेदवार (पी-एच० डी०) और डॉक्टर (डी० लिट्०) की परीक्षाओं का परीक्षक और परामर्शदाता होता आ रहा हूँ।

1923 में ताजिक समाजवादी सोवियत प्रजातन्त्र की केन्द्रीय कार्यकारिणी का मेम्बर चुना गया। 1929 से 1938 तक भी उसका सदस्य रहा। 1931 में ताजिक सरकार ने मुझे 'लाल श्रमध्वज' का तमगा प्रदान किया। 1935 में ताजिक सरकार की ओर से मुझे एक मोटरकार और भवन प्रदान किया गया और उजबेक सरकार की ओर से सनद और रेडियो मिला।

1923 में अखिल सोवियत लेखक-संघ का मेम्बर चुना गया। 1934–44 तक संघ के सभापति-मंडल का एक सभापति और ताजिकिस्तान तथा उजबेकिस्तान के लेखक-संघों की उच्च समितियों का भी सदस्य रहा। अप्रैल, 1941 में सोवियत सरकार ने 'आर्डर ऑफ लेनिन' नामक तमगा प्रदान किया। 1943 में उजबेक-साइंस-अकादमी का 'माननीय सदस्य' निर्वाचित हुआ। 1946 में 'साइन्स के काम के लिये' तमगा मिला। 1939 में स्तालिनाबाद की नगर सोवियत (कारपोरेशन) का मेम्बर चुना गया। 26 अक्तूबर, 1940 को 'माननीय साइन्सी नेता ताजिकिस्तान समाजवादी सोवियत प्रजातन्त्र' की उपाधि मिली। अक्तूबर, 1946 में उजबेक युनिवर्सिटी की साहित्य-फैकल्टी का डीन बनाया गया।"

23 अप्रैल, 1947 को आबिदोफ ने ऐनी की जुबिली में भाषण देते हुए, उनके साहित्यिक कार्यों पर भी प्रकाश डाला—

"ऐनी की कितनी ही पुस्तकें रूसी, उजबेकी, उक्रैनी आदि भाषाओं में अनुवादित हो चुकी हैं। उनका 'अदीना' ताजिक भाषा के साहित्य का यदि प्रथम उपन्यास है, तो ऐनी की दूसरी कृति 'दाखुंदा' निश्चय ही सर्वश्रेष्ठ साहित्यिक कृति मानी जायगी।......

सब से पहिला बड़ा काम ऐनी का है ताजिक भाषा को अरबी शब्दों से शुद्ध करना, जो कि लम्बे ऐतिहासिक काल में (हमारी भाषा में) आ घुसे थे।......ऐनी ने जनता की चालू भाषा से लाभ ही नहीं उठाया, बल्कि उस भाषा को पूर्ण और विकसित कर, अपनी कृतियों के द्वारा उसे दुनिया के साहित्य में स्थान दिलाया।......

'अदीना' और 'दाखुंदा' की भाषा वह भाषा है जिसमें (ताजिकिस्तान) के लोग बातचीत करते हैं। इस काम ने तथा जनसाधारण के जीवन की गम्भीर जानकारी ने ऐनी को बहुत जल्दी प्रसिद्ध कर दिया। गाँवों, कलखोजों और स्कूलों में ऐसे कितने ही पाठक मिलेंगे, जो 'अदीना' और 'दाखुँदा' की कहावतों को बातचीत में इस्तेमाल करते हैं।......पूज्य गुरु सदरुद्दीन ऐनी बहुत बरसों तक हमारे बीच रह शत्रुओं को संत्रस्त करते हुए, हमारे समाजवादी देश की भलाई के लिये काम करते रहे!"

ऐनी ने पुराने ढंग से अरबी और इस्लामिक वाङ्मय का गम्भीर अध्ययन किया था और वे एक बड़े मदरसे के अध्यापक भी रहे। उनकी कलम से ताजिक भाषा का यह पहिला उपन्यास लिखा जाना वैसा ही है, जैसे बनारस के किसी पुराने ढंग के महामहोपाध्याय का उपन्यास लिखने के लिये कलम उठाना। इस उपन्यास को लिख कर ऐनी ने समरकन्द से निकलने वाले दैनिक 'आवाजे ताजिक' में 23 नवम्बर, 1924 से क्रमशः प्रकाशित कराना शुरू किया। वहाँ इसका नाम 'सरगुजश्ते यक ताजिक कमबगल या कि अदीना' (एक ताजिक गरीब की जीवनी अर्थात् अदीना) था। 1927 में यह 'अदीना' के नाम से अलग छपा, और उसी साल इसका रूसी अनुवाद भी हुआ। लेखक और उसकी मातृभाषा का पहिला उपन्यास होने के कारण यद्यपि 'अदीना' की भाषा बहुत मँजी हुई नहीं है, तथापि इसका अपना महत्व है। इसीलिये ऐनी के उपन्यास 'दाखुंदा', 'जो दास थे' और 'अनाथ' को हिन्दी में अनुवादित करने के बाद मैंने उनकी, प्रथम कृति 'अदीना' का भी अनुवाद करना आवश्यक समझा।

मसूरी,
1–3–1951

राहुल सांकृत्यायन

अनाथ

अदीना बारह बरस की उम्र में अपने माँ-बाप को खो कर दीन-अनाथ हो गया था। उसका बाप एक बहुत गरीब और बेचारा आदमी था। उसके पास एक गाय को छोड़ कर और कोई चीज अपने छोटे लड़के को दायभाग में देने के लिये नहीं रह गई थी। अदीना का गाँव करातेगिन इलाके में था। बाप के मरने पर काजी ने चपरासी और मुफ्ती को भेज कर, उसके माल को कुर्क करवा लिया। काजी के हक, मुफ्ती के खर्च, चपरासी के खिदमताने तथा गाँव के मुखिया और अक्सक्काल (लंबरदार) के भोज के पैसों को काट लेने के बाद गाय की बची का पैसा ही खतम नहीं हो गया, बल्कि अदीना 10 तंका का कर्जदार भी हो गया। अदीना का पालन-पोषण उसकी नानी ने अपने चरखे और हाथ के काम से करना शुरू किया। नानी ने कर्ज के रुपये के लिये अदीना की ओर से नायब काजी के सामने निम्न हैंडनोट (दस्तावेज) लिख दिया——

'मैं मुसम्मात बीबी आइशा, पुत्री शाह मुराद, अपने नाबालिग नाती अदीना, पुत्र बाबाकलाँ, के बाप के श्राद्ध के खर्च के लिये अरबाब कमाल की 10 तंका की कर्जदार हो गई। उसे नाबालिग अदीना की ओर से मैंने सिर पर लिया, और करार किया, कि जिस वक्त वह बालिग और काम करने लायक हो जायेगा, उक्त रकम के बदले अरबाब कमाल की सेवा करेगा।'

बीबी आइशा ने तीन साल तक परवरिश करके अदीना को 15 साल का बना, अरबाब कमाल की सेवा में लगा दिया। अरबाब कमाल ने अपनी 50 भेड़-बकरियों तथा एक गधे को अदीना के हाथ में देकर, उसे चरवाही और लकड़हारी के काम में लगा दिया। अदीना प्रति दिन सवेरे जानवरों को लेकर चराने के लिये जाता, और शाम को दर्रे और पहाड़ से ईंधन काट, गधे के ऊपर लाद कर, भेड़-बकरियों को सामने किये, अपने मालिक के घर लाता था।

इसी प्रकार खिदमत करते-करते अदीना 17 साल का हो गया है। इस दो साल के अर्से में उसने अपने मालिक की ओर से न कभी पेट भर खाना पाया, और न ठीक से कपड़ा ही। पुराने-धुराने कपड़े और सड़े-गले लत्तों को उसे दिया जाता था, और उन्हें वह ऊन के सूत से जानवरों को चराते वक्त किसी तरह सी और जोड़ कर, 'जामा' का नाम देकर, अपने तन को ढाँकता। पुराने चमड़ों को भी उसी तरह जोड़-जाड़ कर, पायजामा, 'मुक्की' के नाम से पैरों में डाल लेता। मोटी-झोटी रोटी जो मालिक की ओर से मिलती, वह भी पेट भरने के लिये पर्याप्त न होती, यद्यपि उसमें जंगली घास और जड़ भी शामिल रहती।

इतनी तकलीफों और मेहनत के बाद भी बेचारे अदीना ने मालिक के मुँह से न कभी एक भी मीठा शब्द सुना, और न उसके चेहरे को प्रसन्न देखा, बल्कि जब कभी उसके सामने गया, बिना कारण उसे गाली और झिड़की ही सुननी पड़ी। अरबाब कमाल चाहे किसी कारण किसी और पर नाराज होता, किन्तु उसका गुस्सा वह अदीना को गाली देकर उतारता। जैसे, यदि किसी कर्जदार ने अपने करार के अनुसार कर्ज अदा न किया, तो उसके लिये गाली में अदीना को भी शामिल किया जाता, अथवा यदि समरकन्द के रास्ते में बर्फ पड़ जाने से भेड़ों का वहाँ जाना बन्द हो जाता, जिससे करातेगिन के इलाके में चौपायों का मूल्य गिर जाता, तो इसके लिये भी अदीना गाली का पात्र समझा जाता। अगर संयोगवश अदीना कोई गलती कर बैठता, तो चाहे वह गलती उसके बस की बात न भी होती, फिर भी प्रकाशमान दिन उसके लिये अँधेरी रात बन जाती।

... ...

एक दिन बसंत के समय सारी पर्वत-स्थली बसंत ऋतु के कारण नवोत्पन्न हरियाली से जलपूर्ण नदी की तरह हरीतिमा की लहरें मार रही थी। इस हरियाली की अनन्त लहरों में बाधा डालने वाले थे जहाँ-तहाँ पहाड़ों पर खड़े नंगे पाषाण। यह पाषाण यद्यपि आदमियों के हाथ से काटे नहीं गये थे, तथापि बसंती वर्षा के कारण बहुत साफ-सुथरे हो गये थे, इसलिये सौंदर्य में वह भी हरियाली से कम नहीं थे। यद्यपि पहाड़ के ऊपर की बरफ गरमी के कारण गल कर पानी बन, नीचे से नीली घासों को जमाने लगी थी, तथापि अभी तक पहाड़ी फूल अपने सफेद सिरों को हरियाली से बाहर नहीं निकाल पाये थे, कि दर्शक की आँखें किसी और तरह के दृश्य को भी देख पातीं। पहाड़ की बड़ी नहरें ही बरफ की चादरों से ढँकी केवल मनोहर दृश्य उपस्थित नहीं कर रही थीं, बल्कि छोटी नहरें भी पानी जमा करने के खजाने के सालों-साल कम होते जाने से पानी की मात्रा कम रखते भी बहती हुई अपने किनारे हरियाली को बढ़ाते स्थली की सु[illegible] को बढ़ा रही थीं।

आप यह [illegible] सोचे, कि यह बड़ी-बड़ी नहरें और कुलाबे अपने भीतर तेज चलती पानी की धारा को बहा रही थीं। नहीं, हमने और शब्द न मिलने के कारण उन्हें यह नाम दिया, नहीं तो वह पानी की छोटी-छोटी नालियाँ थीं, जिनकी लम्बाई-चौड़ाई उस घास और तिनकों से अधिक नहीं थी, जो कि उनके रास्ते में तीन-तीन पत्ती के निकल आये थे। पानी की आवाज भी इसी तरह उस से ज्यादा नहीं थी, जो कि किसी ताजिक सुन्दरी की अलकों के वायु-चालित होने पर निकलती है। यह दृश्य, जो कि हमने आपके सामने रखा, न बहुत गहरा था, और न चारों तरफ एक साथ। यह स्वाभाविक है, कि ऐसी जगह, जहाँ पानी विशेष तौर से कम था, वहाँ वह बहुत धीमे-धीमे चलता। उसमें इतनी शक्ति नहीं थी, कि मिट्टी, कीचड़ या तिनकों को अपने रास्ते से हटाता हुआ तेजी से आगे बढ़ता। हरियाली और तीनपतिया तृण, जो उतने ही बड़े

थे, जितनी पानी की गहराई, हवा की गति और पानी की चाल से हिलते हुए, बड़ी कोमल हरकत पैदा करते, कहीं पानी के भीतर और कहीं पानी के ऊपर लहरा रहे थे। हरियाली और तीनपतिया को थपेड़े लगाती हवा हुक्म दे रही थी, कि वह आगे बढ़कर पानी को चुम्बन दे। इसीलिये पानी को चुम्बन देने के लिये तीनपतिया हरियाली चंचल हो उठी थी।

हमारा अदीना, जिसकी आँखें अनाथों के आँसुओं से कभी खुश्क नहीं हुई थीं, अपनी भेड़-बकरियों को लिये, इसी सुन्दर दृश्य के भीतर से उन्हें चराते हुए अरबाब द्वारा पाये सभी कष्ट और रंज को दिल से भूल कर एक शिला पर करवट लेता, पर्वत-स्थली के इस सौंदर्य को देखने में बूड़ा हुआ था। उसे यह भी पता नहीं था, कि रंज क्या चीज है, और दुनिया क्या है। जब-तब दूर पहाड़ के ढालों में से किसी चिड़िया की 'काक-काक' की आवाज उसके कानों में आती, जिससे थोड़ी देर के लिये उसका ध्यान प्रकृति के उस नयनाभिराम दर्शन से हट जाता, लेकिन वह भी एक और ही आनन्द उपस्थित करता। कभी-कभी आसमान में निकल कर काले बादल का कोई टुकड़ा सूर्य के मुख को उसी तरह ढाँक देता, जैसे कि अरबाब कमाल के ललाट को स्याही हर वक्त ढाँके रहती, जिससे बेचारे अदीना की दृष्टि में दुनिया अन्धकारमय हो जाती। लेकिन सूर्य उस कालिमा को अपनी कोशिश से उसी तरह जल्दी ही हटा देता, जैसे कि पूर्व की पुत्रियाँ अपनी कोशिश से अपने सिर पर पड़े काले पर्दे को हटा देना चाहती हैं, जिसके कारण काले बादल के नीचे से एक सौंदर्यमय दूसरी दुनिया आकर खड़ा होना चाहती है।

अदीना उस शिला के ऊपर कभी इस करवट, कभी उस करवट, कभी पेट के बल और कभी पीठ के बल लेटा जल्दी ही नींद में डूब गया। उसे कुछ पता नहीं रहा, कि भेड़-बकरियाँ कहाँ गईं, गधा का क्या हुआ, और ईंधन का क्या हुआ। भेड़-बकरियाँ पेट भर चरकर अपने रखवाले के चारों तरफ लेटी हुई, चरी हुई खुराक को फिर से जुगाली करने में लगी हुई थीं। कुछ समय बाद पेट को खाली देख कर, वह फिर चरने की इच्छा से उठकर हरी-भरी घास ढूँढ़ने चारों ओर बिखर गईं। जिस पर्वत-स्थली के सौंदर्य को हमने अभी देखा, उसके नीचे की ओर एक गहरा दर्रा था, जिसके दोनों तरफ के पहाड़ सीधी दीवार की तरह खड़े थे। चरते हुए एक बकरी इस दीवार के किनारे पर पहुँच कर चरने लगी। उसकी देखा-देखी एक भेड़ भी आगे बढ़ी। एकाएक उसकी दृष्टि एक हरे बूटे पर पड़ी, जो उसके पैरों के नीचे की ओर था। उसने आगे बढ़कर उसे चरना चाहा। इसी समय उसके पैर के नीचे का पत्थर खिसक गया, और भेड़ एक घास के पूले की तरह लुढ़कती नीचे जा पड़ी। भेड़ें इतनी लोभी नहीं होतीं, कि चरने के लिये अपने को ऐसे खतरे में डालें; लेकिन बकरी की देखा-देखी वह अपने को रोक न सकी। लुढ़कते वक्त जिस-जिस पत्थर के ऊपर वह भेड़ पड़ी, वह भी गति-

शील हो, दूसरे पत्थरों पर पड़कर कितने ही पत्थरों को चलाते नीचे की ओर चला, और उनके टकराने से एक तरह की आवाज सारे पहाड़ में गूँजी, जिसे सुन कर भेड़ें कान उठा इधर-उधर भागने लगीं। इस आवाज ने अदीना को नींद से उठा दिया, और वह अपनी आँखों को मलते, चारों ओर नजर दौड़ाते, यह जानने के लिये कोशिश करने लगा, कि क्या बात है। लेकिन अब पत्थरों के एक दूसरे से टकराने की आवाज बन्द हो गई थी, और भेड़ों का चारों ओर भागना भी खत्म हो चुका था। अदीना को यह देख कर ख्याल हुआ, कि शायद भेड़ों ने भेड़िया देखा। ठीक हाल जानने की कोशिश करने के पहिले यह आवश्यक था, कि भेड़ों को शान्त किया जाय। इसलिये 'में-में' पुकारते, धीरे-धीरे उसने सभी भेड़ों को एक कोने में इकट्ठा किया, और उनमें से एक-एक पर नजर दौड़ा कर देखा, कि वहाँ एक भेड़ नहीं थी। सभी भेड़ें डरी हुई एक ओर नजर किये खड़ी थीं। अदीना को ख्याल आया, कि कोई बात उसी तरफ हुई है। उसने उसे जानने के लिये भेड़ों को वहीं छोड़, पहाड़ के किनारे पर देखा, कि एक बकरी दर्रे के नीचे चुपचाप इधर-उधर बिखरे पत्थरों में पैर डाले अब भी चर रही है। और आराम से इतना खाना खा रही है, कि गोया दुनिया-जहान की उसको कोई फिक्र नहीं है। अदीना ने बकरी को देख, भेड़ को ढूँढ़ने के लिये कुछ और नीचे की तरफ नजर दौड़ा कर देखा। एक भेड़ पानी के भीतर पड़ी हुई थी, और अपने सिर को बाहर किये हिला रही थी। भेड़ को पाने और जिन्दा देखने से संतुष्ट होकर, वह उसे ऊपर लाने के लिये दर्रे के नीचे उतरा। और भेड़ के पास जाकर देखा, कि उसके अगले दोनों पैर टूट गये हैं, पिछले पैर भी फट गये हैं, और शरीर में भी कई जगह चोट है। यह देखते ही वह उज्ज्वल दिन बेचारे अदीना के लिये अँधेरी रात बन गया। उसने सोचा, कि इसके कारण अरबाब कमाल उसकी बुरी गति बनावेगा। उसे कुछ समझ में नहीं आया, कि अब क्या करें। खैरियत थी, कि भेड़ धारा में न गिर, थोड़े पानी में पड़ी थी, जो कि धारा से अलग हो कर पानी के छोटे-से गड्ढे की तरह था, नहीं तो धारा भेड़ को बहा ले जाती, और बीच की चट्टानों पर पटक कर उसके टुकड़े-टुकड़े कर डालती।

यद्यपि भेड़ मिल गई थी, तथापि उसके भीतर की चिंता का कारण अभी दूर नहीं हुआ था। वह जानता था, कि अरबाब कमाल इसके लिये क्या करेगा, कितनी गालियाँ देगा। भेड़ के हाथ-पैर टूटने के कारण हो सकता है, कि वह उसके हाथ-पैर तोड़ डाले, या कोड़ों से उसकी खाल उधेड़ कर नमक भर दे। अरबाब कमाल एक पत्थर-दिल, खूँख्वार आदमी था। वह कुछ भी कर सकता था। इस तरह विचार करते हुए, अदीना एक भय से दूसरे भय में गिरता जा रहा था। फिर ख्याल आया, शाम होने को आई है, मालिक के घर जाने तथा जो भी होनहार हो, उसे भोगने के सिवा कोई चारा नहीं। सबेरे ही जो ईंधन उसने जमा कर रखा था, उसके दो बोझे बाँध कर गधे पर रख, घायल भेड़ को उस पर रख रस्से से खूब मजबूती से बाँधा, और गधे को आगे कर, उसके पीछे भेड़-बकरियों को हाँकते, घर का रास्ता लिया। वह जितना ही घर के नज-

दीक पहुँचता जाता था, उसके दिल की कँपकँपी और ज्यादा बढ़ती जा रही थी। अंत में उसने सोचा; 'अरबाब कमाल चाहे जो कुछ भी करे, मार डालने से अधिक कुछ नहीं कर सकता। जो जिन्दगी मैं बिता रहा हूँ, मरना उससे हजार गुना अच्छा है। इसलिये क्यों मैं इतना डर रहा हूँ; क्यों नहीं मैं मौत का खुशी के साथ स्वागत करना चाहता?' इस तरह विचार करते हुए उसका दिल कुछ निश्चिन्त हुआ, हाथ-पैर में कुछ ताकत पैदा हुई, और वह मालिक के घर के दरवाजे पर भी पहुँच गया। पहिले घायल भेड़ को गधे से उतार कर दरवाजे के पास रखा, फिर ईंधन को उतार कर ईंधन-घर के भीतर रखा, और फिर भेड़-बकरियों को उनके बाड़े में पहुँचाया।

अरबाब कमाल ने गधे की आवाज सुन कर समझ लिया, कि भेड़ें आ गईं। वह उस वक्त खिचड़ी खा रहा था। उसे आधा ही खाकर बाहर चला आया, और अपनी रोज की आदत के अनुसार भेड़ों और बकरियों पर एक-एक करके नजर दौड़ाने लगा। देखा, कि एक भेड़ नहीं है। उसने जोर से आवाज लगाई—"अदीना, काली शीशक कहाँ है?"

"वह यहाँ है।" अदीना ने जवाब दिया।

"पदर-लानत (हरामी), यह बदचलनी कहाँ से सीखी? इस तरह भेड़ को चुराना चाहता है? घर के बाहर इसे क्यों रखा? ऐसा मारूँगा, कि तेरे तीसों दाँत मुँह से बाहर निकल जायेंगे।"—यह कहते हुए, वह जल्दी से भेड़ के पास आया। फिर भेड़ की हालत देख कर, अदीना की ओर निगाह करके, चिल्ला कर बोला—"बतला, यह क्या हाल है?" कह कर, उसने हर नाम से उसे गाली देना शुरू किया।

अदीना घटना की बात बतलाने लगा—"मैं ईंधन जमा कर रहा था... .."

पर अरबाब ने उसे वाक्य पूरा करने का भी मौका नहीं दिया, और भूखे सियार की तरह मुर्गे पर हमला कर दिया, या भिखारी के ऊपर कुत्ते की तरह टूट पड़ा। अदीना के पास पहुँच, जमीन से पत्थर उठा, उसके सिर पर दे मारा। उसका सिर फट गया, और वह जमीन पर गिर गया। इतने से भी अरबाब का गुस्सा ठंडा नहीं हुआ। वह जमीन पर पड़े बेचारे अदीना को मारता और ठोकर लगाता रहा, और साथ ही चिल्ला-चिल्ला कर गालियाँ देता रहा। अदीना चोट खा कर, एक-दो बार "हाय, मरा!" कह कर चिल्लाया। फिर उस में आवाज निकालने की भी शक्ति नहीं रह गई।

अरबाब के कोड़ों की पटपटाहट और गालियों की आवाज की चिल्लाहट सुन कर, गाँव के मुल्ला खाकराह दो-तीन बुजुर्गों के साथ इस घटना को जानने के लिये अरबाब कमाल की हवेली पर आये। इस वक्त तक अरबाब का गुस्सा कुछ कम हो गया था, और मारते-मारते वह थक भी गया था। गाँव के लोगों को आया देख कर, अदीना को वैसे ही छोड़, उनके पूछने से पहिले ही उसने कहानी छेड़ दी—"इस नमकहराम तीन-तिलाकी माँ के बेटे को देखिये! मेरी खिचड़ी खाता है, मेरी रोटी खाता है, मेरी

दी हुई पोशाक पहनता है, और आप जानते ही हैं, कि इसके बाप के मुर्दे को मैंने कब्र दिलाई। आज भेड़ों को उनके ऊपर छोड़ यह सो गया था, या खेलने लगा, जिससे कि यह भेड़ गड्ढे में गिर गई। और आप देख ही रहे हैं, कि इसकी क्या हालत हुई है। क्या मेरा हक नहीं कि इस मुसटंडे को मारूँ? पीटने ही की बात क्या, मुझे इसे जान से मार डालने का भी हक है। सौ सुअरों से एक भेड़ कहीं बढ़कर है। अगर आप लोग न आ जाते, तो इस वक्त तक मैं इसे मार डाले होता। अब इस बात पर आप सब गाँव के बुजुर्ग ही विचार करें।"

बुजुर्गों ने इस घटना के बारे में जान कर, तथा यह भी जान कर कि अरबाब का मंसूबा क्या है, अदीना के पास आ, उसके घाव से खून जाते देखते हुए, कहा—"कोई हर्ज नहीं। एक नमदे का टुकड़ा जला कर बाँध दिया जाय, तो ठीक हो जायगा। अदीना तूने लड़कपन किया, तूने नादानी की। अरबाब ने जो इतना हल्ला-गुल्ला किया, तुझे पीटा, यह भी तेरे हित की ही बात है। वह चाहता है कि तू होशियार हो, आदमी बन। कहावत है, कि 'मोमिन का माल, मोमिन का खून।' तूने अरबाब के माल को बरबाद किया, मानो उसका खून बहाया। अरबाब सच कह रहा है, कि तेरे गुनाहों के लिये, तेरे कसूर के लिये वह तुझे मार सकता है। खैरियत हुई, कि हम लोग आ गये। अब हमारी पिता-जैसी नसीहत यही है, कि अपने काम में होशियार रह, अरबाब के माल को अपने प्राण के समान जान, खबरदारी कर। तेरा बाप नहीं है, और अरबाब तेरे बाप की जगह है......"

फिर बुजुर्गों ने अरबाब की ओर देख कर कहा—"एक बार इसने बेवकूफी की है। इसे क्षमा कर दो। जो कसूर इसने किया, उसे क्षमा करना ही बेहतर है। भेड़ के बरबाद होने का आपको अफसोस है। उसका भी इलाज है। हम सबको मालूम है, कि अदीना तुम्हारा कर्जदार है, इसीलिये तुम्हारे हाथ में लिखा-पढ़ी होकर पड़ा है। यह भेड़ जो बरबाद हुई है, इसका भी हम दाम लगा देते हैं, और उसी हैंडनोट (दस्तावेज) की पीठ पर लिख देते हैं। यदि इसकी उम्र बाकी रही, तो अदीना नौकरी करके तुम्हारे सभी कर्ज को अदा कर तुम्हें खुश करेगा। ठीक है न?" यह कह कर, उन्होंने अदीना की ओर दृष्टि डाली।

अदीना को भी सिर हिला कर "हाँ" करने के सिवा और कोई रास्ता नहीं था। यह बला इतनी आसानी से हट रही है, यह देख कर वह अपने दिल में कुछ खुश भी हुआ। गाँव के बुजुर्गों ने भेड़ का दाम 10 तंका लगा कर दस्तावेज की पीठ पर लिखा दिया।

"इतनी मधुरता के साथ इस काम को पूरा करने लिये मुँह मीठा कराना चाहिये," कह कर, और हँसते हुए अरबाब को "खुश रहो" कह, वे हवेली से निकल कर, बाहर चले गये।

दूसरे दिन अरबाब कमाल ने घायल भेड़ को आठ तंका में बेच डाला। लेकिन अदीना तो पूरे 10 तंका का कर्जदार बना ही रहा!

हिसाब

अपने बाप सुलतान मुराद के मरने के समय अनाथ गुल बीबी एक साल की थी। तब से आठ साल की उम्र तक अपनी माँ, जो कि अदीना की मौसी भी थी, के हाथ परवरिश पाती रही। उसकी माँ रहीमा बेगम की लालसा यही थी, कि गुल बीबी को बड़ी करके अपने भतीजे को ब्याह दे, और इस प्रकार अपने तथा अपनी बहन के चिराग को जलता रखे। लेकिन रहीमा बेगम की अभिलाषा पूर्ण न हुई, और वह मर गई। मरते वक्त उसने अपनी माँ बीबी आइशा के सामने यही वसीयत की, कि "मेरी आँखों की तारा गुल बीबी को अदीना के साथ पालना-पोसना, और बड़ी होने पर उसे अदीना से ब्याह देना।" बीबी आइशा ने इस वसीयत को भुलाया नहीं। रात-दिन उसकी यही इच्छा थी कि खिदमत से छुट्टी पा जाय, तो शादी की तैयारी करके अपनी जिन्दगी में ही उस अमानत अर्थात् गुलबीबी का हाथ उसके हाथ में दे दे। एक दिन बीबी आइशा ने अदीना से कहा—"माँ के प्राण, तेरे 17 साल पूरे हो गये। दो साल से—अरबाब की खिदमत कर रहा है। शायद अपनी खिदमत की मजूरी में अरबाब का कर्ज बराबर हो गया होगा। अब वक्त है, कि तू अपने मालिक से छुट्टी लेकर अपने काम में लग जा, और कुछ बचा-खुचा कर अपने माँ के घर को आबाद और अपने पिता के चिराग को रोशन कर।"

अदीना की भी यही इच्छा थी, कि जितनी जल्दी हो सके, अरबाब कमाल के हाथ से छुट्टी पाये और अपने दूसरे देशवासियों की तरह फरगाना की तरफ जाकर मजूरी और बोझा-ढुलाई करे। और जब उसके पास कुछ जमा हो जाय, तो अपने गाँव में आकर मौसी की लड़की गुल बीबी से ब्याह करके खुशी के साथ जिन्दगी बिताये। लेकिन कैसे किस रास्ते से अरबाब के हाथ से छुट्टी पाये, इसका उसे कोई उपाय न सूझा। अरबाब की गालियों, थप्पड़ों और कोड़ों ने उसकी आँखों को ऐसा भयभीत कर दिया था, कि सिर उठा कर उसकी तरफ देखने की भी उसे हिम्मत न होती थी; हिसाब करने तथा छुट्टी पाने की बात तो अलग रही। खैर, यह सब भय होने पर भी नानी के बार-बार आग्रह करने पर उसे हिम्मत हुई, और एक दिन उसने अरबाब के सामने अपना विचार प्रकट किया। अरबाब कमाल ने यह बात सुन कर, फाड़ खाने वाले शेर की तरह गुर्राते ओंठों के भीतर कहा—"छुट्टी!......हिसाब!......यह सब क्या है? अब इस पापिनी माँ के बेटे का पेट रोटी से भर गया!" फिर गुस्से से अंगारों की भाँति लाल हुई आँखों को अदीना के ऊपर डाल कर, उसने कहा—"कमीने, नमकहराम! क्या कह रहा है? किस तीनतिला की औरत ने तुझे गुमराह किया है? तू अच्छी तरह समझ रख, कि तेरे मरने के बाद, तेरी हड्डी भी मुझसे छुट्टी न पायेगी, और न तू मेरे कर्ज से रिहाई पायेगा। जा अपने दादा के पास, और विदाई ले!"

अदीना ने अत्यन्त नम्रता के साथ सिर नीचा किये, अपने पैरों की तरफ दृष्टि डाले, कहा—"नानी कहती हैं, कि......"

अरबाब ने अदीना को अपनी बात खत्म करने का समय न दे, उसकी तरफ दौड़ कर, उसके हाथ से लाठी छीन ली, जिस पर सहारा लिये अदीना खड़ा था, और उसे उसके सिर पर ऐसे ताबड़तोड़ मारा, कि उस में सूराख हो गये, और जगह-जगह से खून की धारायें, मानो गड़वे की टोंटी-से निकलने लगीं। इतना करके भी अरबाब को सन्तोष नहीं हुआ। वह उसके ऊपर लाठी बरसाता ही गया। अदीना ने चोट से तिलमिला कर, रक्षा पाने के लिये लोगों को आवाज दी। लेकिन वहाँ कौन था, जो उसकी फरियाद पर आता?

अरबाब घायल अदीना को उसी तरह छोड़ कर, कुछ ख्याल करके, दौड़ कर गली में आ, मसजिद की ओर गया, और वहाँ इमाम तथा कुछ दूसरे सिर कँपने वालों को देख कर बोला—"आइये, देखिये, यहाँ क्या हाल है।"

"क्या हुआ?" कहते हुए, गाँव वालों ने बार-बार पूछा। अरबाब ने कहा—"आइये, स्वयं देखिये, कि क्या हुआ, कि आप लोगों ने मेरे साथ क्या किया। जो गड़बड़ी आपने की है, उसे चल कर स्वयं ठीक कीजिये।"

इस तरह अपने अभिप्राय को अच्छी तरह प्रकट न करके, वह उन्हें अपने घर लाया। गाँव के बुजुर्गों ने अरबाब की हवेली में आ कर, अदीना को मिट्टी और खून में लतपथ देखा। वे अरबाब से बोले—"अच्छा तूने इस अनाथ को मारा है। इसमें हमारा दोष क्या है?"

"आप ही न थे, जिन्होंने कि इसके बाप के मुर्दे के लिये मुझसे कर्ज ली? आपही न थे, जिन्होंने भेड़ के बरबाद करने पर इसके द्वारा मेरी नौकरी कराने का जिम्मा ले मुझसे मिठाई खाई? अब यह मुझसे हिसाब करके छुट्टी लेना चाहता है। आप लोगों का कर्तव्य है, कि मेरा कर्ज दिलवायें या कोई रास्ता निकालें, जिसमें कि मेरा पैसा डूब न जाय, नहीं तो मैं अपना हक आप लोगों से पाना चाहूँगा।"

मुल्ला खाकराह अरबाब की इस बौखलाहट से मुस्करा कर, बोले—"अपने इस दर्द को चिल्ला कर न कहने से भी काम चल सकता है। 'दोस्त का एक इशारा मिलना चाहिये और हम सिर के बल दौड़ने को तैयार हैं' की कहावत नहीं सुनी? तुम इशारा करो, और हम उसे कराने के लिये तैयार हैं। इसके लिये हम सबको काजीखाना (न्यायालय) में घसीट ले जाना उचित नहीं।"

श्वेत-केशों में से एक ने मुल्ला खाकराह से कहा—"आइये, मुल्ला साहब, अब दूसरा बखेड़ा खड़ा न कीजिये।" और अदीना के पास आ कर, नसीहत करना शुरू

किया—"तू अब भी बच्चा-नादान है। तूने दुनिया की सरदी-गरमी नहीं देखी। तू नहीं जानता, कि पैसा कहाँ से पैदा होता है और किस तरह हाथ में आता है। अच्छी तरह जान ले, कि दुनिया में पैसा कर्ज की चीज नहीं है। कोई किसी को चिरकाल के लिये धरमादा ऋण नहीं देता। वह 10 तंका, जो अरबाव ने तेरे बाप के मुर्दे के खर्च के लिये दिया था, उसका हर महीना एक तंका सूद बढ़ता है......"

मुल्ला खाकराह ने श्वेतकेश की बात काट कर, बीच में कहा—"सूद मत कहिये, उतारा कहिये।"

श्वेतकेश ने अपनी बात जारी रखते हुए, कहा—"ठीक। मुल्ला जी के कथनानुसार कहता हूँ, प्रत्येक 20 तंका पर प्रति माह एक तंका उतारा होता है। इस साल तुझे कर्जदार हुए पाँचवाँ साल बीत रहा है। उस मूल पैसे पर सूद के हिसाब से......"

मुल्ला खाकराह ने बहुत गुस्सा हो कर, अबकी कहा—"कान लगा के सुनो, एक बार तुम से कह दिया, कि सूद मत कहो!"

दूसरे श्वेतकेश ने बात में शामिल होते हुए, मुल्ला खाकराह से कहा—"'शिकार का अर्थ गोश्त खाना है' की कहावत मशहूर है। चाहे सूद कहिये, चाहे उतारा, उसका अर्थ यही है, कि 10 तंका पर प्रति मास एक तंका ज्यादा होता है। मुल्ला जी, इसके लिये झगड़ा करना ठीक नहीं है।"

"क्यों ठीक नहीं है?" मुल्ला खाकराह ने कहा—"सूद अर्थात् रिवा इस्लामी धर्मशास्त्र में निस्संदेह हराम है। इसीलिये बुखारा शरीफ के धर्मशास्त्रियों ने लोगों की जरूरत को देख कर सूद खाने के लिये रास्ता निकाला, धर्मशास्त्र के अनुसार इसका नाम उतारा रखा है।"

"सूदखोरी करो, लेकिन नाम उसका उतारा रखो, यह बात बुखारा के धर्मात्मा लोगों की तरह, अरबाब की समझ में नहीं आई। उसे सूद खाने में भी कोई एतराज नहीं है। यदि सूद हराम है, तो उतारा नाम रख देने से वह हलाल नहीं हो सकता। गधे का नाम भेड़ रख देने से वह भेड़ नहीं होता। हम बाप-दादों से सूद का नाम सुनते आये हैं। वह शब्द हमें मालूम है। इस उतारा को लेकर हम क्या करें?"—श्वेतकेश ने कहा।

"तुम्हें कोई अधिकार नहीं, कि धर्म-शास्त्र के काम में जबान चलाओ।" कहते हुए मुल्ला ने झगड़ा करना चाहा।

अरबाब ने बीच में पड़ कर, कहा—"मुल्ला जी, इन बातों का यहाँ समय नहीं है। आइये, जो काम करना है, उसे देखें।"

मुल्ला खाकराह को और दम मारने की हिम्मत नहीं हुई। उसने दोनों हाथों को अपने सीने पर कस कर, अरबाब की ओर निगाह करके, "अच्छा, अच्छा" कहा, और चुप हो रहा।

श्वेतकेश ने स्वतंत्रतापूर्वक कहना शुरू किया—"इस साल तेरे कर्जदार होने का पाँचवाँ साल है। सूद का हिसाब लगाने से मूल के ऊपर 6 तंका का तू और कर्जदार हो गया। पिछले साल एक भेड़ के नुकसान हो जाने का 10 तंका कर्ज चढ़ा, जिसका एक तंका सूद हुआ। यदि अरबाब तिल-तिल का हिसाब करे, तो इस सूद को भी हर साल मूल में मिला कर उसका सूद जोड़ सकता है। फिर जो कर्ज तेरे ऊपर है, वह तेरे खून की कीमत से ज्यादा होगा। इसलिये तू बुरे लोगों की बात में मत पड़, दोस्त और दुश्मन की बात में न फँस। तेरी दादी बेवकूफ है। उसके बहकावे में न आ और अपनी जवान जान को अपने-आप मुसीबत में न डाल। एक टुकड़ा रोटी, जो अरबाब तुझे देते हैं, उसके लिये धन्यवाद दे कर दिलोजान से उनकी खिदमत करता रह। बेहूदी बातों और नालायकी से अपने चेहरे की गरमी को सर्द न कर। यह है हमारी तेरे लिये पिता की तरह की नसीहत।"

अदीना इस घटना तथा श्वेकेशों की उपदेश-भरी बातों को सुनकर, सोये से जागा-सा या नशे में से निकल आया-सा हो, सजग हो गया। उसने अच्छी तरह जान लिया, कि खुशी-खुशी सीधे छुट्टी पाने का उसके लिये कोई रास्ता नहीं है। मुक्ति पाने का ख्याल इस वक्त दिल से निकाल कर, बेबस हो फिर अरबाब की खिदमत करनी शुरू की।

मुक्ति

अदीना ने दाँत पर दाँत रख कर, इस जेलखाने या अरबाब कमाल की नौकरी में, एक साल और बिताया। इस सारे समय में कोई ऐसा मौका हाथ नहीं आया, कि भागने का रास्ता निकलता, और वह किसी दूसरे इलाके में जाकर आजादी से जिन्दगी बसर करता। इसी समय एक ऐसी बात हुई, जिससे कि करातेगिन तहोबाला हो गया, और अदीना को भी भागने का रास्ता मिल गया। वह बात इस प्रकार है।

बुखारा के अमीर आलम खाँ ने बुखारा और तिरमिज के बीच रेलवे-लाइन बनवाने का इरादा किया, जिसके लिये सस्ते मजदूरों की जरूरत पड़ी। मजदूरों को आकृष्ट करने के लिये उन्हें मजूरी के अतिरिक्त राह-खर्च भी देने का निश्चय किया गया। करातेगिन के हाकिम को जिसकी आमदनी बहुत कम थी, सूचना मिली। हाकिम को पैसा कमाने के लिये इससे अच्छा मौका दूसरा कौन मिल सकता था? लोगों को इस बात का पता नहीं था। उसने जोर-जबरदस्ती से आदमियों को जमा करके बुखारा भेजना शुरू किया। लोग घबराये हुए थे। उन्हें मालूम नहीं था, कि उन्हें किस काले पानी भेज दिया जायगा। इसलिये उन्होंने इस आफत से बचने के लिये साधारण रीति

पैसा दे कर छुटकारा लेना शुरू किया। जिनके पास कुछ पैसा था, वे हाकिम तथा उसके कारिन्दों को पैसा देकर छुट्टी पा गये। जो गरीब थे, लेकिन शरीर से जवान और बलिष्ठ थे, उन्होंने कितने ही वर्षों के अनाथपन में पड़ने या दूसरे लोगों के शब्दों में आजीवन दासता भोगने से बचने के लिये बायों (धनियों) और सूदखोरों के हाथों में अपने को बेचकर रिश्वत के लिये पैसा जमा करके दिया। कुछ लोग अपने पुत्र या छोटी लड़की को बेचने पर मजबूर हुए। जिन लोगों के पास न पैसा था, न सन्तान थी, न शरीर में जवानी और ताकत थी, वे भगवान पर भरोसा करके बुखारा जाने के लिये तैयार हुए। अरबाब कमाल ने भी इस अवस्था से फायदा उठाते हुए, अपने गाँव के बड़ों के सामने अदीना से कहा––"तुझे इस आफत से बचाने के लिये मैंने हाकिम को सौ तंका दिया। अब मेरा कर्ज तेरे ऊपर ज्यादा हो गया। यदि तू प्रलय तक भी जिन्दा रहे, और मेरी तथा मेरी सन्तान की खिदमत करता रहे, तो भी मेरा कर्ज अदा नहीं कर सकता।"

अरबाब की सारी बात झूठी थी। हाँ, उसने भी सौ तंका हाकिम को दिया था, लेकिन वह अदीना की रिहाई के लिये नहीं, बल्कि अपने 22 साला पुत्र इबाद को छुड़ाने के लिये।

पिछले तजर्बों के कारण अदीना अब समझदार हो गया था, और अरबाब कमाल की बातों और उसकी हरकतों से अच्छी तरह वाकिफ था, नहीं तो वह अरबाब से कहता, 'मेरी छुट्टी के लिये बेकार आप कष्ट न उठायें, पैसा न दें। मुझे अपनी किस्मत पर छोड़ दें, जिसमें मैं दूसरे जाने वालों के साथ इस इलाके से चल दूँ। अगर इसका परिणाम मरना भी हो, तो भी मैं उसके लिये राजी हूँ। यही दौलत मेरे लिये बहुत है, कि मरने से पहिले तेरे-जैसे अत्याचारी के हाथ से छुटकारा पा जाऊँ।'

लेकिन जो बातें उसके दिल में आ रही थीं, उन्हें उसने अरबाब के सामने प्रकट नहीं किया; बल्कि उसने ऐसा रुख दिखलाया, कि मानो अरबाब की इस कृपा के लिये वह बहुत ही कृतज्ञ और प्रसन्न है। लेकिन भीतर से अब वह भागने का रास्ता ढूँढ़ने लगा था।

जमाने की तकलीफों ने छोटी उम्र में ही अदीना को तजर्बेकार और समझदार बना दिया था। इस बात के कुछ दिनों बाद मुक्ति पाने के ख्याल से ही उसने अपने को बीमार बना लिया। उसने यह नाटक इतनी अच्छी तरह से खेला, कि अरबाब कमाल को मालूम होने लगा, कि अदीना आज या कल इस दुनिया से चला ही चाहता है। उसने अपने पुत्र इबाद से कहा––"पुत्र, जल्दी ही एक-दो आदमियों को ले कर इस मुर्दे को इसकी नानी के यहाँ रख आ। अगर यह यहाँ मरा, तो कब्र और कफन का खर्च भी हमारे ऊपर पड़ेगा।"

इबाद ने भी अपने पिता की आज्ञा का पालन करने के लिये गाँव के दो-तीन

आदमियों को बुला कर दो डंडों पर रस्सी बाँध, बीमार अदीना को उस पर उठवा कर बीबी आइशा के घर पहुँचा आया। बीबी आइशा ने नाती को इस हालत में देख कर, क्षण भर के लिये होश-चेत खो दिया। होश आने पर रोना-धोना शुरू किया। इबाद के चले जाने के बाद, अदीना ने सन्तोष की साँस ले, आँख खोल कर, नानी से कहा–– "बीबी जान, बेकार का रोना-धोना मत करो, और मुझे परेशानी में न डालो। मैं वस्तुतः बीमार नहीं हूँ, बल्कि उस जल्लाद (अरबाब कमाल) के हाथ से मुक्ति पाने के लिये मैंने अपने को बीमार बनाया है।"

अदीना ने कुछ सुस्ता कर, फिर कहा––"बचाव का उपाय यही है, कि इसी रात मैं उठ कर इस इलाके से चला जाऊँ। इस भेद को एक सप्ताह तक किसी से न कहना। जो कोई पूछे, उसे बतलाना, कि मैं सख्त बीमार हूँ। एक सप्ताह बाद जो कोई पूछे, उससे कह देना कि अच्छा हो कर मैं अपने मालिक के घर चला गया।"

बीबी आइशा ने एकाएक जो यह बात सुनी, जिसका अर्थ था, अपनी इकलौती संतान का सदा के लिये वियोग, तो वह सावन-भादों की तरह आँखों से आँसू बहाने लगी, और कहने लगी––"तेरा जाना मेरा मरना है। यह न समझ, कि इस बुढ़ापे में तेरा अलग होना मेरे लिये सह्य होगा। यह मानो तेरे हाथ से मरना है।"

अदीना ने हजारों तरह से ढाढ़स बँधाते, समझाते हुए दादी से कहा––"बीबी जान, बिलकुल चिंता मत कर। यदि मैं इस इलाके से सही-सलामत चला गया, तो थोड़े ही समय में काफी धन-सम्पत्ति स्थायी बना कर तेरी सेवा में चला आऊँगा। उस समय गुल बीबी के साथ मेरा निकाह करके एक बच्चे की जगह दो बच्चे बना कर अपनी मनोकामना पूरी करना। अगर जिन्दगी है, तो दादी को दीदार मिलेगा। यदि अधीर होकर बिना सोचे-समझे रोना-धोना करेगी, तो मेरा भेद खुल जायगा, और जल्दी दुश्मन के हाथ में फिर पड़ जाऊँगा। ऐसी हालत में वह आततायी (अरबाब कमाल) दुनिया में मुझे जिन्दा न छोड़ेगा। भेड़ के नुकसान होने और हाकिम से छुट्टी पाने वाले कर्ज की बात तुझे भूली न होगी। उससे अच्छी तरह जाहिर है, कि इस जल्लाद के लिये मनुष्य का मारना भेड़ के मारने से भी आसान है। अगर मेरा भेद खुल गया, तो जालिम के हाथ से मेरी जान जायगी, और मेरी जुदाई सदा के लिये तुझे सहनी पड़ेगी। फिर तेरे दुख को कोई हटा न सकेगा।"

बेचारी बीबी आइशा अरबाब के काम और स्वभाव से अच्छी तरह वाकिफ थी। अपने तरुण नाती की अकलमंदी-भरी बातों को सुनकर, उसने अपने को सँभाला और समझाया, कि चंद रोज की जुदाई के जहर के बदले चिरकाल तक मिलन की शहद हाथ आयेगी, और यदि इस समय धीरज न धरा, तो रहस्य खुलने पर सदा की जुदाई भोगनी पड़ेगी। यह सोच कर, बेबस हो, भय के साथ उसने सब्र और धीरज से काम लेने का निश्चय किया।

नानी को धीरज धरा कर, अदीना ने एक फटा-पुराना चप्पल कहीं से पैदा किया, और एक खलीते में कुछ रूखा-सूखा रोटी-दाना सफर के लिये तैयार किया। जिस वक्त रात आई, और दुनिया में चारों ओर अँधेरा छा गया, उस समय पीठ पर, झोले को रख, हाथ में डंडा ले, उसने फरगाना का रास्ता लिया। दो दिन चलने के बाद वह एक पहाड़ के दर्रे में पहुँचा। बुखारा की यात्रा से भागे हुए मजूरों के पीछे हाकिम के चपरासी दौड़-धूप करके बड़ी मुश्किल से उन्हें घेर पाये थे। अदीना ने भी अपने को उसी गिरोह के भीतर डाल दिया।

हाकिम के चपरासी सूर्योदय के पहिले ही उठ बैठे। उन्होंने रास्ते के लिये लाई, रोटी और यखनी से अपने पेट को खूब भरा। इसके बाद उन्होंने भेड़ों के झुंड की तरह, मजदूरों की जमात को सामने करके, फरगाना की ओर हाँका। उन लोगों में अधिकतर बूढ़े, दुर्बल और भूखे थे। जो रास्ता चलने में असमर्थ होता, उसके सिर पर कोड़े तथा डंडे पड़ने के लिये तैयार थे। वस्तुत: यह मजदूरों की जमात भेड़ों के गल्ले-जैसी ही थी। यदि अंतर था, तो यही कि अगर भेड़ चल नहीं पाती, या बीमार हो जाती, तो उसे गधे की पीठ पर लाद देते, किन्तु इन मजदूरों में जो कोई बीमार होता या पिछड़ जाते, तो उसे आगे चलाने के लिये तब तक पीटते रहते, जब तक कि वह रास्ते में मर न जाता।

अंत में कितने ही लोगों के रास्ते में मर जाने या मरने से भी बढ़कर बीमार और कमजोरी में पड़ जाने के बाद, बाकी किसी तरह फरगाना पहुँचे। अदीना भी जो जवान और बलिष्ठ था, खलीते के सूखे टुकड़ों को खाते-पीते किसी तरह उस आफत की नदी के किनारे सही-सलामत पहुँच गया।

अदीना कुछ दिन इधर-उधर घूमता-फिरता रहा, क्योंकि वह दूसरे मजदूरों की तरह नाम लिखाया हुआ नहीं था। फरगाना में उसने देखा, कि उसके स्वदेशी कितने ही बोझा-ढुलाई करते थे। कोई-कोई चौकीदारी भी करते थे, और कितने ही दूसरा कोई काम कर रहे थे। उनसे अंदीजान के एक कपास की ओटनी मिल का पता लगा। उसने वहाँ जाकर नौकरी शुरू की। यह घटना सन् 1337 हिजरी (सन् 1914 ई०) की है।

बिछोह

अदीना ने अपनी नानी बीबी आइशा को धीरज और तसल्ली देकर यात्रा की थी। आपको यह विश्वास नहीं होना चाहिये, कि अदीना की दिलासा देने वाली बातों से बीबी आइशा को सचमुच तसल्ली हो गई। सो नहीं हो सकता था। 70 साला

बुढ़िया, जिसके हाथ की लाठी यही एकमात्र नाती था, कैसे धीरज धर सकती थी, जब कि वह उससे दूर हो गया था? न उसे वह सहारा दे सकता था, न उसकी बीमारी में सेवा-शुश्रूषा कर सकता था, न प्राणांत के समय सूखते तालु में दो बूँद पानी डाल सकता था, न सदा की निद्रा ले लम्बे सफर के लिये प्रमाण करते समय उसके कफन-दफन का इंतजाम कर सकता था। कौन जानता है, कि उसका वह इकलौता नाती परदेश में जाकर मर न जायगा? यदि वह जिन्दा भी रहे, तो भी शायद देश लौटने के लिये रास्ते का खर्च भी उसे न मिले। यदि सामान कुछ इकट्ठा भी कर सके, तो भी न मालूम कितने वर्ष बाद। बहुत संभव है, कि उस समय तक यह 70 साला बुढ़िया अपने पैरों को कब्र में रख चुके, और बड़ी गरीबी और तकलीफ भुगत कर प्राण दे दे।

इसी तरह के विचारों ने बीबी आइशा के धैर्य को बँधने नहीं दिया। अदीना के घर से रवाना होने के कुछ ही घंटों बाद बीबी आइशा ने विकल होकर, हाय-हाय करके रोने-चिल्लाने का ख्याल किया। लेकिन इससे अदीना का रहस्य खुल जायगा, और नाहक बेचारा एक बड़ी आफत में फँस जायगा, यह ख्याल करके, बुढ़िया ने अपने दिल के दर्द को भीतर ही रख कर, उसे ओंठों पर आने नहीं दिया। लेकिन ओंठ को बन्द कर नाती के बिछुड़ने की आग भीतर-ही-भीतर और प्रचंड हो गई। उसने अपनी दोनों आँखों से खून के आँसू बरसा कर, उस आग को ठंडा करना चाहा। लेकिन उससे कोई फायदा नहीं हुआ——

'खून के आँसू बुझा पाये न मेरे दिल की आग,
है ये' वह तन्दूर जो बाराँ में भी जलता रहा।'

बारे, बीबी आइशा ने एक सप्ताह तक मुँह से आवाज न निकाली। आग से छुए बालों की तरह वह अपने भीतर-ही-भीतर झुलसती-उलझती रही। आग की ज्वाला तो ऊपर नहीं उठने पाई, लेकिन भुस में पड़ी चिनगारी की तरह वह भीतर-ही-भीतर सुलगती रही——

'न इतनी ताब थी कि दिल को दे सके करार भी,
मगर मजाल क्या जो मुँह से उफ् भी कर सके जरा!'

अदीना के बीमार होने से एक सप्ताह बाद तक अरबाब कमाल को उसके मरने की खबर नहीं मिली। उसने हालचाल जानने के लिये अपने पुत्र इबाद से कहा——"जा अदीना के घर से खबर ले आ। यदि वह जिन्दा है, और उसको चलने-फिरने की ताकत है, तो कहना, कि आकर भेड़-बकरियाँ चराने ले जाय, नहीं तो जल्दी कोई उपाय करें, जिसमें कि भेड़ें बिना चरे दुबली न हो जायें। अभी भी उनका मांस और चरबी बहुत घट गई है।"

बाप की आज्ञा के अनुसार इबाद ने बीबी आइशा के घर जाकर, अदीना के बारे में पूछा। बीबी आइशा ने उसी तरह जवाब दिया, जैसा कि चलते वक्त अदीना ने

उसे सिखलाया था—"इधर पिछले दिनों उसकी हालत कुछ बेहतर हो गई थी, और वह बिस्तर से उठने लगा था। दो दिन हुए वह आपके घर गया, तबसे लौटा नहीं।"

यह कह कर, विकल-सी होकर, बीबी आइशा ने फिर कहा—"लेकिन तुम क्या अपने घर में नहीं थे, किसी और जगह से आ रहे हो, जो अदीना के बारे में मुझसे पूछ रहे हो?"

इबाद ने इस सवाल-जवाब से अचरज में पड़ कर, कहा—"नहीं, मैं अपने ही घर से इस वक्त बाप की आज्ञा के अनुसार अदीना का हाल-चाल पूछने के लिये आया हूँ। उस रोज, जब हम उसे यहाँ पर छोड़ गये थे, तब से वह हमारे घर नहीं गया। कहाँ गया वह? अचरज की बात है।"

बीबी आइशा ने अपने पार्ट को खूब अच्छी तरह अदा किया। नाती के जाने के दिन से लेकर आज तक रहस्य को छिपा रखा था, और सिखाई-पढ़ाई बात को भी बड़ी चतुराई के साथ उसने इबाद के सामने कहा। इस समय खुल कर रोने-धोने और दिल को दुख से खाली करने का कोई अर्थ नहीं था, लेकिन इबाद के आने के बहाने से उसने खूब रोना शुरू किया। बीबी आइशा ने इबाद के सामने ऐसा अभिनय किया, कि मानो वह अदीना को मालिक के घर गया समझती थी, और अभी जाना, कि अदीना वहाँ नहीं है। जैसे कि गुम हुए पुत्र की खबर पाने से मातायें अधीर हो जाती हैं, उसी तरह होकर, बीबी आइशा ने कहा—"मेरे सिर पर यह कैसी मुसीबत आ गई है? इन दो दिनों में मेरी आँखों की रोशनी के ऊपर क्या-क्या बीती है! अगर वह तुम्हारे घर नहीं गया, तो अवश्य उसे यहाँ लौट आना चाहिये था। कहीं किसी खड्ड में गिरकर उसको कुछ हो तो नहीं गया? या उसकी कमजोरी से फायदा उठाकर भेड़ियों ने उसे खा तो नहीं डाला? या भूत (देव) ने तो उस पर कोई आफत नहीं डाली, या कोई दुश्मन बदला लेने के लिये उसे पकड़ तो नहीं ले गया? हाय आफत! हाय अदीना, मेरी जान! हाय मेरी आँख और चिराग! हाय मेरे दिल की ताकत! हाय मेरी सुनसान रात के साथी! हाय मेरे बीमारी के दिनों के देखने-भालने वाले! हाय! हाय! हाय!"

हाँ, बीबी आइशा ने आज ही अपने बच्चे को खोया। वह ऐसी विह्वल हो उठी मानो उसे पाने की उम्मीद न रह गयी हो। यद्यपि पोते को गये एक सप्ताह हो गया था, तथापि जैसा कि पहले कहा गया है, उसे इस बिछोह को प्रकट करने का मौका नहीं मिला था। अब उसे अवसर मिला था। अब उसे अवसर मिला था, कि अपने बालों को नोचे और छाती को पीटे। इस प्रकार बीबी आइशा ने हाय-हाय करते, रोते-धोते निम्न गजल के अनुसार शोक प्रकट करना शुरू किया—

'जब, कि वह प्यारा आँखों का उजाला हाथ से चला गया,
दिल में धीरज, प्राणों के सुख शरीर की शक्ति चली गई।

वह फूल आँखों से दूर हो गया, रोने की ताकत नहीं रही,
चिल्लाने वाली बुलबुल हूँ, जिसे क्रंदन करने की शक्ति नहीं।
इस निष्ठुर दुनिया में मेरा बस वही एक सहारा था,
वह दिल का सहारा चला गया, मेरी दुनिया लुट गई।
वह गया और मेरे दिलो-जान का आनन्द हाथ से चला गया,
संक्षेप में मैं कहूँ कि मेरा प्राण निकल गया।'

इबाद इस रोने-धोने और स्यापे को घंटे भर तक देखता रहा। फिर लौट कर उसने अपने बाप से सब-कुछ कहा। अरबाब कमाल ने अपने 50 साल की जिन्दगी में अदीना जैसे कितने ही निरीह आदमियों को धोखा-फरेब देकर अपनी नौकरी में रखा था। उनमें से भी अधिकांश ने अंत में इसी तरह भाग कर अपनी जान बचाई थी। उसने जल्दी ही समझ लिया, कि अदीना भी भाग गया है, और फिर अपने बेटे इबाद से कहा—"अफसोस, हजार अफसोस कि मुफ्त में ही हाथ से शिकार निकल गया। अवश्य वह नमकहरराम इस इलाके से चला गया? तो भी उसकी नानी के पास चल कर पता लगाऊँ। शायद कोई बात मालूम हो। अगर अदीना को हाथ में न कर सकूँ, तो इस बूढ़ी को ही लाठी पकड़ घसीट लाऊँ।"

अरबाब अदीना के घर गया, तो बीबी आइशा ने फिर रोना-धोना शुरू किया। अरबाब को देख कर, वह अपनी आस्तीन से आँखों के आँसुओं को पोंछ, रोना बन्द कर बात करने के ख्याल से सलाम कर, अरबाब की ओर निगाह किये खड़ी हो गई। अरबाब ने सलाम का जवाब देने की जगह बहुत गुस्से में आकर, पूछा—"अदीना कहाँ है?"

बीबी आइशा ने बड़ी नरमी और मुलायमियत से, किन्तु बहुत अधीर और विकल होकर सारी गढ़ी हुई बात को दुहरा दिया। अरबाब ने कहा—"तेरी जैसी राक्षसी औरतों की बहानेबाजी को मैं अच्छी तरह जानता हूँ। अवश्य तू ने ही अदीना को बुरे रास्ते पर डाला है, और आज अपने को अनजान बना कर मुझसे बनावटी बातें कह रही है। जरूर अदीना तेरे बताये रास्ते और उपाय के अनुसार भागा है। ठीक बतला, वह कब गया, और उसका कहाँ जाने का इरादा था? जहाँ तक हो सकेगा, मैं उसे पकड़ूँगा। तभी तू मेरे पंजे से छूट सकेगी, नहीं तो अदीना की जगह तू मेरे हाथ में पकड़कर इस डंडे से (हाथ के डंडे की ओर इशारा कर) मारी जायेगी!"

बीबी आइशा ने देखा, कि इस क्रूर राक्षस के हाथ से छुट्टी नरम-नरम बातें करने से नहीं मिल सकती। इसलिये दुश्मन को हमला करने का अवसर न दे, चाहे जो हो, सोच कर, स्वयं हल्ला मचाना शुरू कर दिया—"ओ अरबाब, मुझे विश्वास है, कि तूने मेरे लड़के को मार कर कहीं पर दबा दिया है, और इस समय मेरे सामने झूठी बातें बना रहा है। तू मत समझ, कि मुझे हाकिम और काजी के घर का रास्ता

मालूम नहीं है। अभी हाकिम के घर जाती हूँ, और इन्साफ करने के लिये अर्जी देकर तहकीकची (जाँच करने वाले) और जसावल (दारोगा) को लाती हूँ। तू देखेगा, कि कैसा प्रलय तेरे सिर पर मचती है।" यह कह कर चिट्टी-चिट्टी हो गई अपनी चादर को सिर पर रख कर वह चल पड़ी।

अरबाब कमाल बीबी आइशा की इस गति-विधि को देखकर, चिन्ता में पड़ गया। वह अच्छी तरह जानता था, कि हाकिम और काजी को भले ही अदीना के मरने की परवाह न हो, लेकिन सच्चा या झूठा मामला उनके हाथ में आ जाये, तो यह उनके लिये पैसा कमाने का एक बहुत अच्छा बहाना है। 'यदि यह औरत जा कर हाकिम और काजी के पास नालिश करेगी, तो उसी वक्त उनके चपरासी और नौकर बिना पूछ-ताछ किये ही, अदीना को मेरे हाथ से मारा गया मानकर मुझसे एक बड़ी रकम लेना चाहेंगे। हाँ, यह जरूर है, कि यदि पीछे अदीना हाथ में आ गया, तो उसके बारे में पूछ-ताछ करके सदा के लिये उसे दास बना कर मेरे सिपुर्द कर देंगे।'

लेकिन अदीना उस जगह नहीं था, कि करातेगिन के हाकिमों का हाथ उसके पास तक पहुँचता।

अरबाब कमाल ने भीतर से घबरा कर भी, बाहर से अपने गर्व को जरा भी खर्च किये बिना डाँट कर कहा––

"जहाँ जाना हो जा। मुझे किसी का डर नहीं है।"

लेकिन यह सिर्फ ऊपर-ही-ऊपर था। भीतर से तो वह बहुत त्रस्त और भयभीत हो गया था। उसने टोले-मोहल्ले के दो एक श्वेतकेशों को इस बात की सूचना दे, बीबी आइशा को रोकने के लिये प्रार्थना की। गाँव के बड़े-बूढ़ों ने जाकर, बीबी आइशा को रोका। फिर अरबाब की ओर से उसे विश्वास दिलाया, कि वह उसके ऊपर कोई जोर-जुल्म नहीं करेगा। बीबी आइशा को तो पता था ही, कि अदीना को अरबाब ने मारा नहीं है। उसने बुड्ढों की प्रार्थना स्वीकार करके, कहा––"आप बुजुर्गों का ख्याल करके मैं हाकिमखाना नहीं जा रही हूँ। अपने गुम हुए युसुफ की स्मृति में घर में बैठे-बैठे आँसू बहाऊँगी।"

स्वाभाविक सुन्दरता

शायद आपने पर्वत-स्थली का दृश्य देखा हो। शायद आपमें से किसी ने जंगल के किनारे या पहाड़ी दर्रे को वर्षाकाल में देखा हो, जब कि पहाड़ों के किनारे की हरित वन-स्थली में वर्षा पहुँचती है, और वसन्त की सुन्दर हवा भी उसका साथ देती है। उस समय आपके दिमाग में एक कोमल सुगंध भर जाती है। यह वह खुशबू है, जिसे

जिसे अपनी शक्ति भर आप छोड़ना नहीं चाहेंगे, उस सुखद स्पर्श वाली कोमल हवा को हटाना नहीं चाहेंगे। जिस समय वह शीतल, मंद, सुगंध हवा चल रही है, क्षण-क्षण आपका प्राण ताजा होता जाता है, पल-पल आपका हृदय शुद्ध होता जाता है। आँखें खोल कर देखिये––एक ओर चश्मा, चमन है, स्वयं खिले लाल, सफेद या पीले रंग के लाला खड़े हैं, और दूसरी तरफ पहाड़ के स्वयंभू वृक्ष दयार, अरचा, इसगाई, चारमग्ज और पिस्ता के एक-दूसरे से उलझे हुए हैं अपनी शाखायें फैलाये। ऊपर की ओर नजर करने पर जहाँ तक दृष्टि जाती है, स्वच्छ रंग-विरंगे पाषाण और चट्टान के चारों तरफ नाना प्रकार के फूल-पत्तों वाले पौधों से घिरे शोभा दे रहे हैं। उनके बीच में नहरें या नाले वह रहे हैं, जिनका जल शीशा और स्फटिक की तरह साफ है, और सरदी में जमा रहता है, और गरमी में धार बाँध कर चलता दिखाई पड़ता है। यह नहरें छोटे-छोटे चश्मों से निकली हैं, जो गहरे दर्रों में तीन-चार कोस के बाद अपनी धार को बहुत तेज करके चलने लगती हैं। इस सारे दृश्य को देखकर आप समझेंगे, कि हम किसी दूसरी दुनिया की सैर कर रहे हैं। वहाँ जगह-जगह होते बुलबुलों तथा दूसरे सुन्दर पक्षियों के कलरव आपके मन पर प्रभाव डाल कर सारे सुन्दर नगर के संगीत को भुलवा देंगे।

इन सुन्दर चरागाहों में बकरियों और उनके बच्चों के केल-कूद, भेड़ों और मेमनों की दौड़-धूप, हरिनों और हरिन-शावकों की कुलाँचों और कलाबाजियों को देख कर आपको शहरों के आँगनों में तरुणी कन्याओं और दुल्हनों का नाच-रंग याद आयेगा। इस प्राकृतिक सौंदर्य के दृश्य को आपने बिना पैसे और बिना किसी के हाथ की तकलीफ के कितने मनोहर और चित्ताकर्षक रूप में देखा है। इनके मुकाबले में शहरों के बाग-बगीचों के सजाने-बनाने में कितना अधिक धन और कितनी-ज्यादा मेहनत करनी पड़ती है, लेकिन तो भी वे इस स्वाभाविक सौंदर्य का मुकाबला नहीं कर सकते।

मेरी कथा की नायिका गुल बीबी का स्मरण उस बचपन के समय में पहले आ चुका है। वह सभी सौंदर्य और खूबियों से भरी थी। किन्तु उसका सौंदर्य शहरी सौंदर्य से उसी तरह अलग था, जैसे कि स्वाभाविक पर्वत-स्थली का सौंदर्य आदमी के हाथों से बनाये बागों के सौंदर्य से है। गुल बीबी के कपड़े देबा के न थे, न उसकी पोशाक कतान की थी। न जबफ्त कुर्ता उसके तन पर था, न सिर पर मखमल बँधा हुआ था। हीरा-मोतियों की माला उसके गले में नहीं थी, न हाथों में शुद्ध सोने का कंगन और न अंगुली में पद्मराग की अँगूठी ही थी। ये सारे सौंदर्य को बढ़ाने वाले आभूषण और वस्तु गुल बीबी-जैसी एक अनाथ तथा पहाड़ की गरीब लड़की को देखने को भी कहाँ मिल सकते थे? लेकिन गुल बीबी की सुन्दरता और शोभा ऐसी थी, जो कि पहाड़ों में भी दुर्लभ थी। नगर की रमणियाँ सदा सुरमा, गाजा, श्वेत और रक्तचूर्ण से अपने को सँवारती रहती हैं, किन्तु यह अनिन्द्य सौंदर्य उनके पास कहाँ?

इस सारे सौंदर्य के होने के बाद भी गुल बीबी के मन में वे विचार न थे, जो कि नगर की लड़कियों में अपने सौंदर्य को दिखलाने और दुनिया को अपने हाथ में करने के लिये होता है। पहाड़ी तरुणियों का दिल और दृष्टि साफ होती है। वे बहुत सीधी-सादी होती हैं। उन्हें अपने बनाव-शृंगार का कोई ख्याल नहीं होता।

इस सारे भोलेपन और बेखबरी के होते भी, गुल बीबी का दिल हमेशा अदीना से बँधा रहता था। उसकी माँ और दादी ने कितनी ही बार कहा था, कि अदीना से उसकी शादी होगी; वही उसका जीवन-संगी बनेगा। इन बातों को सुन-सुन कर गुल बीबी ने भी अदीना को अपना जीवन-साथी मान लिया था। पहले यह ख्याल छोटे बच्चों-जैसा मालूम ही था, लेकिन धीरे-धीरे वह प्रेम और इश्क के रूप में बदल गया। जब अदीना 17-18 साल का था, तब गुल बीबी भी 15-16 साल की हो गई थी। इस समय सचमुच के दोनों एक दूसरे के प्रेमी बन चुके थे। लेकिन पूर्वी देशों की शील-शिक्षा इस बात की आज्ञा नहीं देती, कि वे अपने भीतरी भावों को एक-दूसरे के ऊपर इतनी जल्दी प्रकट करते। आशिकों को चोरी-छिपे नजर डाल भर लेना ही वहाँ विहित है। यह नजर ही दूती बन कर, एक-दूसरे के विचारों को उनके पास पहुँचाने का काम करती है। दिल की गरमी, रंग का उड़ना, अंग का कँपना, ठंडी साँस वक्त-बेवक्त खींचना, अपने भावों के प्रकट करने के उनके पास यही साधन थे। अब ख्याल कीजिये, कि इस तरह के प्रेमी-युगल जब वियोग में पड़ने हैं, और उन्हें नहीं मालूम होता, कि आगे कैसे दिनों का उन्हें सामना करना पड़ेगा, तो उनकी क्या हालत होगी।

अब अदीना मर्द हो गया था। उसकी उम्र भी गुल बीबी की अपेक्षा ज्यादा थी, उसका प्रेम भी आगे बढ़ा था; लेकिन उसे अपनी बुद्धि को अपने प्रेम के ऊपर रखना पड़ता था। अदीना के सामने दो कठिनाइयाँ थीं : एक देश में रह कर अरबाब कमाल के हाथों जान गँवाना, और दूसरी वहाँ से भाग जाना। दोनों ही तरफ से उसे अपनी प्रेमिका से अलग होना था। लेकिन पहली जुदाई अनन्तकाल की थी, जिसमें फिर मिलने की कोई आशा नहीं थी, और दूसरी जुदाई में पुनर्मिलन की आशा थी। इसी-लिये उसने भाग जाना ही पसन्द किया, जिसमें कि मौका पा, लौट कर फिर उसे देख सके। अदीना ने चन्द सालों की जुदाई भविष्य के मिलन की आशा से स्वीकार किया, यद्यपि वह उसके लिये असह्य थी।

लेकिन बेचारी गुल बीबी की हालत बिलकुल दूसरी ही थी। वह प्रेमी की पीर से इतनी बेचैन थी, कि बुद्धि उसे कोई सहारा नहीं दे सकती थी। दूसरे यह, कि उसका जीवन अदीना की अपेक्षा अधिक कठिन था। अदीना के लिये वह अपने प्राणों से भी प्यारी थी। वह उसका एकनिष्ठ पुजारी था। गुल बीबी के माता-पिता मर चुके थे। नानी कब्र में पैर लटकाये हुए थी। धोखेबाज दुश्मन चारों ओर बिना इच्छा के उसकी इज्जत लूटने के लिये तैयार थे। ऐसे समय अदीना का अलग होना उसके लिये एक

भयंकर बात थी। ऐसी स्थिति में एक जवान लड़की की जिन्दगी कितनी भयाकुल हो जाती है, इसे कहने की आवश्यकता नहीं। यह और भी मुश्किल बात थी, कि गुल बीबी का कोई ऐसा दोस्त नहीं था, जिसके सामने वह खुल कर अपने दिल के दर्द को रख सकती। उसके दिल में लज्जा इतनी थी, कि वह अपनी नानी के सामने हाय-हाय करके, रोकर दिल का दर्द हल्का भी न कर सकनी थी। हाँ, इससे दुस्सह कोई बात नहीं हो सकती, जबकि उसके दिल में अपने प्रेमी की जुदाई की आग जल रही हो और वह दिल खोल कर रो भी न सके। उसे इसके सिवा और कोई चारा नहीं था, कि एक कोने में जाकर, मुँह से आवाज निकाले बिना भीतर-ही-भीतर सिसकियाँ भरे।

गुल बीबी के लिये असह्य पीड़ा थी, उसमें केवल जुदाई का दर्द और विछोह का दाग ही नहीं था, बल्कि वह डरती थी, कि कहीं उसका अदीना परदेश से जल्दी न लौटे और बीच में नानी भी दुनिया को छोड़ सिधार न जायँ। फिर तो गाँव के जालिम, अत्याचारी, जिनका रंग-ढंग और चाल-व्यवहार गुल बीबी से छिपा नहीं था, मनमानी करने पर उतारू हो जायँगे, और जोर-जुल्म से किसी अपरिचित आदमी के पंजे में उसे फँसा कर कहेंगे, कि यही तेरा जीवन साथी है। इस प्रकार तो वह सर्वदा के लिये कैदखाने में बन्द कर दी जायगी। फिर बेचारी क्या कर सकेगी ? यह भी उतना असह्य न था। सबसे भयंकर बात यह थी, कि अदीना जब इस बात को सुनेगा, तो समझेगा कि 'गुल बीबी ने अपनी इच्छा से दूसरे को अपना दिल दे दिया। उसने मेरी मुहब्बत को पाँव-तले रौंद दिया।'

कभी-कभी उसके दिल में और दूसरी बातें भी उठती थीं। हो सकता है, कि अब जब कि अदीना तुर्किस्तान चला गया है, वहीं उसकी किसी से मुहब्बत हो जाय, और शायद धीरे-धीरे गुल बीबी उसके दिल से उतर जाय। यदि अदीना का दिल किसी दूसरे के प्रेम-पाश में बँध जायेगा और उसका हाथ जिसे गुल बीबी अपने कंठ की माला समझती है, किसी दूसरे के गले में पड़ जायेगा, तब फिर अगर उसके मन में गुल बीबी का ख्याल भी आयेगा, तो वह उसे घृणा की दृष्टि से ही देखेगा। यह पीड़ायें थीं, जिनको पत्थर का दिल भी बर्दास्त नहीं कर सकता। भला उसे गुल बीबी जैसी अनुभवहीन, सीधी-सादी ताजिक तरुणी कैसे सहन कर सकती थी—

'अपने सारे पत्थर के दिल और कड़ाई के होते भी पहाड़ इस ज्वाला को सहन करने की शक्ति नहीं रख सकता।

गम और रंज से चूर-चूर आशिक का दिल
किस प्रकार जुदाई में पड़ा धीरज धरे ?'

कपास का कारखाना

अदीजान से रेल की सड़क के पास लम्बे-चौड़े मैदान में एक बहुत ऊँची इमारत दिखाई पड़ती थी। इस इमारत की दीवारें कुछ ऊँची किन्तु अधिक आकर्षक न थीं, तो भी आकाश से बातें करने वाली उसकी चिमनी बराबर काले बादल की तरह अपने साँस को ऊपर की ओर फेंक रही थी, और मीलों दूर से देखने वाले के ध्यान को अपनी ओर खींचती थी। इस इमारत में दो दरवाजे थे, जिनमें से एक बहुत बड़ा था, और कपास से लदी गाड़ियों के आने के वक्त ही खुलता था, और दूसरा एक गज चौड़ा, दो गज ऊँचा, भीतर-बाहर आने-जाने वालों के लिये सदा खुला रहता था।

यदि आपको कारखाना देखने की इच्छा है, तो कृपा करके इसी छोटे दरवाजे से भीतर आइये। यहाँ दाहिनी ओर आप एक 40 गज ऊँची इमारत देखेंगे। यद्यपि यह इमारत बहुत से दरवाजों वाली है, तथापि आप सामने के दरवाजे से भीतर चलिये, जिससे कि कारखाने को एक सिरे से देख सकें। जिस वक्त आप इस इमारत के भीतर पहुँचेंगे, सामने तख्तों का बना एक जीना मिलेगा। कष्ट करके इसी जीने पर चढ़कर ऊपर चलिये। कोठे पर पहुँचने के बाद एक बड़ा दरवाजा दिखाई पड़ेगा। इसके साथ एक लम्बे-चौड़े तख्तों का भारी जीना लगा हुआ है, जो सीधे बाहर की ओर जमीन पर चला गया है। इस बड़े जीने पर थोड़ी देर खड़े होकर देखिये। वहाँ ताजिक, उज्बेक तथा दूसरी जातियों के मजदूर ढेर किये हुए कपास के बोझों को सिर पर उठाकर, इसी जीने से चढ़कर कोठे पर ला रहे हैं। कोठे के मजदूर इस कपास को नीचे की ओर जाते एक बड़े बक्स में डाल रहे हैं। मैं आपको सलाह दूँगा, कि इस दृश्य को सरसरी तौर से आँखों के सामने से गुजारिये। यहाँ आप देखेंगे, कि मानव-सन्तान किस तरह मनों भारी तथा 5 गज ऊँचे कपास के ढेर को सिर पर उठाकर इन बीस-पचीस सीढ़ियों को पार करते, मर-मर के ऊपर चढ़ा रहे हैं। ये लोग इस काम को केवल एक बार नहीं करते, बल्कि प्रति वर्ष सात-आठ महीना कपास की फसल के समय हर रोज 12 घंटा इसी तरह बोझों को उठाते-चढ़ाते रहते हैं।

कपास को बड़े बस्ते से निकालना भी आसान काम नहीं है। खाली करने वाले मजूर चाकू से बस्ते चीर कर, बड़ी आसानी से नीचे की ओर गिराते हैं। किन्तु फेंकती है। उसकी वजह से हवा निचले घर से धूल और गर्द फौवारे की तरह ऊपर की तरफ फेकती है बेचारे मजदूर 12 घंटे तक इस धूल को फाँकते रहते हैं। यदि आप सीढ़ी के सिर पर न हो, उनके पास होते, तो आपके ऊपर भी धूल-गर्द छा जाती, साँस के द्वारा आपके भीतर जाकर वह आपको बेहोश कर देती, और आप जमीन पर

गिर पड़ते। अब जरा ख्याल कीजिये, आप-जैसा ही मानव इस जगह एक-दो घंटा नहीं, 12 घंटा प्रति दिन खड़ा रहता है। अगर वह ऐसा न करे, तो उसके लिए भूखों मरने के सिवा कोई चारा नहीं। कोठे पर जो धूल-गर्द उड़ रही है, उसे देख कर यहाँ अधिक देर खड़ा रहना अच्छा नहीं है। कृपा करके इस दूसरे जीने से नीचे उतरिये, और यहाँ के दृश्य को देखिये।

इस घर में एक छोर से दूसरे छोर तक चर्खियाँ और धुनकियाँ लगी हैं। सामने एक बहुत बड़ा फौलाद का चक्का घूम रहा है। यह चक्का एक बड़े तस्मे द्वारा, जिसका सिरा दूसरी मशीन में लगा हुआ है, घुमाया जा रहा है। तस्मे (बेल्ट) का एक सिरा नीचे के घर में दूसरे चक्के की गर्दन में लिपटा है, जिससे लगा एक और तस्मा मशीन-घर की एक मशीन से फँसा है। वहीं से असली चालक-शक्ति आ रही है। इस घर में और भी कितने ही चक्के दिखलाई पड़ते हैं, लेकिन वे बड़े चक्के की अपेक्षा छोटे हैं। यह सभी तस्मों द्वारा उस बड़े चक्के के घूमने से चालित हो रहे हैं। छोटे चक्के दो पंक्तियों में स्थापित हैं। इनका काम है ओटने वाली मशीनों को गति देना, जो बिनौला अलग कर, रूई को साफ करती हैं। दाँत वाले घूमते दो बेलन अपने छोटे से छेद के भीतर से कपास को बाहर जाने देते हैं। इस घर के मजूरों का काम बिनौला अलग करना है। यहाँ से ओटी हुई कपास दूसरे रास्ते से गाँठ बाँधने वाले यंत्र के पास पहुँचती है। अलग किया हुआ बिनौला भी एक खास रास्ते से नीचे के तहखाने में गिरता है, जहाँ दूसरी ओटनियाँ फिर से बिनौले को अपने भीतर से पार करती हुई, चिपटी रह गई कपास को अलग करती हैं। यह दुबारा ओटी हुई कपास उतनी अच्छी नहीं समझी जाती।

ओटनीखाना तमाशा अभी पूरा नहीं हुआ है। इस घर के चक्कों और ओटनी-मशीनों की देख-भाल चतुर कारीगर करते हैं। वे ठीक से काम करने की विधि बतलाते हैं, अपनी जगह से हट गये तस्मों को उनकी जगह पर रखते हैं, और मशीनों में समय-समय पर तेल डालते रहते हैं। यह घर ऊपर वाले घर से भी ज्यादा गंदा और मैला है। यहाँ धूल भी है, साथ ही चक्का के भीतर के गन्दे तेल की बू भी आती है। इसके अतिरिक्त यहाँ की हड़हड़-फड़फड़ से आदमी के कान बहरे हो जाते हैं, और तबीयत परेशान हो जाती है। आइये, इस घर से जल्दी बाहर निकल चलें, नहीं तो शायद इस गर्द-गुबार, इस तेल की दुर्गन्ध और गड़गड़ाहट से सिर दर्द न करने लग जाय। आइये, इस सीढ़ी से कोठे पर चलें, जहाँ कि तैयार कपास लाया जा रहा है। यहाँ चारों ओर 6-6, 7-7 गज लम्बे यंत्र लगे हुए हैं, जिनके इतने ही बड़े छेदों में मजूर तैयार कपास को भरते हैं। जब वह छेद भर जाता है, तो उसके ऊपर खड़ी लकड़ी हिलाते हैं, जिसके साथ छेद को भर सकने वाला खंभा कपास को दबाता नीचे की ओर चलता है। रूई दब कर इतनी छोटी हो जाती है, कि जिससे छोटी हो नहीं सकती। अब उसे लोहे की पट्टियों से बाँधकर दबाने वाले खंभे को ऊपर खींच लेते हैं। बड़े मजबूत कारी-

गर इन कपास की गाँठों को ले जाते हैं। अब बाहर आइये, और चलिये मशीनखाना में चलें। यह कारखाने की इमारत से बाहर आ कर ओटनीखाने के सामने एक अलग घर है। इसमें छोटे-बड़े बहुत से चक्के चल रहे हैं। इन चक्कों को भाप की ताकत से चलाया जा रहा है। यह भाप चारों ओर से बन्द उन देगों के भीतर से आ रही है, जिसके नीचे आग धायँ-धायँ जल रही है। मशीनखाने के एक कोने में कुछ दूसरे चक्के दिखाई पड़ रहे हैं, जो कि भाप से चलकर बिजली पैदा कर रहे हैं। इस बिजली को तार द्वारा सभी घरों—मशीनखाना, गोदाम. आदि—तथा रास्तों में पहुँचाया गया है। रात के वक्त यह बिजली जल कर चारों ओर दिन-सा दृश्य उपस्थित करती है।

इस घर के एक कोने में एक लोहे का बहुत बड़ा मुँह-बन्द बर्तन है, जिसमें सैकड़ों घड़ा पानी रखा जा सकता है। इस बर्तन के मुँह पर एक पतली नली लगी हुई है, जिसका एक सिरा बिजली के खजाने के साथ मिला हुआ है। इस बर्तन में पानी गरम हो रहा है। इससे मजूरों को हाथ-मुँह धोने तथा पीने का पानी मिलता होगा, ऐसा न समझिये। यदि इस बर्तन को हटा दिया जाय, तो इसके नीचे बारीक लोहे के बहुत-से नलके दिखाई पड़ेंगे। इनका एक सिरा तहखाने की ओर जा रहा है, जहाँ से कि आप आये हैं, और उनका सम्बन्ध गाँठ बाँधने वाले खंभों से है।

अब आइये चले दफ्तरखाने में। मैदान में मशीनखाने और ओटनी-खाने की इमारत के तीन तरफ मकानों की पंक्तियाँ खड़ी हैं, जिनमें से कुछ कच्चे कपास रखने के लिये हैं, कुछ बिनौले जमा करने के गोदाम हैं, बड़े दरवाजे के पास एक बहुत ऊँचे मकान में कपास की गाँठें जमा की गई हैं। ओटनीखाने के सामने एक ओर कुछ यूरोपीय ढङ्ग के सुन्दर कमरे बने हुए हैं। इनमें से पहले तीन आफिस के कमरे हैं, जिनमें प्रबन्धक तथा क्लर्क बैठ कर अपना काम करते हैं। दूसरी तरफ पाँच कमरों की एक बहुत ही सुन्दर इमारत है, जिसमें कारखाने का मैनेजर अपने परिवार के साथ रहता है। इसके एक तरफ एक चहारदीवारी के घेरे के भीतर फूल-पत्ते और वृक्षों को खूब सजा कर लगाया गया है। ग्रीष्म के दिनों में जब गरमी से परेशानी होती है, तो कारखाने का मैनेजर अपने परिवार के साथ यहीं हवाखोरी करता है। ये सारे कमरे अच्छे-अच्छे सामान और फर्निचर से सुसज्जित हैं, और इनमें सुन्दर बिजली के दीपक लटक रहे हैं।

मैनेजर के इस महल का कारखाने के गर्द-गुबार से भरे मकान से क्या मुकाबला हो सकता है? एक जगह स्वर्ग है, तो दूसरी जगह नरक। कारखाने की चहारदीवारी के बाहर छोटी-छोटी कोठरियों की पाँतें खड़ी हैं। वहाँ प्रकाश का कोई प्रबन्ध नहीं, न हवा का रास्ता ही। नीचे से ऊपर तक दीवारें नमी से भरी हुई हैं। उन दीवारों में शायद कभी सफेदी नहीं की जाती, और न प्लास्तर ही दुरुस्त किया जाता है। ये बहुत गन्दी और मलीन कोठरियाँ हैं, जो देखने में ढोरों और भेड़ों के रखने के घर-सी छोटी, गन्दी तथा बदबूदार हैं। इन्हीं कोठरियों में कारखाने के मजदूर रहते हैं।

दीवार के बाहर रोज सूरज के उगते समय यदि आप देखें, तो वहाँ पाँतों में बहुत से लोग बैठे दिखाई पड़ेंगे। इनके चेहरे पीले हैं, आँखें भीतर घुसी हुई हैं, पुतलियाँ बतेज की हैं, हाथ घट्ठे पड़े तथा छालों और खून से भरे हैं, पैर घाव और घट्ठों से भरे हैं, तथा पोशाकें फटी हुई हैं। इनमें से कोई किस्मत का मारा लम्बा पड़ा, दर्द के मारे हाय-हाय कर रहा है। दूसरा अपने पैरों में लत्ता बाँधे, उसे खोलकर घाव के खून को ताजा कर रहा है। तीसरा फटे हुए कपड़ों को जमा करके, उन्हें जोड़कर अपने लिये पोशाक बनाने की कोशिश में है।

अगर आप 1915-16 ई० के काम के मौसम में इस कारखाने में आते, तो इन्हीं फटे-चिथड़े वाले मजूरों में एक 17-18 साल के जवान को देखते, जो अपने कपड़े को खोल, उसमें से चीलर निकाल रहा है। हमने ऊपर जो वर्णन किया, उससे आप को यह समझने में दिक्कत न होगी, कि यही है हमारे कथा का नायक अदीना, जो कि अपने घर द्वार से अलग हो, यहाँ जिन्दगी बिता रहा है। मानव पुत्र क्यों इतनी परेशानी में पड़े इस जगह बैठे हैं, इसका उत्तर आप स्वयं दे सकते हैं।

आपने मशीनखाने को अभी देखा, और ओटनीखाने और मालखाने को भी देख लिया। वहाँ आपने सैकड़ों मजूरों को काम करते देखा है। बिना आराम किये रात-दिन काम करना संभव नहीं है। खाने और सोने के लिये भी कम से एकाध घड़ी की छुट्टी आवश्यक होती है। इसीलिये हर 12 घंटे बाद मजूरों की बदली होती है। ये अभागे, जो दीवार के नीचे इस बुरी हालत में बैठे हुए हैं, कारखाने के भोंपू बजने की प्रतीक्षा में हैं। जैसे ही वह आवाज आयेगी, ये उठ कर अपने काम पर हाजिर होंगे।

कारखाने में अदीना

अदीना कारखाने के ऊपरी तल्ले पर काम करता था। उसके बारे में पूरी जानकारी के लिये थोड़ा विस्तार के साथ कहने की आवश्यकता है। अदीना के लिये जरूरी था, कि या तो हर रोज थैले में भरे कपास को उठाकर सीढ़ी पर से ऊपर पहुँचाये, या रात-दिन 12 घंटे तक उसी घर के भीतर खड़ा रहे, जहाँ आप 5 मिनट भी रहने की हिम्मत नहीं कर सकें। वहीं खड़ा-खड़ा वह थैलों को खाली करने के कार्य में लगा रहता। यह काम केवल अदीना ही नहीं करता था, बल्कि दूसरे 100 ताजिक, उजबेक मजदूर एक सरदार की मातहती में करते थे। सरदार फैक्टरी के इन बेकसों से जोर-जुल्म से काम लेता था। बेचारे जिन्दगी बिताने का और कोई रास्ता न देख अपने गाँव से भाग कर, या सूद में अपनी जमीन को बायों के हाथ गँवा कर रोजी की तलाश

में आये थे। काम का मिलना आसान न था, इसलिये मजूरी बहुत सस्ती थी। जब सरदार एक बार इन गरीबों को अपने चंगुल में फँसा लेता, तो फिर किसी की ताकत नहीं थी, कि उससे हाथ छुड़ा ले। वह हल के बैलों की तरह उन्हें जोतता था। सचमुच मजूर हल के बैल ही जैसे थे। सरदार के हाथ में हलवाहे की तरह ही डंडा रहता था, जिसे वह कभी इधर और कभी उधर चलाता रहता। अंतर इतना ही था, कि यदि बैल को चलने की ताकत न हो, तो उसका मालिक आराम करने के लिये उसे थोड़ी देर के लिये छोड़ देता है, लेकिन मजदूर को छुट्टी कहाँ ? सरदार हर वक्त उस से काम लेने के लिये तैयार रहता था। काम न कर सकने वाले को वह निकाल बाहर करता, और उसकी जगह पर काम की तलाश में फिरते सैकड़ों में से किसी को भरती कर लेता। फिर बेकार मजूर को भूख से मरने के सिवा और कोई चारा न रहता। अदीना भी बेकारी के डर के मारे सारी ताकत लगा कर अपना काम करता, बिना दम मारे बोझे को ऊपर उठाता, और उसे खाली करता। अदीना को बस एक यही इच्छा थी, कि चाहे कितना भी मुश्किल काम क्यों न करना पड़े, जो मजदूरी मिले, उसमें से बचा कर अपने वतन लौटने तथा अपनी प्यारी (गुलबीबी) को ब्याहने के लिये कुछ जमा कर सके।

अदीना की मजदूरी बहुत कम थी। यद्यपि सयाने लोगों से उसके काम में कोई अंतर नहीं था, तथापि मजूरी देने में उसे लड़कों में शुमार किया जाता था। प्रति-दिन उसे करीब 30 कोपक (पैसा) मिलता था। 6 कोपक में वह दो काली रोटियाँ लेकर, उनमें दिन और रात का भोजन करता। बाकी 24 कोपक वह हर रोज जमा करता जाता। इस तरह के खाने के ऊपर उतना भारी काम करना बहुत मुश्किल था। लेकिन बेचारा क्या करता ? अगर वह अपने भोजन में थोड़ा-सा मांस और घी शामिल कर लेता, तो रोज की मजदूरी उसी में चली जाती। अदीना की पोशाक भी कारखाने के दूसरे मजदूरों की तरह फटी और गंदी थी। उसने बोझेवाले थैला के टुकड़ों और दूसरे लत्तों को सीकर जामा बनाया था। रहने की कोठरी भी अत्यन्त गंदी थी। वह बहुत ही नीची, अँधेरी, पानी से भीगी-भीगी, और पायखाने से उसमें अंतर नहीं था। इसी छोटी-सी कोठरी में 15-20 आदमी सोना-बैठना करते थे। उनके पास हाथ-मुँह धोने के लिये साबुन नहीं था और हवा आने के लिये उस कोठरी में कोई खिड़की नहीं थी। इस तरह की जिन्दगी के साथ मेहनत और ताकत का काम शक्ति से बाहर था। अदीना के सौ फूलों में अभी एक फूल भी नहीं खिल पाया था, लेकिन वह ऐसी मेहनत में पड़ा हुआ था। अगर ऐसा ही जीवन रहा, तो हो सकता है, कि वह साल खतम होते-होते मर जाये। यह कोई अनहोनी बात नहीं थी। मजदूरों में से कितने ही टायफायड से मर गये, कितनों को पेट की बीमारी ने पकड़ लिया था। इस प्रकार वहाँ सैकड़ों ने बुरे तौर से जानें दी थीं। लेकिन इन सारी कठिनाइयों और निराशाओं में जिन्दगी बिताते उसे सिर्फ एक बात की इच्छा थी। उसकी क्या इच्छा थी, यह आपको मालूम

है--"काम करना और और कुछ पैसा बचाना, फिर अपने वतन लौटना, और अपनी प्रेमिका गुल बीबी से मिलना।" यह ठीक है, कि वियोग का दुख सभी दुखों से ऊपर है। वह एक बड़ी बला है, ऐसी बला है, जिसने बहुत से नौजवानों को कोमल शय्या से उठाकर मिट्टी में पटक दिया। लेकिन जिस वियोग के पीछे बहुत आशा होती है, वह आशिक को बहुत धैर्य और सभी तकलीफों तथा मेहनतों को बर्दाश्त करने की शक्ति देती है।

हलचल

उन्नीस सौ पन्द्रह में कपास की फसल खूब हुई थी। विश्वयुद्ध के कारण रूस के कपड़े के करखानों की माँग बहुत बढ़ी हुई थी। साधारण पहिनने के कपड़ों के अलावा युद्ध के काम के लिये भी उसका खर्च बहुत अधिक था। कपास का बाजार बहुत चढ़ा हुआ था। यद्यपि सरकार कीमत को रोकने की पूरी कोशिश करती थी तथापि बाजार में माल का दाम बढ़ता ही जा रहा था। साधारण बाजार के अलावा चोरबाजारी भी चल रही थी, जहाँ कीमत वैधानिक दाम से चौगुने पर पहुँच गई थी। यह हालत मास्को में थी। कपास के व्यापारियों और कारखाने वालों के लाभ का क्या कहना ? वह तीन-तीन गुना बढ़ा हुआ था। जितना ही लाभ बढ़ रहा था, उतना ही उनका लोभ और भूख भी बढ़ती जा रही थी। वे आदती शराबियों की तरह जितना ही पीते, उससे और अधिक शराब की माँग करते। क्षण-प्रति-क्षण लाभ का चक्कर उन्हें ऊपर की ओर बढ़ाये लिये जा रहा था। कपास के रोजगारियों के गुमाश्ते एक बाजार से दूसरे बाजार, एक गाँव से दूसरे गाँव और घर-घर दौड़ लगा रहे थे, और कच्ची कपास को जमा करने में लगे हुए थे। कारखानों में इतनी कपास जमा हो गयी थी, कि उसे ओट सकना संभव नहीं रह गया था। फैक्टरियों के गोदाम और घर कच्ची कपास से भरे हुए थे। अंत में उन्हें मजबूर हो कर, कच्ची कपास को मैदान में बाहर जमा करना पड़ा। जाड़े में बर्फ पड़ने के बाद यह कपास के ढेर बर्फ से ढँक गये, और वसंत में बरफ पिघलने से भागने लगे। इसी तरह वर्षा की नमी और गरमी की गरम हवा खाते, सन् 1916 शुरू हुआ। मौसम गरम होने से भीगे कपास में गरमी आई, और उसके भीतर की नमी भाप बन कर, ज्वालामुखी पहाड़ से निकले धुएँ की तरह आसमान पर छा गई।

काम के लिये अधिक मजदूरों की आवश्यकता थी। एक ओर कपास की मिलों के लिये मजूरों की आवश्यकता थी, दूसरी ओर वसंत-ऋतु आने के बाद जब कि खेत में किसानों का काम शुरू हुआ, मजूरों का मिलना मुश्किल हो गया था। किंतु कुर्बान अली सरदार को इस बात का हल करना आसान था। कुर्बान अली ने मालिकों की

ओर से इस काम को पूरा करने के लिये अपने नीचे के मजदूरों को पकड़ा। उसने उनसे कहा—"कारखाने को कायम रखना हमारे लाभ की बात है। अगर कारखाना खराब हो गया, तो हम लोग बेकार हो जायेंगे। मालिक के माल के खराब होने से कारखाने को नुकसान होगा। अगर तुम लोग थोड़ी मेहनत करके मामूली से ज्यादा काम करके कपास को जल्दी खतम नहीं करोगे, तो सब कपास खराब हो जायेगी। उस समय हम बेकार हो जायँगें, या मालिक हमें काम से हटा कर दूसरे मजूरों को भरती कर लेगा। इसलिये मेरी राय है, कि तुम लोग रोज जितने समय तक काम करते हो, उससे कुछ ज्यादा समय काम करके इस भीगी हुई कपास को अलग करो। खुदा चाहेगा, तो काम हो जाने के बाद मालिक की दौलत से तुम्हें खुश कर दिया जायगा।"

मजूरों ने मालिक की दौलत की उम्मीद पर सरदार की बात मंजूर कर ली। वे रोज के 12 घंटे के काम को खत्म करके, काली रोटी ठंडे पानी में भिगो पेट में डालते, और लोहे के पंजे को हाथ में ले भीगी कपास को अलग करने में लग जाते। यह काम काम के घंटों से ज्यादा ही नहीं था, बल्कि मुश्किल भी था। कपास भीग कर बैठ गयी थी, जिसको छुड़ाना और अलग करना बहुत कठिन काम था। वह नीचे से सड़ भी गयी थी, जिससे निकलती बदबू मजूरों के दिमाग को असह्य थी। 15 मिनट काम करने के बाद ही वे गिरने लगते। जो गिर जाते, उन्हें कुर्बान अली अपने डंडे से उठा कर, फिर काम में लगाता। इस काम से मजूरों की सेहत पर इतना असर पड़ा, कि कई बीमार होकर मर गये। काम वे जी-जान से करते थे, लेकिन इस अधिक काम के लिये उन्हें एक पैसा भी अधिक नहीं दिया जा रहा था। मालिक की दौलत बढ़ती जा रही थी, लेकिन उससे मजूरों को खुश करने का ख्याल खुदा को कभी नहीं आया। कुर्बान अली को मजूर अपना खुदा समझते थे, लेकिन उसने गोदाम खाली हो जाने के बाद कुछ नहीं दिलवाया। काम करते-करते मजूरों के शरीर में बस हड्डी-हड्डी ही रह गयी। उन्होंने आपस में सलाह की, और अधिक काम के लिये मजूरी बढ़ाने के वास्ते मालिक से कहने का निश्चय किया। यदि ऐसा नहीं किया जाता, तो उनसे अधिक काम न लिया जाय। अगर मालिक ने इन दोनों बातों में से किसी को नहीं माना, तो वे काम को एक साथ छोड़ देंगे।

मजूरों की यह सलाह अभी कार्य-रूप में परिणत होने नहीं पायी थी, कि इसकी खबर कुर्बान अली द्वारा मालिक के पास पहुँच गई। मालिक ने इस बात की खबर स्थानीय हाकिमों के पास पहुँचायी, और पुलिस मँगवा ली। कारखाने के बाहर पिस्तौल, भालों आदि से लैस एक टुकड़ी रूसी कसाकों की भी आ कर तैनात हो गयी। रूसी अफसर ने मजूरों से कहा—"यह महायुद्ध का समय है। देश में सैनिक शासन चल रहा है। हर एक कारखाने के मजूर फौजी ढंग से सैनिकों की पाँती में खड़े हो, बिना नानुनच किये काम करने के लिये मजबूर हैं। जो कोई काम करने से इन्कार करेगा, उसे भागा हुआ सैनिक मान कर कड़ी सजा दी जायगी, जो कि गोली से मार देना है, और यह

सबको मालूम है। अगर तुम लोगों ने बिना हुज्जत किये काम करना शुरू न किया, तो तुम्हें जेलखाने भेज दिया जायेगा, जहाँ तुम्हें वही सजा मिलेगी।"

एशियाई मजूरों का रूसी मजूरों की तरह किसी प्रकार का संगठन नहीं था। इस कारखाने में काम करने वाले रूसी मजदूरों के साथ उनका कोई संबंध नहीं था। इसलिये अफसर के डराने-मात्र से वे फिर काम करने लगे। अदीना कपास की बदबू में काम करने के कारण बीमार हो गया था, इसलिये वह काम नहीं कर सका। वह अपने एक स्वदेशी भाई की देख-रेख में मजूरों की एक कोठरी में लेटा था।

मजूरों की स्वास्थ्य-रक्षा के लिये कारखाने के मालिक एक पैसा भी खर्च नहीं करते थे, लेकिन मुल्लों और पादरियों द्वारा उनको समझा-बुझा कर काम में लगाये रखने के लिये पैसा खर्च करने में जरा भी कमी नहीं करते थे। मजूरों में ताजिक, उजबेक, ईरानी, अरमनी, रूसी, बरबरी आदि सभी जाति और धर्म के लोग थे। मुल्ला और पादरी धर्म के नाम पर उन्हें समझा-बुझा कर आपस में मेल नहीं होने देते थे। सभी अपने-अपने धर्म की प्रशंसा करते हुए उनको बहकाते थे—"तुम लोग दूसरे धर्म और जाति वालों से बच कर रहना। भूल न करना, नहीं तो वे तुम्हें अपने धर्म में खींच ले जायँगे। अपने धर्म के लिये दान दो, और भगवान् की भक्ति करो। अपने पुरोहितों और इमामों की इज्जत करो, उनकी बात मानकर चलो। धर्मात्मा लोगों के भोग और आनंद को देख कर ईर्ष्या न करो, न उसके लिये अफसोस करो, क्योंकि दुनिया चंदरोजा है। दुनिया की दौलत दुनिया ही में रह जायेगी। तुम्हें सदा रहने वाली अंतिम दौलत की आशा रखनी चाहिये। जिस कारखाने में काम करते हो, जिस जगह रोटी खाते हो, वहाँ के नमक का हक अदा करना चाहिये। नमक का हक खुदा के हक के बराबर है। अपने मालिक के लाभ में हानि नहीं पहुँचानी चाहिये। मालिक जो काम करने की आज्ञा दे, उसे दिलोजान से पूरा करना चाहिये। सेवक रहो, सच्चे सेवक बन कर रहो। याद रखो, गरीबी बुरी चीज नहीं है। हाँ, कुफ्र की नीयत और नमकहरामी बहुत बड़ा पाप है। अपने समय के बादशाह और उसके हाकिमों की आज्ञा मानना धर्म है। जानना चाहिए, कि बादशाह खुदा की छाया है, और दुनिया की नियामतों का मालिक है......"

बेचारे मजदूर मुल्लों और पादरियों के भुलावे में पड़ कर एक दूसरे को दुश्मन समझते थे, और आपस में मेल नहीं करते थे। वे अपने धर्म और जाति से बाहर की हर बात को संदेह और बुरी निगाह से देखते थे। वे सोचते थे, कि दूसरे अपने जाल में फँस कर हमें हमारे मजहब से हटा के अपने पंथ में ले जाना चाहते हैं। 45 तंका मजूरीजो

उन्हें हर महीने मिलती थी, जिसके लिये उन्हें ऐड़ी का पसीना चोटी तक पहुँचाना पड़ता था, उसमें से भी एक भाग अलग करके कुरान-पाठ, धार्मिक दान, या पाप से मुक्ति पाने के लिये पादरियों और मुल्लों को देते थे।

लेकिन आखिरी दिनों में हालत बदल गई। फर्गाने के यूरोपियन मजूर अपना गुप्त संगठन करते थे। उनका क्रांतिकारियों के साथ संबंध था। उन्होंने आन्दोलन पहिले आरंभ किया। उनके नेताओं ने नारा लगाया—"सारी दुनिया के मजूरों एक हो जाओ!" यूरोपियन मजदूर सभी मजदूरों को भाई-भाई कहने की आवाज निकालने लगे, और मालिक के जोर-जुल्म और सरदार की गाली-गलौज तथा मार-पीट, और पुलिस तथा सरकारी हाकिमों का इन जालिमों के पक्षपात की बात करने लगे। अब वे यह सब चुपचाप सहने के लिये तैयार नहीं थे। उन्होंने इसके खिलाफ कहना शुरू किया—"कारखाने के मालिक की यह सारी धन-दौलत हमारे हाथ की मजूरी का फल है। पूंजी और नकद धन को, जिसके बल से मालिक हमें अपना गुलाम और दास बनाये हुये है, अगर-अलग रख दिया जाय, तो 100 तंका से एक तंका भी नहीं बढ़ सकता। मालिक अपने दलालों और गुमाश्तों के द्वारा हमारी तरह के गरीब और सताये हुए किसानों के पास से कपास और रूई अपने मनमानी दर से खरीदता है। उसे कारखाने लाकर हमारे हाथों की मेहनत से एक का दस बनाता है। अपने भूखे बीबी-बच्चों को जिलाने के लिये हम मजबूर हैं इसकी गुलामी करने को। इन कपास की गाँठों को मालिक रेल से मास्को भेजते हैं। रेल भी हमारे-जैसे अभागे मजूरों के हाथ से बनी और चलाई जाती है। मालिक इस तरह खूब नफा कमा कर बड़े धनी बन जाते हैं। उनके बड़े-बड़े, आलीशान महल और सुंदर बाग हमारी मजदूरी पर ही खड़े हैं। गुलाबी गालों वाली सुन्दरियाँ, अँगूरी शराब और इनके आनन्द-मौज, सब हमारे ऊपर चल रहा है।

"आप सोचिये, कारखाने का मालिक सिवाय 40-50 हजार तंका पूँजी लगाने के और क्या करता है? यह पूँजी भी उसने अपनी मेहनत-मशक्कत से जमा नहीं की, बल्कि हम-तुम-जैसे मजदूरों और किसानों की मेहनत को लूट कर इकट्ठा की, और इसके लिये उसे आनंद भोगने की छुट्टी है। नहीं, कारखाने के मालिक को इस आनंद का हक नहीं है। हम लोगों को इतनी तकलीफ में डाल उस तरह की मौज कभी उचित नहीं समझी जा सकती। ये कारखाने वाले बैठे-बैठे मौज करते हैं, और हम रात-दिन करते-करते मरते हैं। उनकी तोंद फूलती जाती है, और हम सदा भूखे रहते हैं, वे शराब पीते हैं, और हम अपने कलेजे का खून। वे अपनी प्रेमिका के लाल ओंठों को चूमते हैं और हम काली जमीन में नाक रगड़ते हैं। उनकी बीबी और लड़कियाँ बागों की सैर करती हैं, तरह-तरह के सुन्दर कपड़ों को पहिनती हैं, हजारों तरह के ऐश में जीवन बिताती हैं; और हमारी औरतें और बच्चियाँ जी तोड़कर मेहनत करती हैं, तब भी निश्चित हो दो रोटी नहीं पातीं। उनके लड़के सुन्दर कपड़े पहनते, स्वादिष्ट भोजन करते, स्कूलों में

विद्या पढ़ते हैं; और हमारे बच्चे बिना पढ़े मूर्ख रहते हैं। बचपन ही से कड़ी मेहनत में लग कर अपना स्वास्थ्य बिगाड़ लेते हैं, और उनमें से अधिकांश जवान होने से पहिले ही मर जाते हैं।

इस तरह का जीवन, इस तरह का गुजर-बसर, जिन्दगी बिताने का यह ढंग, इस तरह की मेहनत कभी उचित नहीं है। इसे कभी ऐसा रहना नहीं चाहिये। हम लोगों को उचित है, कि जाति और धर्म की बात अलग रख, उसे बीच में न आने दें, सब एक हो जायँ। चाहे रूसी हों, या मुसलमान, अरमनी हों या ताजिक, उजबेक हों या बरबरी, हमें सब भेद-भाव भूल कर एक-दूसरे को भाई-भाई समझना चाहिये, सबके लाभ को अपना लाभ मानना चाहिये। अपने जीवन को सुधारने, इन जालिमों से बदला लेने और अपने छिने हुए अधिकारों को अपने हाथ में लौटाने की कोशिश करनी चाहिये। यदि हम सब मिलकर एक हो जायें, तो अपने हक को जरूर ले लेंगे। हाँ, एक होकर हम दुनिया ले सकते हैं, अपने निजी हक की तो बात ही क्या?

जो व्यक्ति या जमात हमारे एक होने में रुकावट डालती है, और हमारे अधिकार पाने में बाधा डालती है, उसे हमें अपने प्राण और जीवन का दुश्मन समझना चाहिये। जो लोग अपने को खुदा का नायब और पैगम्बर का उत्तराधिकारी कह कर, हमसे दान-दक्षिणा लेते हैं, और हमें मदद देने के बदले हमारे बीच में फूट डालते हैं, और इस प्रकार हमारी शक्ति को कमजोर करते हैं, और इस तरह अपना हक लेने में हमारे रास्ते में बाधक होते हैं, ऐसे मुल्ला और पादरी हमें नहीं चाहिये। वे सहायता करने की जगह हमें समझाते हैं, कि दुश्मन की ताबेदारी करो, बादशाह की फरमाँ-बरदारी करो। हमारे लिये वे बस यही उचित समझते हैं। वस्तुतः न वे खुदा के नायब हैं, न पैगम्बर के वारिस। वे दान-दक्षिणा के बंदे, मालिक के गुलाम और बादशाह के फरमाँ-बरदार हैं। अपने आराम के लिये वे अपनी आत्मा को बेचे हुए हैं। खुदा के नायब और पैगम्बर के वारिस हो, वे क्यों दान-दक्षिणा चाहते हैं? वे क्यों पैसे वालों और सूदखोरों के फरमाँ-बरदार हैं? नहीं-नहीं वे मुफ्तखोर, नंगे और बेइज्जत हैं। वे उन कौवों और सियारों जैसे हैं, जिनकी भुजाओं में खुद शिकार करने की ताकत नहीं है। वे बड़े दरिन्दों के आगे-पीछे दौड़ते फिरते हैं, कि जब वह शिकार को मारकर खा चुकें, तो बची लाश को नोच-नाच कर अपना पेट भरें। इसीलिये वे हमें एक नहीं होने देते। इसीलिये वे कहते हैं, कि हम मालिक के नमक का हक अदा करें। इसीलिये वे समझाते हैं, कि हम बादशाह की फरमाँबरदारी करें। कभी किसी ने नहीं देखा; कि इन्होंने बायों (सेठों) और पैसे वालों के नौकरों के साथ मेहरबानी बरतने, उन पर जुल्म न करने की शिक्षा दी हो, और न बादशाह को कभी इन्होंने यह समझाने की तकलीफ की, कि अत्याचार-पीड़ितों की हिमायत करें। हमें इन लोगों की बातों पर कान नहीं देना चाहिये और न इनके बहकावे में पड़कर अपनी एकता को मजबूत करने से बाज आना चाहिये। अगर हमारे काम में ये ज्यादा रुकावट डालें, तो इन्हें निकाल बाहर कर देना चाहिये।

पूँजीपतियों और कारखानेदारों की मदद करने वाली एक और भी जमात है। वह है बादशाह (जार) की हुकूमत और उसकी पुलिस। यद्यपि उनकी खुराक-पोशाक सब-कुछ हम-जैसे मेहनतकश मजदूरों और किसानों की बदौलत ही है, यद्यपि ये सरकारी सिपाही हमारी तरह भूखे-नंगे किसानों और मजदूरों के लड़के हैं, तथापि वे हमारी मदद करने के बजाय हमारे दुश्मनों का साथ देते हैं। इससे मालूम होता है, कि जार की सरकार रोटी हमारी खाती है, और साथ ही हमारे खून से अपने तलवार की धार तेज करती है। यह साफ है, कि जार की सरकार पूँजीपतियों और कारखानेदारों के गुमाश्तों और बड़े जमींदारों के साथ है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं, कि यह बादशाही हुकूमत चोरों और डाकुओं की सरदारी है। हमारे लिये उचित है, कि जितनी जल्दी हो सके, उतनी जल्दी इस हुकूमत को अपने भीतर से निकाल फेंकें, और शासन चलाने का भार ऐसे आदमियों के हाथ में दें, जो कि हमारे हों। चूँकि देश में सबसे बड़ी संख्या हम किसानों और मजदूरों की है, अगर हम संघबद्ध हो जायँ, तो बादशाही सरकार को भगा सकते हैं। बादशाहों के हाथ में जो सब से बड़ी ताकत है, वह है फौजी ताकत। यदि अच्छी तरह से देखें, तो मालूम होगा, कि वे भी गरीब किसानों और मजदूरों के पुत्र होने से हमारे ही वर्ग के हैं। किस कारखाने के मालिक का लड़का कंधे पर बन्दूक रख कर सीमा की रक्षा के लिये गया ? किस पूँजीपति के दामाद ने काली रोटी पर सब्र करके जाड़े-गरमी में पहाड़ और रेगिस्तान की खाक छानी ? असल बात यह है, कि बादशाही हुकूमत ने सैनिकों को अपने जाल में फँसाया है, मुल्लों तथा पादरियों ने नसीहत और उपदेश, कसम और तोबा दिलाकर, उन्हें हुकूमत का बन्दा बना दिया है। अगर हम असली बात उनको समझा सकें, तो जो तोप और बंदूक उनके हाथ में हमें गुलाम बनाने के लिये है, वह हमारी तरफ से दुश्मन पर गोलाबारी करने लगें।"

यद्यपि इस तरह की बातें यूरोपीय मजदूरों के भीतर ही पहिले शुरू हुईं, तथापि धीरे-धीरे उन्होंने मुसलमान (एशियाई) मजदूरों को भी अपने भीतर शामिल किया। बहुत सावधानी के साथ, बहुत छिप-छिप कर उन्हें क्रांति का पाठ पढ़ाया गया। कारखाने के जिन मजदूरों को इन बातों के सुनने का मौका मिला, उनमें से सबसे अधिक ध्यान देने वाला अदीना था। अदीना अपने अनुभव से उन बातों की सच्चाई को समझता था। अमीर बुखारा की सरकार के नीचे अरबाब कमाल की गुलामी करते हुए उसने कैसी-कैसी तकलीफें सही थीं। इस गुलामी में फाँसे रखने के लिये गाँव के बड़े-बूढ़ों, विशेषकर मुल्ला खाकराह ने कितनी कोशिश की थी, यह भी उससे छिपा न था। सबसे अधिक खुशी अदीना को इस बात के लिये थी, कि अब वह पहिले की तरह अकेला नहीं था। इस वक्त अपने दुखों को कहने और अपनी तकलीफों को दूर करने के बारे में कोशिश करने वाले उसके बहुत से हमदर्द थे। इस वक्त वह नहीं कह सकता था, कि 'दर्द तो है, मगर हमदर्द नहीं !' केवल गुल बीबी के लिये उसका दुख—बुलबुल का फूल के लिये दर्द—दूर देश में रहते अदीना को कभी चैन नहीं लेने देता था। यह दुख की बात थी,

कि इस दर्द को सुनने वाला वहाँ कोई हमदर्द नहीं था। कारखाने के भीतर राजनीतिक और आर्थिक दर्द के हमदर्द अवश्य थे। अदीना बेचारा इस बात के लिये मजबूर था, कि अपने इस दर्द को अकेले ही सहे, इस कड़वे घूँट को अकेले ही पिये, और इस गम को अकेले ही उठाये। हाँ, इश्क का दर्द ऐसा लाइलाज दर्द है, कि समूह में जीवन बिताते हुए भी, उसे एकान्त में ही आह भरते हुए सहना पड़ता है।

फरवरी-मार्च १९१७

उन्नीस सौ सत्रह की फरवरी की आरम्भ से ही जार की हुकूमत की जड़ उखड़ने लगी। दरबारियों की बेईमानी, व्यापारियों की लूट, विशेषकर हथियार के कारखाने वालों तथा युद्ध-मंत्रालय की बेईमानियों और धोखे-धड़ियों के बारे में अब छिपकर नहीं, बल्कि खुल्लमखुल्ला लोग नुक्ताचीनी करने लगे। जारीना के गुरु रसपुतिन के काले कारनामों की तरह-तरह की कहानियाँ मजदूरों और किसानों तक में सुनी जाती थीं। बादशाही रोब उठ चला था। देश में रोटी नहीं थी, कपड़ा नहीं था, दवा-दारू नहीं थी, युद्ध-क्षेत्र में गोली-बारूद था, बन्दूक नहीं थी, तोप नहीं थी। चाहे युद्ध-क्षेत्र हो, या युद्ध के पीछे की भूमि, सर्वत्र सिर्फ एक चीज मौजूद थी—मौत, मौत और मौत। लोग भूख से मर रहे थे, नंगे रह कर मर रहे थे, बीमारी में देख-भाल न होने से मर रहे थे। कारखानों और मिलों में मौत, रास्तों-पहाड़ों, जंगलों-बयाबानों में मौत। युद्ध-क्षेत्रों में बिना गोला-बारूद, बिना तोप-बन्दूक निहत्थों की मौत जर्मन गोलों से हो रही थी। हर जगह, हर तरफ बस मौत-ही-मौत थी। देश की यह साधारण हालत उस कपास के कारखाने में भी थी, जिसके बारे में हम यहाँ कह रहे थे। वहाँ भी मजूर भूख से मर रहे थे, पेट की बीमारी से मर रहे थे, टायफायड से मर रहे थे, मलेरिया से मर रहे थे।

4 मार्च, 1917 (पुराने पंचांग के अनुसार) की तारीख थी। कारखाने के बड़े चक्कों के तस्मे टूटे हुए थे। उनकी गर्दन घिस गई थी। चर्खियों के दाँत बेकार हो गये थे। सारा कारखाना ही मानो जारशाही सरकार के विभागों की तरह बेकार हो गया था। सबसे बड़े चक्के पर जरा नजर डालिये। एक मिस्त्री उसी चक्के की गर्दन में तेल डाल रहा था, दूसरा तस्मे को बाँध-बूध कर लगाने की कोशिश कर रहा था। दिन में दो-दो बारी काम करने की जगह, अब एक बार भी पूरा काम नहीं हो रहा था। एक मजूर ओटनी के भीतर पड़े बिनौले को निकालकर साफ कर रहा था। मशीन चलाने पर जोर की आवाज के साथ एक बार चक्का चला, और मरम्मत करने वाला मिस्त्री धक्का खा कर दूर जा गिरा। बड़े चक्के पर तैनात आदमी ने चाहा, कि उस घायल आदमी की जाकर मदद करे। लेकिन उसके कपड़े फट कर लत्ते-लत्ते हो गये थे। लत्ते का छोर चक्के

के दाँत में फँस गया, और वह स्वयं अपने कपड़े-सहित चक्के के भीतर खिंच गया। चक्के की गति हद से ज्यादा तेज थी। उसने पुराने तस्मे को तोड़ दिया। तस्मे का छोर जोर से उड़कर तेल डालने वाले मिस्त्री की कमर में जा कर लगा। वह भी चक्के की लपेट में आ गया। यह सारी बातें कुछ मिनटों के भीतर इतनी जल्दी-जल्दी हुई, कि खतरे की घंटी की आवाज घायल मिस्त्री की चिल्लाहट के साथ मिलकर कारखाने के बाहर मैदान में पहुँची। मजूरों के लिये बड़ी मुसीबत थी। ओटनी वाले का हाथ ओटनी में कट चुका था, और वह पास पड़ा मौत के क्षण गिन रहा था। तेल डालने वाला मिस्त्री उसकी क्या मदद करता, जब कि वह स्वयं टुकड़े-टुकड़े हो, इस दुनिया से चल बसा था? मजूरों में हलचल थी। मैदान में सभा शुरू हुई। एक-के-बाद-एक मजूर वहाँ पहुँच कर बातें करने लगे। कारखानेदार ने सरकार के पास शिकायत भेजी थी, कि मजूर आज की दुर्घटना की जिम्मेदारी कारखाने के संचालकों और मालिक के सिर पर रख रहे हैं। इसके बारे में एक मिस्त्री ने कहा--"एक महीना हुआ, मैंने संचालक और मालिक को खबर दी थी, कि चक्के घिस गये हैं, उनकी गर्दन टेढ़ी हो गयी है, और तस्मे भी बहुत पुराने हो गये हैं। ऐसी हालत में कारखाने का चलाना खतरे की बात है। या तो काम को रोक दें, या नये सामान मँगायें। लेकिन उन्होंने कहा, 'एक-एक चीज का दाम आज-कल कई-कई मोहरें हैं। तेरा काम यही है, कि जहाँ तक हो सके, इन्हीं कल-पुर्जों से काम चालू रख। खतरा-अतरा कुछ नहीं है। अगर एकाध दुर्घटना हो भी गयी, तो उससे तुझे क्या'?"

इससे पहिले मजूरों ने मामूली बातों के लिये अपने सिर के ऊपर पुलिस के डंडे और कजाकों के कोड़े खाये थे, लेकिन, आज वे हर बात के लिये तैयार थे। उनमें से जिनके पास तमंचा या दूसरा कोई बारूदी हथियार छिपाकर रखा हुआ था, उसे उन्होंने आज खुल्लम-खुल्ला अपने हाथ में ले रखा था; और जिसके पास बारूदी हथियार नहीं थे, वे डंडों, लोहे के छड़ों या दूसरी किसी लोहे की चीज से लैस थे। आज भय था, कि बड़े फाटक के बाहर खड़े कजाक आक्रमण करेंगे। मजूरों ने कारखाने का फाटक बन्द कर लिया था, और वहाँ पर पहरेदार मुकर्रर कर दिये थे, जो आने-जाने वालों की तलाशी लेते थे।

कारखाना आज युद्ध-क्षेत्र बना हुआ था। बराबर मीटिंग हो रही थी। लेकिन न पुलिस का कहीं पता था, और न कजाकों का। उनकी जगह स्थानीय सरकारी अफसर मामूली पोशाक में कारखाने के अमलों के साथ सिर झुकाये मजदूरों के सामने आये। "दूर हो, बरबाद हो, भाग जाओ"--जैसे मजूरों के शब्दों की उन्होंने कुछ भी परवाह न कर, बात करनी शुरू की। उनके कहने के मुताबिक अब तक मजूरों के ऊपर जो कुछ बीती थी, मानो वह सब जार के निजी हुक्म और राय से हुई थी। अब जार निकाल दिया गया, इसलिये कारखाना कारीगरों के लिये अब स्वर्ग हो गया था। यह खुशखबरी सुना कर वे समझते थे, कि मजदूर इसे अपना सौभाग्य समझेंगे, और सच्चे दिल से धन्यवाद देंगे।

वस्तुतः जार के निकाले जाने की खबर अपना प्रभाव डाले बिना नहीं रही। वह घृणा और गुस्से की मीटिंग अब आनन्द और महोत्सव मनाने की मजलिस में बदल गई।...

आज जो घटना कारखाने में घटी थी, वह उस बड़ी घटना की प्रतिध्वनि-मात्र थी, जो तीन-चार दिन पहिले (27–28 फरवरी, पुराने पंचांग से) पेत्रोग्राद (लेनिनग्राद) में घटित हुई थी। उस दिन पेत्रोग्राद के साधारण मेहनतकश "रोटी, रोटी" कहते सड़कों पर निकले थे। जार की सरकारी सेना भी सहानुभूति दिखलाते मजूरों के साथ हो गयी, और जार की सरकार के विरुद्ध खड़ी होने में भी उसने आना-कानी नहीं की।

दूमा (पार्लमेंट) की सरकार ने हर तरह से शासन को अपने हाथ में लेना चाहा। उसने जार को गद्दी से उतारने की घोषणा कर दी, और स्वयं अपना अस्थायी मंत्रिमंडल कायम किया। दूमा की सरकार में करेन्स्की-जैसे समाजवादी जनतांत्रिक, मेलिकोफ-जैसे कादेत दली और काले दिल वाले गुचकोफ-जैसे राजवादी तक शामिल थे, जो दिखलाना चाहते थे, कि हम भी जनता की क्रांति के साथ हैं, हम भी क्रांतिकारी हैं। इस घटना की खबर उसी दिन (पुराने पंचांग के अनुसार 1 मार्च) तुर्किस्तान में भी पहुँची। लेकिन स्थानीय हाकिम ने "जब तक दूसरी खबर न आ जाय, तब तक कुछ नहीं करना चाहिये" कह कर, उसे प्रकट होने नहीं दिया, और एक-दो रोज और अपने दबदबे को कायम रखना चाहा। लेकिन सूर्य को आँचल से छिपाना कहाँ संभव था? जार का तख्त उतारा जाना सूर्य की भाँति था, जिसे जनता के सामने प्रकट होने से कैसे रोका जाता? 4 मार्च को तुर्किस्तान हाकिम भी जार के गद्दी से उतारे जाने की खबर की घोषणा करने को मजबूर हुए, और चाहा, कि जनसाधारण के इस आनन्द में अपने को भी साथी साबित करें। इसीलिये अदीजान के कारखाने के प्रबंधकों ने भी स्थानीय हाकिमों के साथ आ कर, मजूरों को इस बड़ी घटना की खबर दे, उनके क्रोध की अग्नि पर, जो कि उन्हीं के खिलाफ थी, ठंडा पानी डालने का एक अच्छा अवसर पाया, जिससे मजूर उनसे बदला लेने में सफल नहीं हुए। हाकिम और कारखाने वाले आसानी से छूट गये। कारखाने के मजूरों ने इस खुशी में अपने इन्कलाबी लाल झंडों को उठाया, और उत्सव मनाने के लिये निकल पड़े। कितनों ही ने अपने जोशीले भाषणों में उसी तरह की बातें कहीं, जिनका वर्णन हम पहिले कर आये हैं। पहिले जो बातें लुक-छिप कर भीतर-भीतर होती थीं, अब वह खुल्लम-खुल्ला हो रही थीं। इसका एक परिणाम यह हुआ, कि उत्पीड़ित मजूरों के मुर्दादिल में क्रांति की नई जान पड़ गयी। मजूर आज उत्सव मनाते सड़कों और कूचों में एकसाथ हो, स्वतंत्रता के गीत गा रहे थे।

'ऐ उत्पीड़ितो, ऐ बंदियो !
हमारी स्वतंत्रता का समय आ गया !
ऐ गरीबो, खुशखबरी !
दुनिया में आनंद-प्रभात आ गया !
कितने युगों तक रंज और दुख सहते रहे,

तब आज आनंद प्रकट हुआ,
जोर और जुल्म खत्म हुआ। ऐ न्याय,
दुनिया में शासन कर !
बदला, बदला, ऐ साथियो !
ऐ जुल्म-देखे हुए, ऐ दोस्तो !
इसके बाद दुनिया में शासन हो
एकताबद्ध, दुखी मेहनतकशों का !'

(2)

'हमारा खून बहाया गया,
मुट्ठी भर की मनोरथ-पूर्ति के लिये।
अपने दिली दोस्तों के मनोरथों के लिये,
इन कमीनों के प्राण को हरो !
दुनिया में जालिम का जुल्म न रहे,
अन्याय, अत्याचार और फूट न रहे।
सभी आनन्द के मधु को चखें,
दुखी मेहनतकशों की एकता से !
बदला, बदला ऐ साथियो !
ऐ जुल्म-देखे हुए, ऐ दोस्तो !
इसके बाद दुनिया में शासन हो
सङ्घबद्ध, दुखी मेहनतकशों का !'

(3)

'हर उत्पीड़ित आनंदित और प्रसन्न हो,
आनन्द के प्याले को सालों पिये !
अँधेरी रात में जोर-जुल्म,
देखा हुआ हर एक सुखी हो !
अंत में न्याय का सूरज
गरीबों के सिर पर उगा।
दुनिया से अन्याय और अँधेरा नष्ट हुआ,
अन्यायी जहन्नुम में फेंका गया।
बदला, बदला, ऐ साथियो !
ऐ जुल्म देखे-हुए, ऐ दोस्तो !
इसके बाद दुनिया में शासन हो
सङ्घबद्ध दुखी मेहनतकशों का !'

मानव-पुत्र दो समय अपने यार-दोस्तों को अधिक याद करता है : एक दुख और बुरे दिनों में, और दूसरे आनन्द और खुशी के दिनों में। अदीना इन सारे दिनों में अपनी प्रेमिका गुल बीबी को भूल नहीं सका था। आज जब कि विजय और आनन्द का उत्सव हरेक गरीब मना रहा था, उसके लिये यह स्वाभाविक था, कि ऐसे समय वह अपने दिल के दर्द को याद करे। उसकी इच्छा हो रही थी, कि जितनी जल्दी हो सके, वह स्वदेश लौट चले, और लोगों को यह आनन्द और उत्सव जिस कारण हुआ, उसकी बात अपनी प्रेमिका को सुनाये, और उसे भी इस आनन्द का भागीदार बनाये। लेकिन उसके लौटने में एक बड़ी बाधा यह थी, कि बरफ पड़ने से पहाड़ जाने का रास्ता बन्द हो गया था। मजबूर था अदीना बसंत के आने तक प्रतीक्षा करने के लिये। उसने निश्चय किया, कि जैसे ही रास्ता खुले, देश जाने वाले पहले ही गिरोह के साथ अपने मुल्क चला जाय।

घर वापस

अदीना ने पूरे तीन साल कारखाने में काम किया। यद्यपि उसकी मजदूरी बहुत कम थी, तथापि अपने खाने-पहिनने तथा दूसरे कामों में बहुत कम खर्च कर, पैसा जमा करता गया। उसी से उसने कभी एक थान साटन खरीदा, कभी एक थान छींट, कभी कुछ गज सूफ, कभी दो विलायती रूमाल, एक शादी की पोशाक और एक जोड़ा जूता। चीजें खरीद-खरीद कर वह अपने खुर्जी (झोले) में रखता गया। वह सोचता था, कि गुल बीबी, इन चीजों को देखकर प्रसन्न होगी, और तीन साल की जुदाई तथा तरह-तरह की तकलीफों को, जिन्हें उसने बहुत मुश्किल से झेला है, दिल से भुला देगी। अदीना ने अपनी कृपामयी नानी को भी भुलाया नहीं। उसके लिये भी एक छींट की पोशाक, एक सूत की पोशाक और कुछ गज ढाका (मलमल) खरीद लिया। गाँव तथा पड़ोसियों के बच्चों के लिये कुछ मिस्री, मिठाई, बिस्कुट और चाय खरीद कर रख लिये।

मार्च और अप्रैल का महीना भी बीत गया। अब कारखाने के काम का मौसम भी खत्म हो गया था, और पहाड़ का रास्ता भी बरफ से कुछ-कुछ खाली हो गया था। पहला गिरोह इकट्ठा होकर पहाड़ की ओर चला। अदीना ने तीन रुबल में अपने सामान के लिये एक गधा खरीद लिया था, और बुखारा के बीस नकद तंकों को कमर में बाँध रखा था।

अदीना रास्ते में जा रहा था, लेकिन उसका दिल बहुत अधीर हो, उसके अंग-अंग को कँपा रहा था। उसे मालूम नहीं था, कि आगे क्या आने वाला है। वह सही-सलामत घर पहुँच जायेगा, या रास्ते में ही मर कर अपने मनोरथ को अपने साथ ही दफना देगा ? देश पहुँचने पर क्या वह अपनी प्रेमिका को जिस घर में छोड़ आया था,

वैसे ही पायेगा, या वह तकलीफ में पड़ कर अथवा किसी दूसरे के चंगुल में फँस कर, हाथ से बेहाथ हो गई ? उस वक्त उसके दिल की हालत क्या हुई होगी ? अगर भाग्य ने मदद की, और उसने मंगेतर को सही-सलामत अपने घर में पाया, तो भी क्या अपने दोस्तों और दुश्मनों के बीच विवाहोत्सव मनाकर वह खुल्लम-खुल्ला कह सकेगा, 'यह मेरी जीवन-साथिनी हो गयी ?' या अरबाब कमाल का जाल फिर बीच में बाधक होगा, और उस स्थानीय हाकिम के कैदखाने में बन्द होना पड़ेगा, जहाँ से दूसरी बार उसे फिर परदेश भागना पड़ेगा ?

यह कड़वे-मीठे विचार, यह अच्छी-बुरी आशंकाएँ और यह भयोत्पादक संदेह, जिन्हें कोई भी आशिक अपने दिल से दूर नहीं कर सकता, अदीना बेचारे पर भी प्रभाव डाल रहे थे, और उसके मन को धीरज नहीं बँध रहा था।

अदीना सामान को गधे पर लाद, उसे आगे कर, हाथ में डंडा लिये, पैदल उसके पीछे चल रहा था। उसका मन उपर्युक्त विचारों, संदेहों और आशंकाओं से भरा हुआ था। कभी-कभी वह आशावान हो, जोश में आ अपने साथियों के साथ 'नक्श मुल्ला' का कोई गीत गाने लगता--

'पर्वत-तटों में लाला के फूलों की राशि,
लेकिन मेरे सिर में तेरे लिये उत्सुकता की बाढ़।
राह पत्थरों से भरा, और मेरा घोड़ा लँगड़ा,
तेरे लिये अधीरता ने मुझे प्यादा कर दिया।
क्या हुआ, जो पंछी उड़ गया,
आँखों के बाण ने क्यों उसे लक्ष्य बनाया !
सुन्दर स्वर वाले पंछी, सुन्दर बोली वाले बुलबुल ने,
तेरे गुलाबी मुख की प्रशंसा का गीत गया।

और कभी-कभी वह अत्यन्त निराशा और नाउम्मीदी से भय और चिन्ता की नदी में डूबने-उतराने लगता, और अपने-आपको भूल जाता।

बारे, अदीना जिस कारवाँ के साथ हुआ था, वह करातेगिन इलाके में दाखिल हुआ। अभी कारवाँ वालों ने अपने सामान को उतारा भी नहीं था, कि करातेगिन के हाकिम के नौकरों और जकात (आयात-कर) वालों ने चारों ओर से उन्हें घेर लिया, और उनके असबाब और सामान को उठाकर, चौकीदारों के पहरे में दे दिया, और उनके बोझा ढोनेवाले जानवरों को भी एक ओर ले जाकर बाँध दिया। स्वयं काफिले के लोगों को भी कैदियों की तरह एक कोने में जाकर रखा। इसके बाद एक-एक करके छानबीन शुरू हुई। मुसाफिरों के पहनने के कपड़ों का, उनके पायजामे का, उनके कमर-बन्दों तक को खुलवा के देखा, जामा के अस्तर को फाड़ डाला, पायजामों को पैर से निकलवाया। इस तरह की नंगी तलाशी में जो कुछ भी नकद उनके पास से मिला,

उसे एक रूमाल में रख जकातची (जकातवाले अफसर) के सामने ढाँक कर रखा गया। इस लूट में अदीना का भी बीस तंका हवा हो गया। कारवाँ वालों ने बहुत फरियाद और गुहार की, बहुत खुशामद की और जकातची तथा उनके नौकरों से कहा--"हमारी हालत पर रहम कीजिये। हमने तुर्किस्तान में एड़ी का पसीना चोटी तक करके, स्वयं न खा, न पहन अपने बाल-बच्चों के लिये पाँच पैसा जमा किया था। ऐसा न कीजिए कि इतने सालों के प्रवास के बाद हम खाली हाथ अपने बच्चों के पास जायें।"

जकातची ने कहा--"हम मुसलमान हैं। तुम भी मुसलमान हो। इसलिये इस्लामी धर्म-शास्त्र के अनुसार बादशाह की आज्ञा का पालन करो। हम तुम्हारे सामान और बोझे को देख रहे हैं। उसका हिसाब करेंगे, और जो नगद पैसा तुमसे लिया है, उसमें से तुम्हारे असबाब की जकात का हिसाब करेंगे। फिर तुम्हारे हाथ में जकात का कागज लिखकर देंगे। उस कागज के कारण दूसरे अमलों की दस्तंदाजी से तुम्हें छुट्टी मिल जायेगी, और तुम अच्छी तरह अपने घर पहुँच जाओगे। यह बात बादशाह का हुक्म और इस्लामी धर्म-शास्त्र की आज्ञा के अनुसार है। जो कोई इस आज्ञा से मुँह मोड़े, उसका माल हम बादशाह के नाम से जब्त करेंगे, और उस आदमी को बेड़ी पहना कर करातेगिन के जेलखाने में भेज देंगे। अब और कोई बात करने की जरूरत नहीं है। बस सलाम।"

बेचारे अपने चार-पाँच तंकों के लिये अफसोस कर रहे थे। दूसरे माल असबाब के जब्त होने की बात सुनकर, उन्होंने अपना मुँह बन्द किया, और रिजा-ब-कजा (खुदा की मर्जी) पर भरोसा कर, जमीन पर बैठ गये। अभी तलाशी और नगाझोरी खत्म नहीं हुई थी, उनके थैलों और खुर्जियों को एक-एक करके खोला गया, उनमें जो कुछ भी माल पसंद आया, उनमें से किसी को "यह हमारे लिये सौगात है," "यह जनाब मीर हाकिम के लिये ठीक है," "और यह दूसरी चीजें बेगीजान (हाकिम की बीबी) के लिये अच्छी होंगी," कहकर ले लिया। छोटे-छोटे नौकरों ने भी हाथ साफ किया। किसी ने रूमाल लेकर जेब में डाल ली, किसी ने मिस्री के टुकड़े खीसे में डाल लिये। कारवाँ वाले बेचारे, जो सभी मजदूर थे, सिवाय रोने-धोने के क्या कर सकते थे ? लेकिन उनका रोना-धोना उन संगदिल नौकरों के लिये केवल हँसी-मजाक का ही कारण हो सकता था। कारखाने में काम करने वाले मजदूरों ने फरवरी-क्रान्ति के उत्सव को देखा था, और क्रांति के बारे में कितनी ही बातें सुनी थीं। उन्होंने देखा, कि अत्याचारियों और जालिमों की ताकत अब भी वैसी ही है, अब भी वे कमजोरों को उसी तरह लूट-खसोट सकते हैं। दीन और धर्म-शास्त्र तो लोगों को मारने के फंदे हैं, जिन्हें वे यहाँ इस्तेमाल कर रहे हैं। इन खूँख्वार भेड़ियों से छुट्टी पाने का एक ही उपाय है, कि सारी दुनिया के गरीब एक हो जायँ।

अन्त में अदीना के गट्ठर को खोलने की बारी आई। लाल साटन के थान को देख जकातची (अफसर) एकाएक अपनी जगह से उठकर गोश्त पर चील की तरह टूट

पड़ा, और पंजा मार कर, साटन के पुलिंदे को हाथ में ले, "है, है, यह बहुत अच्छा माल है। छोटी बेगीजान ने इसी तरह के साटन की माँग की थी। सो यहाँ मिल गया !" कहते हुए अपने चमड़े के बक्सों पर रख दिया ।

अदीना बेचारे का अभी अपने बीस तंके के चले जाने का अफसोस कम नहीं हुआ था, और अब उसने यह हालत देखी । उसने आँखों में आँसू भर कर, जमीन पर पड़ के, मिन्नत की—"जनाब बेग, पैरों पड़ता हूँ, अपनी जान निछावर करता हूँ, घर जा रहा हूँ। यह साटन शादी के लिये लिया है। ऐसा न करें, कि मेरी शादी का काम बिगड़ जाय। कृपा करें ! इसे मुझे बख्श दें ! मेरी जवानी और निराशा पर दया करें !"

जकातची बोला—"बच्चा, बहुत हल्ला मत कर।"

"स्वयं कह रहा है, कि शादी करना है, तो क्या बेगीजान को सौगात नहीं देगा ? यह कैसी बेशरमी है ?"

जकातची उतने ही से बस न करके, एक विलायती रूमाल ले, अपनी जेब में रख, "यह हमारी सौगात है," कह कर, हँस पड़ा। अदीना का रोना-धोना सिर्फ उपहास का मामला बना ।

जिस वक्त असबाब की तलाशी ली जा रही थी, उसी समय काफिले में आया शरीफ नाम का सरायबान दो प्याला हरी चाय ले आया, जिसके ऊपर पुराने दैनिक पत्र का एक टुकड़ा रखा हुआ था। जकातची ने उस दैनिक पत्र को देख चिल्लाकर अपने नौकरों से कहा—"बाँध लो जदीदी (नवयुगवादी) को।"

नौकरों ने बिल्ली जैसे मूस पर पड़े, वैसे "पगड़ी ले आ" कहते उसके सिर से पगड़ी छीन ली, और बेचारे शरीफ को लात मारकर, उसके पैरों में रस्सी बाँध, एक कोने में पटक दिया ।

जकातची ने कारवाँवालों से कहा—"क्या तुम्हारे भीतर इस काफिर का सगा-सम्बन्धी या दोस्त-यार है ? हो, तो बतलाओ।"

कारवाँवाले यह हालत देख, भौंचक से रह गये। उनको पता भी नहीं था, कि ऐसी घटना घटेगी। भय के मारे काँपते हुए, उन्होंने कहा—"इस आदमी को हम नहीं पहिचानते। यह केवल रास्ते में हमारे साथ हो लिया था।"

जकातची ने काफिले वालों से पूछते हुए कहा—"सच बोलो, तुममें और कौन जदीदी है ?"

बेचारे कारवाँवालों ने जदीदी का नाम भी नहीं सुना था, उन्होंने जवाब दिया—"हम जदीदी को नहीं जानते, और न हमने किसी का ऐसा नाम सुना है।"

वस्तुतः ये सभी बेचारे बेपढ़े-लिखे आदमी थे। सबेरे से शाम तक कड़ी मेहनत

में लगे नहीं जानते थे, कि हाल के सालों में बुखारा में क्या हुआ, और वहाँ 'जदीद' और 'कदीम' को लेकर कितनी खून-खराबी हुई। उन्होंने समझा, कि 'जदीदी' किसी अपराधी का नाम है, जो कि हाकिमों के हाथ से भाग गया है, और उसे ये लोग ढूंढ़ रहे हैं। इसीलिये उन्होंने कहा—"हमने जदीदी नाम वाले किसी को नहीं देखा।"

अन्त में शरीफ के सामान और उसके जानवर को बादशाही माल बनाकर, उसे बाँधकर, पहरे वालों के साथ करातेगिन भेज दिया। दूसरे कारवाँ वाले लुट गये थे, तो भी सही-सलामत रास्ते पर अपने को पाकर उन्होंने शुक्र किया।

अब कारवाँ वाले अपने इलाके में चल रहे थे। हर जगह कहीं नायब-काजी मिले, कहीं हाकिम के अमले मिले, कहीं जकातची के आदमियों से भेंट हुई। उनमें से एक ने कभी जकात के नाम पर, कभी सौगात के नाम पर जबरदस्ती उनकी चीजें छीन लीं। इस प्रकार सबसे बढ़िया चीजें लुट गयीं, और अदीना की तो प्रायः सारी चीजें इसी में खत्म हो गयीं। अगर वे सीमांत के जकातची के कागज को दिखलाते, तो ये उपहास करते हुए, कहते—"इसको अच्छी तरह अपने पास रखो। अगर सिरदर्द हो, तो भिगो कर पीना। हमें इसकी जरूरत नहीं। अगर जरूरत हो, तो हम ऐसे कई कागज तुम्हें दे सकते हैं।"

बेचारे मजदूर लुटने से बचे मालमता को ले, अपने-अपने घरों को गये। अदीना भी गाँव के एक साथी संगीन के साथ, जिसका गाँव उसके गाँव के नजदीक था, चला। दोनों एक दुराहे पर पहुँचे, जहाँ वे अलग होने वाले थे। अदीना ने संगीन से शादी के दिन आने के लिये प्रार्थना की। फिर दोनों दो ओर चल दिये।

[illegible]

अदीना अरबाब कमाल से बहुत भय खाता था। इसीलिये उसने दिन को सीधे गाँव में जाना अच्छा नहीं समझा। अपने गधे को चरने के लिये छोड़, वह एक दर्रे में सोया रहा। सूर्यास्त होने में बाकी रही तीन घड़ियों को काटना अदीना के लिए तीन साल से भी ज्यादा कठिन था। अदीना मानो ऐसा प्यासा था, जो नदी तट पर पहुँच कर भी पानी से महरूम था; ऐसा भूखा था, जिसके सामने थाली परसी रखी हुई थी, लेकिन मुँह उसका बाँध दिया गया था। अदीना 'कोई देख न ले,' सोच, एक चट्टान के पीछे लेटा, अपनी आँखों को सूरज से अलग नहीं कर रहा था—वह सूरज जो कि हर रोज अपने उदय से रात के दुख-दर्द को अदीना के दिल से कुछ कम करता था, वह सूरज जो कि प्रति रात्रि अपने डूबने से रात को चिंता और तकलीफ में उसे डालता

था, आज उसी सूरज का प्रभाव अदीना के ऊपर दूसरे ही प्रकार का दिखाई पड़ता था। सूरज अदीना को प्रिय नहीं लग रहा था। वह हृदय से चाहता था, कि वह जल्दी डूब जाये। लेकिन सूरज अपने रास्ते जाने में जल्दी नहीं करता और उसको इसकी कोई परवाह नहीं थी, कि अदीना के दिल पर क्या गुजर रही है।

धीरे-धीरे ही सही, अन्त में सूरज पहाड़ के पीछे छिपा। लेकिन उसकी किरणें अब भी पहाड़ की पीठ पर साफ दिखाई पड़ रही थीं। यह किरणें हर रोज की तरह अच्छी नहीं मालूम हो रही थीं, बल्कि किसी कब्र पर दुख और रंज के लिये जलती मोमबत्ती की तरह प्रतीत होती थीं। अन्त में अदीना के भाग्य का सूरज उगा। दुनिया उसकी आँखों के सामने प्रकाशमान हुई, जब कि सूरज अपनी अन्तिम किरणों को समेटकर डूब गया, और दुनिया में चारों ओर अंधकार छा गया।

यह सच है, कि अभी तक अदीना के लिये दिन सौभाग्य की वस्तु थी, और रात दुर्भाग्य की वस्तु; किन्तु आज उसने रात के जल्दी आने की कामना की थी। भविष्य के गर्भ में क्या है, इसका भय भी उसके हृदय में समाया था। अब उसे घर आना था। मानो गधा भी अदीना के मन की बात जानता था, इसलिये पेट भर चर कर, दुनिया के अंधकार में डूबते ही वह चट्टान के पास आकर सवारी के लिये तैयार खड़ा हो गया।

अदीना ने अपनी खुर्जी और थैले को गधे पर लादा। सारी यात्रा में यह पहिला मर्तबा था, जब कि अपने गधे पर सवार हुआ, क्योंकि वह जल्दी ही घर पहुँच जाना चाहता था। गधा भी तीन घंटा आराम कर, खूब पेट भर चर चुका था। वह तेजी से कदम बढ़ाने लगा। लेकिन अदीना को उतने से सन्तोष नहीं था; उसे गधे की चाल बहुत सुस्त मालूम होती थी। वह उड़ कर घर पहुँच जाना चाहता था। अन्त में अधीर हो, गधे से उतर कर, पैदल ही, दो डंडे लगाकर, जानवर को भगाया, और खुद उसके पीछे दौड़ने लगा। लेकिन इधर चलते-चलते उसके पैरों में छाले पड़ गये थे, इसलिये गधे के बराबर चल नहीं सकता था। अन्त में फिर गधे पर चढ़ा। कुछ दूर जाने के बाद, फिर वह सुस्ती से अधीर हो उतर पड़ा, और तेज चलने की कोशिश करने लगा। इसी तरह कभी गधे पर और कभी पैदल चलते हुए, वह अपने घर पहुँचा।...

घर के भीतर बीबी आइशा लेटी हुई बात कर रही थी, और गुल बीबी बातें सुनती उसके पैर दबा रही थी। यद्यपि ये वही बातें थीं, जिनको गुल बीबी कई बार सुन चुकी थी, तथापि उन्हें सुनने से वह ऊबी नहीं थी, बल्कि और चाव से उन्हें सुनना चाहती थी, क्योंकि बीबी आइशा की बातचीत सदा अदीना पर पहुँच जाती थी। ये बातें अधिकतर उन स्वप्नों के बारे में होती थीं, जिनमें बीबी आइशा अदीना को देखती थी। बीबी आइशा जो स्वप्न देखती, उनमें किसी का फल अच्छा भी हो सकता था, और किसी का बुरा भी। उस दिन रात को बीबी आइशा जब गुल बीबी के साथ सोई, तो क्या देखा, कि एक चोर घर के भीतर आ घुसा, जिससे बीबी आइशा ने कहा——

"तू कैसा चोर है, कि एक गरीब बुढ़िया के घर में घुस आया, और उसे बेकार ही डरा रहा है?"

चोर ने जवाब दिया——"तेरे पास एक बहुत मूल्यवान रत्न है। उसकी मुझे आवश्यकता है।" यह कह कर, चोर ने गुल बीबी की ओर मुँह किया। बीबी आइशा मारे डर के चिराग हाथ में ले जब देखने चली, तो देखा कि वह चोर नहीं है, बल्कि खुद अदीना है।

बीबी आइशा ने इस स्वप्न को आज कई बार गुल बीबी से कहा। स्वप्न को फिर दुहरा कर, उसने उसकी ताबीर (फल) भी कहा——"इस सपने का शुभ फल यही है, कि अदीना जल्दी ही आ रहा है। लेकिन इसका बुरा फल भी है, जिससे कि भगवान उसकी रक्षा करे!"

बीबी आइशा ने स्वप्न के बुरे फल को गुल बीबी से नहीं कहा, तो भी वह अपने मन में डर रही थी, अचरज नहीं, कि कोई दुश्मन गुल बीबी को पकड़ने के ख्याल से चोर की तरह घर में घुसे, और वह अदीना का जिस पर उचित हक है, उसके हाथ से चली जाय।

इसी समय दरवाजे पर पैर की आहट सुनायी दी। बीबी आइशा को भय हुआ, कि कहीं स्वप्न का बुरा फल न उपस्थित हुआ हो, और उसका चेहरा फक हो गया। बुढ़िया ने गुल बीबी को दूसरी कोठरी में जाने का इशारा किया। इस समय तक आने वाला बाहरी दरवाजे से घर के भीतर चला आया था। बीबी आइशा ने घबरा कर उठते हुए, चिल्ला कर, कहा——"तू कौन है? और किसलिये एक गरीब बुढ़िया के घर में रात को आया है?"

आने वाले ने बड़ी नरमी से "मादर जान, मत डर, मैं तेरा बच्चा अदीना हूँ," कह कर आवाज दी।

गुल बीबी, खातिरजमा रख, खड़ी रही। अदीना के लिये एक दूसरा खतरा भी पैदा हो गया था, क्योंकि "तेरा बच्चा अदीना है" इस वाक्य को सुन कर आइशा "वाई" कह कर, बेहोश हो कर, जमीन पर गिर पड़ी थी। उसके गिरने की आवाज गुल बीबी ने सुनी। वस्तुतः ये कुछ क्षण गुल बीबी और बीबी आइशा, दोनों के लिये बड़ी बेचैनी पैदा करने वाले क्षण थे। हद से ज्यादा खुशी का एकाएक होना ऐसा ही परिणाम लाता है, और कभी-कभी तो मौत का भी कारण बन जाता है। बीबी आइशा और गुल बीबी दोनों एक क्षण पहिले सख्त भयभीत थीं, और दूसरे ही क्षण आनन्द की सीमा पार कर गई थीं।

दरवाजा खोलने पर मालूम हुआ, कि गुल बीबी ने अपने को बहुत जोर लगा कर सँभाल रखा है, लेकिन बीबी आइशा अब भी बेहोश पड़ी हुई है। अदीना इस तरह देख, और रुक न सका। पानी का बर्त्तन ला कर, उसने उसके हाथ और मुँह को थोड़ा

धोया। सर्द पानी के प्रभाव से बीबी आइशा होश में आयी, और "मेरे स्वप्न का शुभ फल सीधे सामने आया" कहती, अपनी आँखों की रोशनी अदीना को गोद में खींच कर, कुछ देर तक हाय-हाय करती, आनन्द का रुदन रोती रही। फिर मंद हुए चिराग के प्रकाश को बढ़ाने पर जब बीबी आइशा की आँखें अदीना के मुँह के ऊपर पड़ीं, तो उसने अपने काँपते हुए हाथों को उसकी गर्दन पर रख, उसके सिर और मुँह को चूमा, और उसके ओठों को चाटा। इस चुम्बन से उसे आनन्द मिल रहा था और वह मुहब्बत की बातें करती जाती थी। लेकिन जीभ के सूखने से आगे बेचारी 73 साला बुढ़िया अपनी आकस्मिक प्रसन्नता को भी अच्छी तरह प्रकट नहीं कर सकती थी। हाँ, उसकी आँखों से गिरते आँसुओं की धारा अदीना के सिर और मुँह को तर कर रही थी, जिसे जब-तब आस्तीन से पोंछने की जरूरत पड़ रही थी।

काफी देर बाद बीबी आइशा का आनन्द-विह्वल मन कुछ स्थिर होने लगा, उसके दिल को भी ढाढ़स मिला, और उसने इन तीन सालों में अरबाब कमाल की ओर से जो-जो कार्रवाइयाँ हुई थीं, उनकी कथा अदीना को कह सुनायी। अदीना को यद्यपि बहुत लज्जा आ रही थी, लेकिन वह और ज्यादा देर रुकने की शक्ति न रख सका, और गुल बीबी का समाचार पूछ बैठा।

बीबी आइशा ने कहा—"धन्यवाद है खुदा को, कि गुल बीबी सही-सलामत है। अपनी बात में मैं उसे तो भूल ही गई।" कहते हुए, वह अपनी जगह से उठ कर, बाहर गयी।

गुल बीबी को दूसरी कोठरी में उठा कर, लौट कर उसने कहना शुरू किया—"मैं चाहती हूँ, जितनी जल्दी हो सके, तेरी मँगेतर का हाथ तेरे हाथों में दे दूँ। केवल अरबाब कमाल के झगड़े को निपटाने की जरूरत है। गुल बीबी तेरी मँगेतर है, और जल्दी ही तेरी बीबी होगी, लेकिन जब तक निकाह नहीं हो जाता, तब तक उसे देखना ठीक नहीं है। पहिले जब तुम दोनों छोटे-छोटे बच्चे थे, तब एक-दूसरे को देखने में हर्ज नहीं था। लेकिन अब तुम सयाने हो गये, इसलिये दुनिया के रिवाज के मुताबिक चलने की जरूरत है।"

यद्यपि गुल बीबी पर आइशा का बहुत जोर था, लेकिन वह आइशा के पीछे-पीछे आकर, किवाड़ की ओट से सब बातें सुन रही थी। उसके लिये नानी की शिक्षा पर चलना बहुत कठिन था, किन्तु क्या करती? बाप-दादों के समय से चला आया यही रिवाज था। तो भी काम आसान था। अगर जिन्दगी रही, तो जल्दी ही दोनों का मनोरथ पूरा होगा। लेकिन अरबाब कमाल से छुटकारा पाना बहुत ही मुश्किल है। उस से जल्दी ही छुट्टी पाना जरूरी है, क्योंकि उनकी मनोरथ-सिद्धि उसी पर निर्भर करती है।

नाती और नानी ने सारी रात बात करने में गुजार दी। गुल बीबी को भी नींद नहीं आयी। इतने दिनों के दिल के दर्द को उसने अदीना के मधुर शब्द सुनकर कम करना चाहा।

अदीना यद्यपि सारी रात नानी से बात करता रहा, तथापि उसका दिमाग बराबर अरबाब कमाल के मामले से बँधा हुआ था। बहुत सोचा, किन्तु मुक्ति का कोई रास्ता दिखाई नहीं दिया। अन्त में उसने विचारा-विवाह और निकाह की रस्म का किया जाना किसी तरह छिपा नहीं रह सकता। चाहे कितने ही दिन घर में छिपा रहूँ, अन्त में एक दिन बाहर निकलना ही पड़ेगा, तब शायद फिर देश को छोड़ना पड़ेगा, गुल बीबी से मिलने की इच्छा को मन से निकाल कर परदेश जाना पड़ेगा। लेकिन मेरे लिये शरीर से प्राण निकाल देना आसान है, किन्तु गुल बीबी को दिल से निकालना आसान नहीं है। इसलिये अच्छा यही है, कि चाहे जो भी हो, खुले मैदान में आ जाऊँ, और जो कुछ भी भवितव्यता हो, उसे देखूँ। शायद उसी में मुक्ति का रास्ता भी निकल आये।

अदीना यह निश्चय करके सबेरे के वक्त कूचे में आया, और गाँव के इमाम मुल्ला खाकराह से मिलने के लिये मसजिद में गया। उसने कुछ मिठाई और चाय भेंट के तौर पर मुल्ला के सामने पेश की।

"जरूरत नहीं थी, जरूरत नहीं थी," कह कर इमाम ने मिठाई और चाय ले कर, अदीना के लिये दुआ की, और उसके पिता की आत्मा के लिये फातिहा पढ़ा। फिर दान देने की महिमा-वर्णन करते हुए, बहुत से अरबी वाक्य पढ़े। अन्त में कहा—"दो ही रात बीती, तेरे पिता को मैंने स्वप्न में देखा। उसके दोनों गाल लाल सेब की तरह चमक रहे थे। उसके शरीर पर नया सफेद जामा और सिर पर पगड़ी थी। वह मेरे नजदीक आ कर, कुछ मिठाई और चाय देकर, बोला 'मुल्ला जी, मेरे अदीना के लिये दुआ कीजिये। आपकी दुआ अवश्य खुदा के पास स्वीकृत होगी।' अब देख रहा हूँ, कि यह वही मिठाई और चाय है जिसे तेरे पिता ने स्वप्न में दिया था। इससे मालूम होता है, कि तेरे पिता की खुश-खबरी के अनुसार मेरी दुआ भी तेरे लिये कबूल हुई है।"

निश्चय ही मुल्ला खाकराह यह झूठ अदीना की मिठाई और चाय के लिये बोला। अगर अदीना के बजाय कोई दूसरा आदमी होता, तो शायद इस कहानी पर विश्वास करता। लेकिन अदीना कारखाने में मजदूरों के बीच रह वहाँ की सभाओं में ऐसी बातें सुन चुका था, फरवरी क्रान्ति के उत्सव में शामिल हो चुका था। ऐसी झूठी बातों का उसे पता था। लेकिन उसने यही उचित समझा, कि बाहर से मुल्ला की बातों पर विश्वास दिखलाये।

अदीना ने मुल्ला की दुआ ले कर, अपने घर का रास्ता लिया। मुल्ला अदीना के वहाँ से उठते ही, जरा भी देर किये बिना, अरबाब कमाल के घर पहुँचा, और बोला—

"खुशखबरी है, भेंट दीजिये ! अदीना आ गया है। यही वक्त है उस भगोड़े से अपना हक अदा कराने का। लेकिन भूलियेगा नहीं, जब अपना हक लें, तो मेरे हक को भी याद रखियेगा, जिसमें कि हमारे बीबी-बच्चे भी जरा एक देग गरम कर सकें।"

अरबाब कमाल ने इमाम को "हाँ, जरूर" कह कर प्रसन्न किया, और अपने पुत्र इबाद को हुक्म दिया, कि घोड़े पर सवार होकर नायब-काजी, मुल्ला मर्दखुदा, के पास जाकर उन्हें बुला लाये, जिसमें कि यहीं पर उनके सामने मामले का फैसला हो। अरबाब खूब जानता था, कि अगर यह मामला स्वयं काजी के सामने गया, तो दोनों तरफ से खर्च भी बहुत ज्यादा होगा, और मामला भी जल्दी तय न होगा।

इबाद बाप की आज्ञा मान, घोड़े पर सवार हो, रवाना हो गया। एक गाँव से दूसरे गाँव में नायब-काजी की तलाश करते-करते, आखिर उसने उसे एक मुर्दाखाने में पाया, और शाम तक उसे अपने घर ले आया।

उस रात को अरबाब कमाल के घर में गाँव के बड़े-बूढ़े (पंच), इमाम, मुल्ला खाकराह और नायब-काजी, मुल्ला मर्दखुदा इकट्ठा हो कर, सलाह करते तथा दावत खाते रहे। अदीना के बारे में यही तय हुआ, कि अगले दिन सबेरे उसे मसजिद में लाया जाय, नायब-काजी उसे बाँधने का हुक्म देकर डरवाये, फिर गाँव के बड़े-बूढ़े बीच में पड़, यह कहकर सुलह करवायें, कि जब तक अरबाब कमाल का 'हक' अदा नहीं हो जाता, तब तक के लिये उनकी नौकरी करने की स्वीकृति का अदीना एक दस्तावेज लिख दे, और नायब-काजी तजा काजी का खिदमताना भी अदीना के सिर डाला जाय।

इस सलाह के अनुसार अगले दिन सबेरे अदीना को मसजिद के दरवाजे पर लाया गया। अदीना के साथ संगीन भी आया, जो कि शादी का दिन मनाने के लिये अपने दोस्त के पास आया हुआ था। लेकिन ताजिक कहावत मशहूर है, कि 'मैं आया दिलखुशी को, और सामने आयी कपासकसी'। यही मिशाल संगीन के ऊपर घटी। बेचारा शादी-खुशी के लिये आया था, और यहाँ जंजाल देखने में आया। संगीन को जब यह बात मालूम हुई, तो उसने अदीना से कहा--"अच्छा हुआ, जो मैं आ गया। मालूम होता है, कि ये तुझे तकलीफ देनेवाले हैं। शायद इस बारे में मैं तेरी कुछ सहायता कर सकूँ।"

बारे, संगीन और अदीना मसजिद के दरवाजे पर आ खड़े हुए। नायब-काजी ने रात की सलाह के अनुसार अदीना को खूब धमकी दी, उसे चोर, लोगों का माल उड़ाने-वाला, भगोड़ा आदि कह कर, बाँध लेने का हुक्म दिया। गाँव के इमाम ने सुलह और शान्ति कराने का अभिनय करते हुए, बीच में पड़ कर, कहा--"जनाब नायब साहब का खिदमताना जो कुछ मुनासिब है, उसे अदीना देगा, और अरबाब कमाल को भी अपनी स्वीकृति का दस्तावेज लिख देगा, और जब तक कर्ज अदा न हो, तब तक अरबाब की खिदमत से सिर नहीं हटायेगा। जनाब नायब साहब भी अब इसके पुराने

अपराध को क्षमा करें, और इसकी भूल-चूक को लड़कपन और कम-तजर्बगी की बात समझ कर माफ कर दें, और जनाब शरीयत-पनाह (धर्मपालक) काजी साहब का मुहराना ले कर अदीना का यह मामला खत्म कर दें।"

नायक काजी मुल्ला मर्दखुदा ने चिल्ला कर, कहा--"नहीं, यह नहीं हो सकता! क्या देश बिना हाकिम का है? ऐसे मनमानी करने वाले बच्चे को अपने किये का फल चखना चाहिये, तभी उसे शिक्षा मिलेगी।"

गाँव के बड़े-बूढ़ों ने बीच में बोलते हुए, इमाम का समर्थन किया, और उसकी बात पूरा करने के लिए कहा। नायब-काजी खिदमताना एक थान छींट निश्चित हुआ। उन्होंने नायब से प्रार्थना की, कि अदीना के पिछले गुनाह को क्षमा करके, उसकी ओर से एक एकरारनामा लिख देने की कृपा करें, तथा काजी साहब के मुहराना के लिये जो कुछ उचित समझें, लें।

संगीन ने देखा, कि अदीना का काम खराब होने जा रहा है, उसके ऊपर ऐसा फंदा पड़ने वाला है, कि अंतिम उम्र तक वह अरबाब कमाल की गुलामी से छूट नहीं पायेगा। यह सोच कर, उसने अपने को बीच में डालते हुए, नायब-काजी के कान में कहा--"जनाब नायब, एक थान छींट आप का हलाल हक है। इसके अतिरिक्त एक जोड़ा जूता और एक विलायती रूमाल भी हम अदीना की ओर से आपको देते हैं। ऐसा करें कि अदीना अरबाब कमाल के हाथ से मुक्ति पा जाय।"

नायब ने कहा--"यह काम मुश्किल है, लेकिन तेरी खातिर मैं ऐसी बात करूँगा, यदि तू अपने वादे पर, कायम रहा नहीं, तो अदीना के साथ तुझे भी बंदी बनाऊँगा।"

"खुदा एक, बात एक ! आप खातिरजमा रखें।" कहते हुए, संगीन ने शपथ खा कर, नायब का दिल भर दिया।

नायब ने अदीना की जबान से एक दरखवास्त लिखी, जिसके अनुसार अरबाब कमाल के दावे को झूठ बतलाता है, और अरबाब ने बीबी आइशा से अदीना की ओर से जो कागज लिखवाया था, उसे वह स्वीकार नहीं करता। साथ ही अदीना ने अरबाब कमाल की तीन साल नौकरी की, जिसकी तनख्वाह उसे मिलनी चाहिये। अरबाब कमाल अदीना की तीन साल की तनख्वाह को देने की जगह उसे डराता-धमकाता है।

नायब ने कागज लिख कर, लोगों के सामने उसे पढ़ा। सभी आश्चर्य में पड़ गये। नायब ने कहा--"अब मामले का रंग दूसरा हो गया है। अब अरबाब कमाल को भी अदीना के साथ हमें काजीखाना ले चलना होगा, जिसमें कि इन दोनों के बीच में पड़ कर, स्वयं इस्लाम के काजी साहब अपना फैसला दें, और उसके लिये अरबाब से जो कुछ पूछ-ताँछ करना हो, करें।"

अरबाब कमाल और गाँव के बुजुर्गों ने देखा, कि काम खराब हुआ चाहता है। वे बीच में पड़ कर, यह सलाह देने लगे, कि अरबाब कमाल और अदीना के बीच का झगड़ा इस तरह निबटाया जाय, कि दोनों अपने-अपने दावे को बिना किसी शर्त उठा लें और नायब के खिदमताना और काजी के मुहराना को भी दोनों बराबर-बराबर दें। इसके लिये अरबाब की तरफ से एक मोटी-भेड़ उन्होंने नायब को भेंट के तौर पर दी, और अदीना के घर से भी एक थान छींट मँगवा कर नायब को दे दिया। फिर प्रार्थना की, कि झगड़ा यहीं खत्म कर दिया जाय। नायब ने पहिले "नहीं", "नहीं हो सकता" कह कर, कितनी ही बार इन्कार किया. किंतु अंत में इमाम तथा बड़े-बूढ़ों की बात मान कर राजी हो, फातेहा पढ़ा, और कहा, कि दोनों तरफ के दावों के फैसले का कागज काजी को मुहर करके उसी वक्त मिल जायगा, जब कि भेड़ लेकर कोई वहाँ जायेगा। संगीन भी अपने वादे के मुताबिक बगल में पड़ी रूमाल को निकाल कर, जिस वक्त नायब घोड़े पर सवार होने लगा, रिकाब पकड़ने के बहाने नायब के नजदीक जा कर, खुर्जी में डाल दिया। नायब ने संगीन के हाथ से कोड़ा लेते हुए, "तेरी उम्र लंबी हो, मेरे पुत्र" कह कर, अपना रास्ता लिया।

झगड़ा तो खत्म हुआ, किंतु बेचारे अदीना के पास कुछ नहीं रह गया, कि वह शादी का इंतजाम कर सके। फरगाना से लाया गधा इतना दुबला-पतला हो गया था, कि पहाड़ में कोई उसे किसी दाम पर खरीदने के लिये तैयार नहीं था। बाहर से लौटने पर रोटी तोड़ने का रिवाज है, लेकिन अदीना वह भी नहीं कर सकता था, क्योंकि उसके लिये गाँव के तीन-चार बड़े-बूढ़ों को न्योता देना पड़ता, और फिर उन्हें खाने के साथ एक-एक रूमाल भी देना पड़ता। इसके लिये कम-से-कम बीस तंकों की जरूरत थी, और अदीना के पास एक तंका भी नहीं था, और न कोई चीज ही अब उसके पास रह गयी थी।

यात्रा का निश्चय

अदीना के लिये इसके सिवा और कोई चारा नहीं था, कि वह फिर फरगाना की ओर रवाना हो। वहाँ जाकर कुछ दिनों मजदूरी और हम्माली करे, कुछ पैसा और सामान जमा कर, देश लौट भोज-भाज करके गुल बीबी के साथ ब्याह करे, और किसी तरह जीवन काटे। लेकिन इस बात को बीबी आइशा से कैसे कहे, यह उसकी समझ में नहीं आता था। बीबी आईशा हरगिज नहीं चाहती थी, कि उसका इकलौता नाती दुबारा विदेश जाय, और फिर उसे जुदाई की आग में जलना पड़े।

अरबाब कमाल के झगड़े के खत्म हो जाने के बाद, उस रात अदीना ने अपनी नानी के साथ बात करते हुए चाहा, कि यात्रा का जिक्र करे। लेकिन इस बात को वह

एकाएक मुँह से निकाल नहीं सकता था। इसलिये उसने पहिले ब्याह की बात चलाई, और नानी से पूछा—"अब मेरे पास ब्याह के लिये कोई चीज नहीं रह गयी है, फिर भोज-भाज कैसे किया जाय? इसके बारे में तेरा क्या विचार है?"

बीबी आइशा ने कहा—"हाँ, ठीक कह रहा है। चीज के बिना कैसे भोज किया जा सकता है? इस वक्त धीरज धरने की आवश्यकता है। खुदा मालिक है। जिस वक्त कुछ हाथ में आयेगा, तो शादी और भोज करेंगे।"

अदीना ने जवाब में कहा—"खुदा मालिक है, कह कर चुप बैठना बुद्धिमानी का काम नहीं है। पैसा और दूसरी चीजें कहीं भी आसमान से गिर कर किसी के हाथ में नहीं पहुँचतीं। अगर इस तरह फिजूल हाथ पर हाथ रखकर बैठेंगे, तो भूख से मर जायेंगे, भोज-भाज की तो बात ही दूर रही। यह हो सकता है, कि लोगों को भोज दिये बिना ही निकाह कर लें। जब हाथ में कुछ आयेगा, तो देखा जायगा।"

बात करते हुए अदीना एक बड़े ही नाजुक जगह पर पहुँच गया था, क्योंकि वह 73 साला बुढ़िया, जिसके सारे बाल सफेद हो गये थे, हरगिज नहीं चाहती थी, कि "बाप-दादा के वक्त से चली आती रस्मों में से एक भी छोड़ा जाय, तमाम रस्मों को छोड़ने की तो बात ही क्या।"

नाती की बात का जवाब देते हुए, बीबी आइशा ने कहा—"नहीं, बिना भोज के निकाह संभव नहीं है। ऐसा करने पर हम लोगों के सामने कैसे मुँह दिखायेंगे? क्या वह नहीं कहेंगे, कि क्या तुम्हारे पास चार घड़ी चावल पकाने की भी ताकत नहीं? अगर ऐसा था, तो क्यों बहू लाने और ब्याह करने का लोभ किया? अगर लोगों की बात को कान न दें, तो भी बिना भोज के यह होना संभव नहीं है, क्योंकि खुद मेरे दिल में कितनी साध है। चाहती हूँ, कि भोज में लोगों को बुलाकर आश (खिचड़ी) और रोटी तैयार करूँ। आज मेरी एक ही संतान है, और मेरी साध भी एक ही है। यह साध यही है, कि अपनी संतान के भोज और तमाशा को अपनी आँखों से देखूँ, और कितने ही सालों से चली आती अभिलाषा को पूरी करूँ।"

"ऐसा ही सही," अदीना ने कहा—"लेकिन मैंने कहीं नहीं देखा, कि बिना पैसे के भोज हुआ हो। बेकार आदमी कहीं से पैसा पैदा नहीं कर सकता। फिर तो भोज का ख्याल ही दिल से निकाल देने की जरूरत है। तू बहू लाने का ख्याल छोड़ दे, और मैं भी बीवी लाने का विचार छोड़ दूँ।"

बीबी आइशा ने कहा—'मैं तुझे बेकार बैठने के लिये नहीं कह रही हूँ। किसी की नौकरी पकड़ कर काम कर, कहीं मजूरी कर ले। इस प्रकार हम लोगों की रोज की रोटी चलेगी, और भोज का भी इंतजाम हो जायगा।"

अदीना ने बात को अपने मतलब की जगह पर पहुँचा दिया था। खुद नानी ने उसे नौकरी करने की सलाह दे दी। अब उसके लिये सम्भव था, कि अपने असली अभि-

प्राय को प्रकट करे। उसने फिर बात की—"मैं नौकरी करने से जी नहीं चुराता। अगर नौकरी मिले, तो इसी वक्त करने के लिये तैयार हूँ। किसकी नौकरी, और कहाँ ? यह हमारा वतन आज बुखारा के जालिम हाकिमों और खूँख्वार काजियों के हाथ से पामाल हो रहा है, सुनसान पड़े बयाबान की तरह वीरान हो रहा है। यह हमारा देश अमलों के जोर और जुल्म तथा मुल्लाओं की अंधेरगर्दी से ध्वस्त हो रहा है। अरबाब कमाल जैसे लुटेरे बायों के जुल्म के कारण यह वतन मजूरों और गरीबों के लिये कैदखाना बना हुआ है। यहाँ कहाँ काम मिलेगा, जिससे हम अपनी जीविका चला सकें, और भोज का इन्तजाम कर सकें ? अरबाब कमाल की नौकरी मैंने की थी। वहाँ मुझे क्या-क्या जुल्म नहीं सहने पड़े ? क्या तू उन्हें भूल गयी ? अगर फरगाना से लौटने के बाद एक थान छींट, एक जोड़ा जूता तथा रूमाल न होता, तो मुझे फिर अरबाब की गुलामी में फँसना पड़ता। अब इसके सिवा कोई रास्ता नहीं है, कि फिर फरगाना की यात्रा करूँ, और वहाँ मजूरी और कुलीगीरी करूँ। फिर कुछ पैसा जमा करके अपना काम ठीक करूँ, और तेरी भी साध पूरी करने का उपाय करूँ। और हाँ, यदि तू राजी हो, कि बिना चीज के ही भोज करूँ, अथवा बिना भोज का निकाह करूँ, तो उसके लिये भी तैयार हूँ।"

बिना भोज के निकाह करने के लिये बीबी आइशा हरगिज राजी नहीं हो सकती थी, और अदीना की बातों का जवाब भी उसके पास नहीं था। अन्त में वह भी इसी निश्चय पर पहुँची, कि स्वयं भी, गुल बीबी को भी लेकर अदीना के साथ फरगान के लिये रवाना हो जाय, जिसमें दुबारा जुदाई की आग और गरीबी की मार सहने की नौबत न आये। यही ख्याल कर के, बीबी आइशा ने अदीना से कहा—"जब परदेश जाने के सिवा और कोई चारा नहीं है, तो मुझे और इस अनाथ बच्चों को इस देश में अकेली न छोड़। हमें भी अपने साथ ले चल।"

यह बात अदीना को भी बहुत पसन्द आयी। वह फरगाना से लाये गधे को खूब खिलाने-पिलाने लगा। उसने तय किया, कि रास्ते में दोनों स्त्रियों में से एक-एक को बारी-बारी से सवारी पर और पैदल ले चलेगा। लेकिन ऐसे खतरनाक रास्ते में एक सुन्दर तरुणी को अकेले साथ ले जाना भारी खतरे की बात थी। उसके लिये एक और साथी का होना आवश्यक समझ, उसने जाकर संगीन से कहा—"अगर यात्रा करने का तेरा भी इरादा हो, तो जल्दी तैयारी कर, जिसमें दोनों साथ-साथ फरगाना चलें।"

संगीन ने कहा—"मैं एक हफ्ता बाद यात्रा करने के लिये तैयार हो जाऊँगा। लेकिन अपनी नानी को साथ ले जाने का ख्याल तू दिमाग से निकाल दे, क्योंकि इस विलायत (प्रदेश) का हाकिम हरगिज इसके लिये राजी नहीं होगा। कुछ साल पहिले मैंने भी चाहा था, कि अपनी माँ को साथ ले जाऊँ, और फिर लौट कर इन जालिमों का मुँह न देखूँ। लेकिन उन्होंने आज्ञा नहीं दी। यहाँ तक कि बुखारा जाकर, वहाँ के

बड़े हाकिमों का भी हुक्म यहाँ के हाकिम के नाम लाया, कि बुड्ढी माँ को अपने साथ ले जाने की आज्ञा मिले। लेकिन हाकिम ने उस बात से इन्कार ही नहीं कर दिया, बल्कि धमकाया, अगर दूसरी बार ऐसी चाराजोई की, तो जेल में डाल दूँगा।"

"वाह, अजब, अजब !" अदीना ने कहा—"क्या कारण है, कि ये औरतों को यात्रा की इजाजत नहीं देते ?"

संगीन ने हँस कर, कहा—"दीदार जान, अभी तू बच्चा है। तुझे तजर्बा नहीं है। अपने देश के हाकिमों को तू पहिचानता नहीं। इसीलिये अचरज कर रहा है। मत ख्याल कर, कि हमारे हाकिम बुद्धू हैं, और बिना कारण ही हुक्म निकाल कर, लोगों को परेशान करते हैं। नहीं, ऐसी बात नहीं है। ये हाकिम अपने लाभ को अच्छी तरह समझते हैं। वह इसीलिये मजदूरों को अपने परिवार के साथ इस विलायत में जाने की इजाजत नहीं देते, जिसमें कि उनके लाभ को हानि न पहुँचे। तुझसे साफ-साफ कह रहा हूँ। जिस वक्त दूसरे मजदूरों के साथ हम फरगाना से लौट कर करातेगिन की सीमा पर पहुँचे, तो जकातची ने कितने का माल और नकद हमसे छीना ?"

"कितने का ? यह तो नहीं कह सकता," अदीना ने कहा—"किन्तु इतना मालूम है, कि उन्होंने बहुत ज्यादा नकद और माल हमसे छीना।"

"तेरी छींट, चाय, मिठाई, जूती यह सब कहाँ गयी ?" संगीन ने पूछा।

"लूट में चली गयी।"

"यदि हाकिम तुझे छुट्टी दे दे, कि तू अपने परिवार के साथ ले जाय, तो क्या फिर तू लौट कर इस इलाके में आयेगा ?"

"नहीं, कभी नहीं। ऐसे मुल्क में हरगिज आना नहीं चाहूँगा, जहाँ इतना जोर-जुल्म है।"

"इसीलिये हाकिम परिवार को साथ ले जाने की आज्ञा नहीं देता," संगीन ने ने कहा—"क्योंकि इसी के कारण तो फरगाना और दूसरी जगहों की यात्रा करने वाले मजदूर हर साल आ कर हजारों तंका इनको देते हैं। यदि ये परिवार के साथ जाने की इजाजत दें, तो कोई मजदूर दुबारा यहाँ लौट कर न आयेगा। ऐसी हालत में हाकिम, काजी, रईस और उनके नौकर-चाकरों का खीसा खाली रहेगा, उनका पेट भूखा रहेगा। जैसे भी हो, अपनी नानी को राजी कर, जिसमें अगले हफ्ता हम यहाँ से रवाना हो जायँ।"

यात्रा और जुदाई

अदीना संगीन के पास से अपने घर आया। उसका दिल बहुत उदास था। जब उसने अपनी नानी को साथ ले जाने की बात तय की थी, तो उस वक्त उसका दिल आनन्द के मारे वैसे ही उफन रहा था, जैसे शराब का मटका। वस्तुतः साथ ले जाने का विचार बहुत ही मधुर था। यदि उस तरह की यात्रा नसीब होती, तो अदीना न केवल स्वयं इस जुल्माबाद (अत्याचार-नगरी) से मुक्त होता, बल्कि इस प्रकार अपनी प्रेमिका और नानी को भी मुक्त करने में समर्थ होता।

किन्तु अब क्या हालत थी? अब उसे सफर करना था, रंज और गम के काफिले के साथ जले हुए दिल, कँपती छाती, और आँसुओं से भीगी आँखों के साथ। अब ऐसी हालत में उसे चलना था, जब कि वह भविष्य के बारे में कुछ नहीं कह सकता था। क्या वह सही-सलामत लौट कर नानी को देख सकेगा? क्या उसे फिर अपनी प्रेमिका का प्रेम मिल सकेगा? सबसे बड़ी मुश्किल बात यह थी, कि विदाई के वक्त पीछे छोड़े जाने वाले दुख और रंज कैसे बरदाश्त कर सकेंगे?

इसी तरह के विचारों को लिये, अदीना अपने घर पहुँचा। पहिले उसने इधर-उधर की बातें कीं, फिर संगीन की बात बतलायी। उसे सुन कर, बेचारी बीबी आइशा "हाय" कह कर गिर पड़ी, और बड़ी करुणापूर्ण दृष्टि से अदीना की ओर देखने लगी।

अदीना ने कहा—"मादर जान, और कोई रास्ता नहीं है, सिवा इसके कि संगीन के साथ सफर करूँ। मुझे उम्मीद है, कि जल्दी लौट आऊँगा, और बुढ़ापे और बीमारी के दिनों में तेरी खिदमत करूँगा। अब रोने-धोने से कोई फायदा नहीं। यदि अधिक रोना-धोना करेगी, तो मेरा दिल, जो कि पहिले से पानी-पानी हो गया है, टूट जायेगा। तब डर है, कि मैं बीमार हो जाऊँगा, और यात्रा पर न जा सकूँगा। यही बेहतर है, कि धीरज धर के मेरे फटे कपड़ों की मरम्मत कर, मेरे लिये पाक दिल और आशापूर्ण हृदय से फातेहा पढ़, जिसमें कि मैं हर खतरे से सुरक्षित रहूँ। इस वक्त जब कि यात्रा और जुदाई के सिवा कोई दूसरा रास्ता नहीं, अपनी एक लालसा तुझे बतलाना चाहता हूँ। तू स्वयं जानती है, कि मैं तुझे भूल नहीं सकता, और तू भी मुझे भूल नहीं सकती। लेकिन मेरी लालसा यह है, कि तू केवल मुझे ही याद न करना, बल्कि मेरी याद के साथ अनाथ गुल बीबी के दिल को प्रसन्न और संतुष्ट रखना।"

अदीना नानी से गुल बीबी के बारे में यह सिफारिश करते समय शर्म के मारे गड़ा जा रहा था, लेकिन और क्या करता? जल्दी ही वह यहाँ से प्रस्थान करने वाला था। ऐसी हालत में जबकि नहीं जानता, कि उसके और उसकी प्रेमिका के ऊपर क्या गुजरने वाला है, बेचारी गुल बीबी के साथ सहानुभूति और संवेदना दिखाने वाला और कौन था? उसकी सहायता करने वाली, सहारा देने वाली, देख-भाल करने वाली अगर कोई थी, तो केवल यही बुढ़िया थी। यदि उससे भी कुछ सिफारिश न करता, तो मानो, वह गुल बीबी को भूल गया। इसीलिये लाज-शरम को एक तरफ रख कर, उसने अपने अभिप्राय को प्रकट किया।

यात्रा का दिन आ गया। अदीना के फटे कपड़े भी सिल चुके थे। रास्ते के लिये कुछ रोटी और खाने की चीजें भी तैयार हो चुकी थीं। वादे के अनुसार संगीन भी आ पहुँचा। इस दिन के लिये बीबी आइशा ने खास तौर से घी के साथ पुलाव पकाया था। उन्होंने मिल कर खाना खाया, खुर्जी और थैले को गधे पर लादा। बीबी आइशा ने अदीना को अपनी गोद में दबा लिया। बेचारी के ताकत नहीं थी, कि कोई बात कहती। वह केवल अपनी आँखों से छ-छह पाँत आँसू बहाने लगी। संगीन दरवाजे के बाहर गली में एक घंटा प्रतीक्षा करता रहा। किन्तु अदीना का कहीं पता नहीं था। इसलिये उसने आवाज दी—"जल्दी कर। अगर देर हुई, तो हम आज रात को मंजिल पर न पहुँचेंगे, और फरगाना जाने वाले कारवाँ का साथ न हो सकेगा।"

अन्त में अदीना ने अपने को जोर से बीबी आइशा के गोद से अलग किया, और उससे फातिहा पढ़ने की प्रार्थना की। बीबी आइशा ने भी अपने काँपते हुए हाथ को फैला कर, अदीना के लिये रास्ता साफ, भाग्य और दौलत, आयु और पुण्य, खैर और बरकत, बिना खतरे का सफर आदि कितनी ही बातों के लिये दुआ माँगी। अदीना प्रतीक्षा करता रहा, लेकिन लम्बी-चौड़ी दुआ खत्म होने को नहीं आ रही थी। अंत में वह अपने हाथ को मुँह पर फेर, "फिर देखने तक खैरियत और खुशी के साथ सलामत रहो" कहते हुए, बाहर निकला। लेकिन दरवाजे से अकेला बाहर नहीं निकला, बल्कि उसके साथ बेचारी बीबी आइशा की जान भी निकल कर चली आई। बीबी आइशा बेचारी एकाएक मरे आदमी की तरह जमीन पर गिर पड़ी। अदीना तथा संगीन अपने गधों पर चढ़ चल पड़े।

गुल बीबी का क्या हुआ? इन दो-तीन दिनों में गुलबीबी की जो हालत हुई, उसका चित्र खींचना कलम की शक्ति से बाहर है। गुलबीबी एक अधखिली हुई कली थी, जिसके दिल में फूलने की चाह थी। वह प्रेमी के प्रस्थान से, जैसे पतझड़ मौसिम की हवा का झोंका खा, मुर्झा कर जमीन पर आ पड़ी। गुलबीबी सचमुच वह कली थी, जिसने एक क्षण के लिये वसन्त को देखा, और उसी समय पतझड़ आ धमका गया। उसके खिलते और मुरझाते देर नहीं लगी।......

अदीना संगीन के साथ चला जा रहा था, लेकिन विदाई के वक्त घर वालों की जो हालत देखी थी, उसके कारण उसमें बात करने की शक्ति नहीं रह गयी थी। कहा

जा सकता है, कि उसका होश ठिकाने नहीं था। अदीना की हालत को देख कर, संगीन भी चुप था। इस तरह दोनों दोस्त पागलों की तरह रास्ता नाप रहे थे। कुछ घड़ी बाद पहले-पहल संगीन ने एक गीत गाते हुए इस मौन को तोड़ा। संगीन के कंठ से जो शब्द और सुर निकले, मानो वह अदीना के दिल की ही ध्वनि थी, विशेषकर यह पद—

'यह कैसी बेकसी है, यहाँ किसी को नहीं देख रहा हूँ।
ऐ विचार, तेरे दोस्त, शायद मेरी पुकार सुने।
यदि मेरी पुकार पहुँचे, तो मैं जिन्दा रहूँ,
नहीं तो दुनिया में मेरी धूल किसी के पास न पहुँचे।'

संगीन ने अपनी आवाज को ऊँचा करते हुए, पर्वत-शिखरों को गूँजा दिया। अदीना में अब शक्ति नहीं रह गयी, कि अपने क्रंदन-मिश्रित आवाज को संगीन के साथ न मिलाये। वह भी हर पद करुणापूर्ण स्वर में, दिल से आँसू बहाता, संगीन के साथ गाता रहा। जब तक कि संगीन ने अपने गीत को समाप्त नहीं किया, अदीना भी उसके साथ रोते-गाते हुए, अपने दिल के दर्द को कुछ कम करने में सफल हुआ। इसके बाद उसने स्वयं भी एक गजल गानी शुरू की—

'गम व दर्द, जुदाई का दाग !
हाय, क्यों पैदा हुई, मेरे हजारों दुखों से भरी मुहब्बत ?
हरेक चीज से जुदाई होती है, किन्तु
जुदाई से किसके दिल की दोस्ती है ?
प्रिया से जुदा रह कोई कैसे जिन्दा रहता है ?
प्रियतमा से जुदाई है प्राणों से जुदाई।
जुदाई हर हालत में मुश्किल है, विशेषकर
मुहब्बत के बाद प्रिया से जुदाई।
तेरे मिलन और वियोग से तृप्ति नहीं,
ऐ इश्क, तू मेरी जान पर एक बला है।
तू ऐ मिलन, धन है, किन्तु अचिरस्थायी,
तू ऐ वियोग, दर्द है, किन्तु तेरी कोई दवा नहीं।
मैं दुखों की उपत्यका में मारा-मारा फिरूँ।
तू, ऐ प्रिय पथ-प्रदर्शक, कहाँ है ?
मेरी यही पुकार है, कि मरने के समय तक—
जुदाई से चिल्लाता, जुदाई से चिल्लाता रहूँ।'

हम इस सारे सफर का विवरण नहीं देना चाहते। वह सारा पथ दुख और रंज से भरा हुआ था। संगीन के साथ अदीना इस तरह कुछ दिन इस पहाड़ और जंगल में शोकपूर्ण गीत गाते, और जुदाई से आहें भरते, अंदीजान पहुँचा। दोनों ने अपने गधे को

सराय में बाँध दिया, और पहले जिस कारखाने में काम किया था, वहाँ गये। कुर्बान अली सरदार को देख कर, उन्होंने नौकरी के लिये नाम लिखाया। कपास की फसल और कारखाने के काम का समय भी आ चुका था। कुर्बान अली ने उनसे कहा, कि "पहिली सितम्बर को जब कारखाना खुलेगा, आकर हाजिर हो जाना, नहीं तो तुम्हारी जगह किसी दूसरे को रख लिया जायेगा।"

अदीना और संगीन ने अपने गधे को बेच दिया, और कारखाना खुलने के दिन तक का समय अपने पुराने दोस्तों और देशभाइयों से मिलने में बिताया।

युनानी चिकित्सा

यह मालूम है, कि पिछले सालों काम करते हुए अदीना को बहुत तकलीफ उठानी पड़ी थी। यहाँ पर उसे जो मजूरी मिलती थी, उससे वह कभी पेट भर रोटी नहीं खा सका। सोने के लिये उसके पास जगह नहीं थी। इस मेहनत-मशक्कत का जो तजर्बा उसे हुआ था, उसके कारण अदीना ने निश्चय किया था, कि अब वह फिर कारखाने में काम नहीं करेगा, और कोई दूसरा काम ढूँढ़ेगा। लेकिन अब वहाँ फरवरी-क्रांति हो चुकी थी। मालिक की जबान अब पहिले की तरह तेज नहीं चलती थी, और उसका अभिमान भी कुछ टूट चुका था। अदीना ने सोचा, कि अब कारखाने का हरेक काम मजूरों के अनुकूल होगा, और उन्हें आराम से रहने का मौका मिलेगा।

अदीना के ऐसा ख्याल करने का कारण था। सारे जलूस, उत्सव, ताली पिटाई जो फरवरी-क्रांति के समय हुई थी, उसके करने वाले साधारण लोग थे। सबके विचार इसी तरह के थे, यद्यपि ये विचार बेबुनियाद थे। बादशाह जरूर तख्त से उतार दिया गया था, लेकिन पूँजीपतियों, की हुकूमत चलाने के लिये पहिले ही-जैसे जालिम दूसरे लोग आ गये थे। जैसे जार के जमाने में हुकूमत पूँजीपतियों, बड़े-बड़े जमींदारों और कारखाने वालों के इशारे पर नाचती थी, उसी तरह फरवरी-क्रांति के बाद भी असली शासक पूँजीपति और कारखानेदार ही थे। पूँजीपतियों का जिसमें लाभ था, वही बात हाकिम करते, चाहे उसमें मजदूरों को कितना ही नुकसान क्यों न होता हो। पूँजीपति क्यों चाहते, कि उनका खीसा खाली हो, और भूखे मजदूरों का पेट भरे ? मजूरों के नेता इसे खूब जानते थे, और इस बात की कोशिश में थे, कि किस तरह पूँजीपतियों की शक्ति को तोड़ा जाय। लेकिन अदीना की तरह बहुत-से मजदूर थे, जो पढ़े-लिखे नहीं थे, न जिनके पास कुछ ज्ञान था, और वे इस बात को समझ नहीं पाते थे, न उसका अनुसरण कर सकते थे।

बड़ी आशा के साथ अदीना कारखाने में दाखिल हुआ था, लेकिन दो-तीन दिन के बाद ही उसने देखा, कि मालिक का वही रोब-दाब और डाँट-फटकार अब भी है, और मजूर पारसाल तथा परियार साल की भाँति ही रक्त के आँसू बहा रहे हैं। यदि अन्तर है, तो केवल नाम और उपाधि में ही। मुसलमान मजूरों की अब कमेटी कायम हो गयी है, लेकिन उसका अध्यक्ष और हर्ता-कर्ता वही कुर्बान अली सरदार है। मालिक भी वही परसाल वाला है। अन्तर केवल इतना ही है, कि पहिले अर्जी देने वक्त जहाँ उसे 'जनाब मालिक' लिखना पड़ता था, वहाँ अब 'माननीय नागरिक' लिखना पड़ता है। दूसरे काम भी पहिले ही की भाँति चल रहे हैं।

अदीना अपने घर से निकला था अपनी प्रियतमा गुल बीबी को अपनी बनाने के लिये। उसका इरादा था, कि फरगाना चलकर कारखाने में काम कर कुछ पैसा जमा करके भोज के लिये आवश्यक चीजों को जमा करेगा, फिर देश लौट कर अपनी प्रिया के साथ खुशी से जिन्दगी बसर करेगा, लेकिन जब कारखाने की यह हालत उसने देखी, तो उसकी सारी आशाओं पर पानी फिर गया। उसका शरीर शिथिल हो गया, उसके दिल में मुर्दनी छा गयी। अन्त में वह बीमार पड़ गया।

बीमारी के दूसरे दिन कुर्बान अली सरदार ने मुसलमान मजूर कमेटी के नाम से उसे कारखाने के काम से छुड़ा कर बाहर कर दिया। इस जुल्म के खिलाफ किसी को आवाज उठाने की हिम्मत नहीं हुई। अदीना की बीमारी बढ़ती गई। कारखाने से निकाले जाने के बाद संगीन उसे एक सराय की कोठरी में ले गया, जिसका सरायबान एक ताजिक था। वहाँ कुछ दिनों तक वह पड़ा रहा, लेकिन उसकी हालत और बुरी होती गयी। सरायबान बेचारे को बड़ी सहानुभूति थी। वह किसी दुआ पढ़ने वाले को बुला लाया, जिसमें कि वह अपनी दुआ से अदीना को अच्छा कर दे। इस दुआख्वान की दुआ से सरायबान को लाभ हुआ था। लेकिन अदीना की बीमारी पर उसका कोई असर नहीं पड़ा। इसके बाद एक स्थानीय हकीम को वह बुला लाया।

हकीम ने "बिसमिल्ला, बिसमिल्ला" कहते, सरायबान की कोठरी में आ, बीमार के सामने बैठ, एक लम्बी दुआ पढ़ कर दम फूंकी, फिर सरायबान की ओर नजर करके पूछा—"क्यों, ऊका (आका), क्या खिदमत है?"

सरायबान ने लेटे हुए अदीना की ओर इशारा करके कहा—"यह हमारा भाई कुछ दिनों से बीमार है। एक दुआ पढ़ने वाले को बुला कर दुआ करवायी, किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। अब मेरी आशा पहिले खुदा पर फिर आपके ऊपर है। शायद आपके चरणों की कृपा से यह अच्छा हो जाय। बेचारा परदेशी जवान है। जो कुछ सेवा होगी, मैं करूँगा। इसका तरुण जीवन है। यह चङ्गा हो जाय, और मैं भी पुण्य का भागी होऊँ।"

हकीम ने कहा—"दुआ पढ़ना भी मैं जानता हूँ। तुमने बेकार ही पैसा बरबाद किया। आजकल के दुआ पढ़ने वाले मूर्ख होने से उसे पढ़ना नहीं जानते। दुवाओं को वह ताबीज पर खोद कर या कागज पर लिख कर देते हैं, जिससे कोई लाभ नहीं होता, क्योंकि न उनके पीर (गुरू) होते हैं, न उस्ताद। फिर उनकी दुआ से कैसे लाभ हो सकता है? हम अल्लाह की कृपा से अक्षर जानते हैं, पढ़े-लिखे हैं, अपने पिता स्वर्गीय ईशान (गुरू) हकीम कलाँ से फातेहा भी सीखा है। पीछे खुदा की मेहरबानी से हज के लिये जाते हुए कश्मीर नामक शहर में पहुँचे। वहाँ के दुआ पढ़ने वाले बड़े वली-अल्लाह (सिद्ध) होते हैं। उनसे दुआ सीखी और फातेहा ग्रहण किया। वहाँ से दुआ की एक किताब भी लाये हैं, जिसे कि हमारे कश्मीरी गुरू ने दुनिया में आँख मूँदते वक्त मुझे दिया था।......

सरायबान ने इस लम्बे-चौड़े व्याख्यान का अन्त न देख, ऊब कर, बीच में ही बात काटते हुए कहा—"अच्छा, तकसीर (माफ हो), इस वक्त कृपा करके बीमार को देखिये।"

हकीम ने सरायबान की ओर अपना हाथ बढ़ा कर, कहा—"कनी, अपने हाथ को दीजिये। मैं आपकी नजम (नब्ज) देखूँ।"

"नहीं, तकसीर, मैं बीमार नहीं हूँ। यह मेरा ऊका (आका) बीमार है।" कहते हुए सरायबान ने दुबारा अदीना की ओर संकेत किया।

हकीम ने 'अच्छा, अच्छा" कहते, अदीना की कलाई को अपने हाथ में ले, जैसे शेख लोग हाथ पकड़ समाधि में बैठते हैं, उसी तरह अपनी आँखों को मूँद, सिर को झुका लिया। थोड़ी देर बाद आँख खोल कर, अदीना के हाथ को छोड़, अपने हाथ को खींच कर, बड़े इत्मीनान के साथ, मानो वह बीमार की भीतरी-बाहरी सभी बीमारियों को जान गया है, कहा—"कोई डर नहीं है। इस बच्चे को कोई खतरनाक बीमारी नहीं है। केवल इसका पेट खराब है, और हड्डियों के जोड़ में थोड़ा वात पैदा हो गया है। हकीम लुकमान के चिकित्सा-विज्ञान के अनुसार इसे थोड़ी-सी दवा पिलाता हूँ। सब अच्छा हो जायगा।"

सरायबान ने हकीम को आने के लिये दो तंका और लुकमानी दवा के लिये दो तंका देकर, जल्दी ही दवा भेजने के लिये कहा।

हकीम फिर एक बार बीमार और सरायबान के लिये दुआ पढ़ कर, घर से बाहर चला गया। फिर एक घड़ी बाद पानी-जैसी एक बड़ी कड़वी दवा लाकर, "बिस-मिल्लाह, बिसमिल्लाह" कहते हुए अदीना को पिलायी। फिर खुद भी दवा के प्रभाव को बढ़ाने के लिये अपनी तस्बीह (माला) लेकर, कुछ बुदबुदाता बैठा रहा।

दो घड़ी बाद बीमार को पाखाना लगा। अदीना सरायबान की सहायता से पाखाने गया। लेकिन दवा ने तो जुलाब कर दिया था। जब अदीना पाखाने से लौटता,

बड़ी आशा के साथ अदीना कारखाने में दाखिल हुआ था, लेकिन दो-तीन दिन के बाद ही उसने देखा, कि मालिक का वही रोब-दाब और डाँट-फटकार अब भी है, और मजूर पारसाल तथा परियार साल की भाँति ही रक्त के आँसू बहा रहे हैं। यदि अन्तर है, तो केवल नाम और उपाधि में ही। मुसलमान मजूरों की अब कमेटी कायम हो गयी है, लेकिन उसका अध्यक्ष और हर्ता-कर्ता वही कुर्बान अली सरदार है। मालिक भी वही परसाल वाला है। अन्तर केवल इतना ही है, कि पहिले अर्जी देने वक्त जहाँ उसे 'जनाब मालिक' लिखना पड़ता था, वहाँ अब 'माननीय नागरिक' लिखना पड़ता है। दूसरे काम भी पहिले ही की भाँति चल रहे हैं।

अदीना अपने घर से निकला था अपनी प्रियतमा गुल बीबी को अपनी बनाने के लिये। उसका इरादा था, कि फरगाना चलकर कारखाने में काम कर कुछ पैसा जमा करके भोज के लिये आवश्यक चीजों को जमा करेगा, फिर देश लौट कर अपनी प्रिया के साथ खुशी से जिन्दगी बसर करेगा, लेकिन जब कारखाने की यह हालत उसने देखी, तो उसकी सारी आशाओं पर पानी फिर गया। उसका शरीर शिथिल हो गया, उसके दिल में मुर्दनी छा गयी। अन्त में वह बीमार पड़ गया।

बीमारी के दूसरे दिन कुर्बान अली सरदार ने मुसलमान मजूर कमेटी के नाम से उसे कारखाने के काम से छुड़ा कर बाहर कर दिया। इस जुल्म के खिलाफ किसी को आवाज उठाने की हिम्मत नहीं हुई। अदीना की बीमारी बढ़ती गई। कारखाने से निकाले जाने के बाद संगीन उसे एक सराय की कोठरी में ले गया, जिसका सरायबान एक ताजिक था। वहाँ कुछ दिनों तक वह पड़ा रहा, लेकिन उसकी हालत और बुरी होती गयी। सरायबान बेचारे को बड़ी सहानुभूति थी। वह किसी दुआ पढ़ने वाले को बुला लाया, जिसमें कि वह अपनी दुआ से अदीना को अच्छा कर दे। इस दुआख्वान की दुआ से सरायबान को लाभ हुआ था। लेकिन अदीना की बीमारी पर उसका कोई असर नहीं पड़ा। इसके बाद एक स्थानीय हकीम को वह बुला लाया।

हकीम ने ''बिसमिल्ला, बिसमिल्ला'' कहते, सरायबान की कोठरी में आ, बीमार के सामने बैठ, एक लम्बी दुआ पढ़ कर दम फूँकी, फिर सरायबान की ओर नजर करके पूछा--''क्यों, ऊका (आका), क्या खिदमत है ?''

सरायबान ने लेटे हुए अदीना की ओर इशारा करके कहा--''यह हमारा भाई कुछ दिनों से बीमार है। एक दुआ पढ़ने वाले को बुला कर दुआ करवायी, किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। अब मेरी आशा पहिले खुदा पर फिर आपके ऊपर है। शायद आपके चरणों की कृपा से यह अच्छा हो जाय। बेचारा परदेशी जवान है। जो कुछ सेवा होगी, मैं करूँगा। इसका तरुण जीवन है। यह चङ्गा हो जाय, और मैं भी पुण्य का भागी होऊँ।''

हकीम ने कहा--''दुआ पढ़ना भी मैं जानता हूँ। तुमने बेकार ही पैसा बरबाद किया। आजकल के दुआ पढ़ने वाले मूर्ख होने से उसे पढ़ना नहीं जानते। दुवाओं को वह ताबीज पर खोद कर या कागज पर लिख कर देते हैं, जिससे कोई लाभ नहीं होता, क्योंकि न उनके पीर (गुरू) होते हैं, न उस्ताद। फिर उनकी दुआ से कैसे लाभ हो सकता है ? हम अल्लाह की कृपा से अक्षर जानते हैं, पढ़े-लिखे हैं, अपने पिता स्वर्गीय ईशान (गुरू) हकीम कलाँ से फातेहा भी सीखा है। पीछे खुदा की मेहरबानी से हज के लिये जाते हुए कश्मीर नामक शहर में पहुँचे। वहाँ के दुआ पढ़ने वाले बड़े वली-अल्लाह (सिद्ध) होते हैं। उनसे दुआ सीखी और फातेहा ग्रहण किया। वहाँ से दुआ की एक किताब भी लाये हैं, जिसे कि हमारे कश्मीरी गुरू ने दुनिया में आँख मूँदते वक्त मुझे दिया था।......

सरायबान ने इस लम्बे-चौड़े व्याख्यान का अन्त न देख, ऊब कर, बीच में ही बात काटते हुए कहा--''अच्छा, तकसीर (माफ हो), इस वक्त कृपा करके बीमार को देखिये।''

हकीम ने सरायबान की ओर अपना हाथ बढ़ा कर, कहा—''कनी, अपने हाथ को दीजिये। मैं आपकी नजम (नब्ज) देखूँ।''

''नहीं, तकसीर, मैं बीमार नहीं हूँ। यह मेरा ऊका (आका) बीमार है।'' कहते हुए सरायबान ने दुबारा अदीना की ओर संकेत किया।

हकीम ने 'अच्छा, अच्छा'' कहते, अदीना की कलाई को अपने हाथ में ले, जैसे शेख लोग हाथ पकड़ समाधि में बैठते हैं, उसी तरह अपनी आँखों को मूँद, सिर को झुका लिया। थोड़ी देर बाद आँख खोल कर, अदीना के हाथ को छोड़, अपने हाथ को खींच कर, बड़े इत्मीनान के साथ, मानो वह बीमार की भीतरी-बाहरी सभी बीमारियों को जान गया है, कहा--''कोई डर नहीं है। इस बच्चे को कोई खतरनाक बीमारी नहीं है। केवल इसका पेट खराब है, और हड्डियों के जोड़ में थोड़ा वात पैदा हो गया है। हकीम लुकमान के चिकित्सा-विज्ञान के अनुसार इसे थोड़ी-सी दवा पिलाता हूँ। सब अच्छा हो जायगा।''

सरायबान ने हकीम को आने के लिये दो तंका और लुकमानी दवा के लिये दो तंका देकर, जल्दी ही दवा भेजने के लिये कहा।

हकीम फिर एक बार बीमार और सरायबान के लिये दुआ पढ़ कर, घर से बाहर चला गया। फिर एक घड़ी बाद पानी-जैसी एक बड़ी कड़वी दवा लाकर, ''बिस-मिल्लाह, बिसमिल्लाह'' कहते हुए अदीना को पिलायी। फिर खुद भी दवा के प्रभाव को बढ़ाने के लिये अपनी तस्बीह (माला) लेकर, कुछ बुदबुदाता बैठा रहा।

दो घड़ी बाद बीमार को पाखाना लगा। अदीना सरायबान की सहायता से पाखाने गया। लेकिन दवा ने तो जुलाब कर दिया था। जब अदीना पाखाने से लौटता,

तो हकीम यह कहते हुए प्रसन्नता प्रकट करता, "बीमारी का दसवाँ हिस्सा चला गया, नवाँ हिस्सा चला गया, आठवाँ हिस्सा चला गया।..." वह खुद ही खुश नहीं होता था, बल्कि अदीना और सरायबान को भी प्रसन्न करने की कोशिश करता था। हकीम की बात सुन कर, सरायबान को विश्वास होने लगा, और उसने भी प्रसन्नता प्रकट की। लेकिन अदीना के पास प्रसन्नता प्रकट करने के लिये शक्ति नहीं थी। धीरे-धीरे पेचिश जोर पकड़ती गयी और बीमार चिल्लाने लगा। हकीम के दुआ बुदबुदाने से कोई लाभ न देख, अंत में जोर-जोर से "योशाफी, योशाफी" कह कर मारने लगा।

पाखाने में जोर की आवाज सुन, हकीम ने इसे भी अपनी दुआ का असर समझ कर कहा—"या मुर्सल-र्-रियाह (ओ हवाओं के भेजनेवाले)!" और अपनी दुआ-पाठ को और तेजी से करना शुरू किया। वह बहुत प्रसन्न था, कि बीमार पर अच्छा प्रभाव पड़ रहा है। लेकिन अदीना के ऊपर क्या गुजर रही थी, इसे वही जानता था। हाँ, पेट के भीतर अब कुछ नहीं रह गया था, इसलिये दस्त आना बंद हो गया। हकीम "सारी बीमारी दूर हो गयी। कल आकर फिर देखूँगा" कह कर चला गया। लेकिन अदीना में हिलने-डोलने की भी ताकत नहीं रह गयी थी। उसे भूख भी नहीं थी। हकीम के कहे अनुसार सरायबान ने भेड़ के सिर के गोश्त का शोरबा तैयार किया था। उसमें से अदीना ने थोड़ा-सा पिया। लेकिन तुरन्त ही दर्द के मारे वह मुर्दे की तरह गिर पड़ा। साँसों के सिवा बीमार में जीवन का कोई चिह्न नहीं रह गया था। बाद में हकीम के आने की फीस एक तंका और दवा का काम दाम एक तंका करदिया गया। वह एक हफ्ते तक रोज आता, और माजूने-तुर्बुत, जवारिशी-जीरा, गुलकन्द, शर्बत-बनफशा, शर्बत-निलोफर और जाने क्या-क्या लाकर बीमार को खिला कर चला जाता।

अंत में हकीम से बीमार और सरायबान दोनों ऊब गये। बीमार दिन-पर-दिन कमजोर होता जाता था। बीमारी बढ़ती जा रही थी। इसलिये इस खर्च को फजूल समझ कर, हकीम से सरायबान ने कहा—"दवा-दारू तो एक हीला है। यदि इसकी उम्र बाकी है, तो इसी तरह तन्दुरुस्त हो जायेगा। आपने बहुत कमजोर उपचार किया, और कम पैसा लिया। सलामत रहे! अब न आने से भी काम चल सकता है।"

हकीम ने कहा—"अच्छा-अच्छा। मेरी दवाओं के बारे में दिल में शक न पैदा करना। यदि शक करोगे, तो लाभ की जगह हानि पहुँचेगी। जिन दवाओं को मैंने दिया है, उसे 'सनाय-मक्का' कहते हैं। इसे स्वर्गीय पिता ईशान हकीम कलाँ ने मक्का की हज की यात्रा में प्राप्त किया था, और स्वयं अपने हाथों से चुरा लाये थे। माजून तथा शर्बत, जो मैंने दिये, वह उन जड़ी-बूटियों से तैयार किये गये हैं, जिन्हें मैं हज से लौटते वक्त हिन्दुस्तान के नामी शहर में पहुँचने पर वहाँ के सरनदीप नामक मजार से खोद कर लाया था। वहीं पर हजरत आदम की कब्र है। सुलेमान शेख अफगान भी सदा हरे माजून और शर्बतों को इस्तेमाल करते हैं। सुलेमान शेख छोटे आदमी नहीं हैं। उन्होंने

अभ्यास करके 'कसफे-कबूर' (कब्र खोलना) का दर्जा हासिल किया है। मैं यूनानी शास्त्र के अनुसार चिकित्सा करता हूँ। मेरे गुरु हकीम लुकमान तथा उनके शागिर्द हकीम सफलातुन और हकीम सुकरात हैं। ये सारे पवित्र मुसलमान थे। उन्होंने हिकमत (चिकित्सा) की विद्या को गैब से सीखा था, हम काफिर डाक्टरों की तरह जैसी-तैसी दवाइयाँ नहीं देते-फिरते।..."

सरायबान ने देखा, कि बात खत्म होने को नहीं आ रही है। उसने कहा—"अच्छा, तकसीर, अब आप जा सकते हैं, जिसमें बीमार थोड़ा आराम ले सके। मुझे भी आज काम करना है।" कह, हाथ को आगे करके, उसने हकीम से छुट्टी लेनी चाही।

हकीम अपनी आँखों को सरायबान के हाथ और जेब से हटाये बिना, "अच्छा-अच्छा" कह, बाहर आया। फिर सिर को दरवाजे के भीतर करके, बोला—"ऊका (आका), एक बात की याद नहीं रही। शायद फिर कभी इस ऊका या खुद तुम्हें कोई बजमारी हो, तो मुझे न भूलना।"

सरायबान ने हकीम की तरफ बिना निगाह किये, मुँह बिचका कर ललाट पर शिकन लाके, कहा—"भगवान रक्षा करे!"

हकीम सराय से निकल कर, चला गया।

अचानक-अकारणबन्धु

हकीम के हाथ से छूटने के एक सप्ताह बाद अदीना को फिर कुछ भूख लगने लगी। अब वह पहिले से बेहतर था, किन्तु तो भी अभी पाचन-शक्ति नहीं थी, और न शरीर में ताकत ही थी। विशेषकर खाँसी बहुत बढ़ गयी थी, जिससे उसे बहुत तकलीफ थी। संगीन-जैसे उसके दोस्तों को बड़ा डर होने लगा।

अंदीजान ने ताजिकों में से कुछ कारखाने में काम करते थे, कुछ हम्माली करते थे, कितने ही चौकीदारी करते थे, और कुछ सरायबानी (होटल) या किसी की नौकरी में लगे थे। उन्होंने संगीन से अदीना की हालत सुनी, तो आपस में सलाह करके निश्चय किया, कि हवा बदलने के लिये उसे ताशकंद भेजा जाय। खर्च के लिए आपस में उन्होंने थोड़ा-थोड़ा चंदा भी कर दिया। दूसरे दिन उनमें से कुछ संगीन के साथ आ कर, अदीना को रेल-स्टेशन पर ले गये, और एक टिकट ताशकंद का खरीद कर, अंदीजान-ताशकंद की गाड़ी में उसे बैठा दिया, जिसमें कि उसे रास्ते में गाड़ी बदलने की जरूरत न पड़े। बाकी बचे हुए पैसों को अदीना को दे कर, उन्होंने "खुश रहो" कहते हुए विदाई ली।

एक रात-दिन चलने के बाद अदीना ताशकंद पहुँचा। ट्रेन से उतरा। लेकिन कहाँ जाना है, यह उसे मालूम नहीं था। वह किसी आदमी को वहाँ न पहचानता था, न कोई जगह उसे मालूम थी। यात्रियों के साथ हो, स्टेशन से बाहर निकल, ट्राम ठहरने की जगह पर पहुँचा। मुसाफिरों में से कुछ ट्राम द्वारा रवाना हुए, और कितने ही पैदल ही शहर की ओर चल पड़े। अदीना आशा-भरी दृष्टि से जानेवालों की ओर देखता रहा। लेकिन किसी ने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया। किसी ने नहीं समझा, कि यह बेयार-मददगार, कमजोर बीमार आदमी सहायता की इच्छा रखता है। अन्त में स्टेशन के कुलियों के सिवा और कोई वहाँ नहीं रह गया। वे भी नये मुसाफिरों के असबाब को लेने के लिये स्टेशन में चले गये, और अपने काम में लग गये। उन्हें अदीना नाम के बेचारे नौजवान की कोई खबर नहीं रह गयी। जब अदीना ने देखा, कि कोई उसकी सहायता और पथ-प्रदर्शन करनेवाला नहीं है, तो वह धीरे-धीरे ट्राम की सड़क को पार कर, दूसरी ओर के फुटपाथ पर आया, जहाँ कुछ लंबे वृक्ष खड़े थे। वहीं पेड़ के नीचे वह लेट गया। कमजोरी के कारण वह बेहोश हो गया, या थकावट से नींद ने आ दबाया। जो हो, इस तरह वह कई घंटे पड़ा रहा। जब उसने आँख खोली, तो देखा, कि शाम नजदीक है। अब भी ट्राम 'जरंग-जरंग' करती इधर से उधर चक्कर काट रही थी। अब भी किसी की नजर अदीना की ओर नहीं पड़ी। सब अपने-अपने रास्ते चले जा रहे थे। यह शाम वह पहिली शाम थी, जब कि अदीना बेघरबार का नहीं जानता था, कि उसे कहाँ जाना है, न उसके पास वहाँ से उठने की ताकत थी। यह शाम गरीब अदीना के लिये सचमुच शामे-गरीबाँ थी।

"क्या ताजिक है?"

अदीना की आँखों में सारी दुनिया अँधेरी हो चुकी थी। उसे कोई आशा न रह गयी थी। इसी समय दूसरी भाषा वाले देश में अपनी भाषा में बोले गये इन शब्दों को सुन कर, उसका दिल खिल उठा। उसने अपने सिर के पास एक जवान को खड़े देखा।

"हाँ, एक अभागा ताजिक हूँ," कह कर, उसने जवाब दिया।

"यहाँ क्या काम करता है?"

"नहीं जानता।"

"तेरा निवास-स्थान कहाँ है?"

"यही जगह है।"

"यहाँ निवास-स्थान नहीं हो सकता। रात को यहाँ सोना भी संभव नहीं है। पुलिसवाले रहने नहीं देंगे। कहीं दूसरी जगह तुझे जाना चाहिये।"

"मैं कोई जगह नहीं जानता, न किसी को पहचानता हूँ।"

"तो क्या इस शहर में कभी नहीं आया? अच्छा, आ मेरे साथ।"

"उठने की भी मुझमें ताकत नहीं है।"

जिस जवान ने अदीना से बात की थी, वह उसे उठा कर बगल में दबाये, ट्राम-गाड़ी पर चढ़ा, अपने साथ ले चला।

जवान ने अदीना को वहाँ पड़ा देख कर, सिर्फ एक नजर भर उसे देख लेना चाहा था। लेकिन उसकी उस हालत को देख कर, सहायता करना आवश्यक समझा, क्योंकि वह भी उसी की तरह एक ताजिक था। जवान का नाम शाह मिर्जा था। वह कुछ सालों से नया-ताशकंद शहर के एक समावार-खाने (चायखाने) में काम करता था। इस समय समावार-खाने में कम फायदा देख कर, मालिक ताशकंद और अकतेप्पा के बीच के स्टेशनों में फेरी करने लगा था। शाह-मिर्जा अपने मालिकों को ट्रेन पर सवार कराने आया था। लौटते वक्त उसकी नजर एकाएक अदीना पर पड़ी, और उसकी शकल-सूरत से मालूम हुआ, कि वह ताजिक है। इसलिये देशवासी की मुहब्बत से प्रेरित होकर, तथा दोनों मजदूर हैं, इस ख्याल से भी वह हाल पूछने के लिये मजबूर हुआ। इस सवाल-जवाब का परिणाम यह हुआ, कि उसने अदीना को ले जा कर, अपने समावारखाने में जगह दी।

शाह मिर्जा अदीना की देख-भाल करने लगा। खासकर उसके लिये एक प्याला शोरबा पका कर दिया। उसके सोने के लिये चारपाई पर बिछौना और तकिया लगा दिया। यद्यपि यात्रा के कारण अदीना बहुत थका हुआ था, और उसकी बीमारी की हालत पहिले से बदतर हो गयी थी, तथापि शोरबा पीने के बाद उसने अपनी हालत कुछ अच्छी देखी। उस निराशा की हालत में एक अपरिचित आदमी की इस दया को अदीना सारे जीवन भर भूल नहीं सकता था। उसने किसी को ऐसा करते नहीं देखा था, इसलिये उसकी खुशी असाधारण थी। मन की इस अवस्था ने भी उसके स्वास्थ्य के लिये लाभ पहुँचाया। आज रात को उसे जितने आराम से नींद आयी, वैसी नींद उसे कभी नहीं आई थी। वह उस रात को खूब अच्छी तरह सोया। सबेरे उठते वक्त उसे अपने शरीर में शक्ति मालूम हुई, और बिना किसी के सहारे ही चारपाई से उठ कर, उसने हाथ-मुँह धोया।

शाह मिर्जा समावार के पास बैठा, चायनिक (केतली) को कपड़े से मल कर साफ कर रहा था। अदीना को उसने अपने नजदीक जगह दे कर, हाल-चाल पूछे, प्याले में चाय और तश्तरी में रोटी रख के, उसे पीने के लिये कहा। फिर पूछा—"तेरा ताशकंद आने का क्यों इरादा हुआ?"

अदीना ने अपनी सारी जीवनी तो नहीं बतलाई, लेकिन बीमारी तथा कारखाने से निकाले जाने की कथा, दुआ पढ़ने वाले और हकीम की बात एक-एक करके कह सुनाई। फिर यह भी बतलाया, कि देश-भाइयों ने सलाह करके हवा बदलने तथा स्वास्थ्य-लाभ के लिये उसे ताशकंद भेजा।

शाह मिर्जा ने कहा—"भले आया। ताशकंद बड़ा शहर है। स्वस्थ हो जाने

पर यहाँ काम भी मिल सकता है। कारखाना छोड़ने की चिंता मत कर। यहाँ दवा-दारू करना भी आसान है, क्योंकि यहाँ अच्छे-अच्छे डाक्टर हैं। उनमें से एक मेरा परिचित है। आज तुझे ले चल कर उसे दिखलाऊँगा। आशा है, कि उसकी दवा से तुझे फायदा होगा। जब तक तू अच्छा न हो जाय, तब तक यह घर तेरा है। किसी बात की चिंता मत कर। आराम से यहाँ रह।"

अदीना सारी उम्र किसी डाक्टर के पास नहीं गया था, और न जाने की इच्छा रखता था। उसे विश्वास था, कि डाक्टर की दवा खानेवाले बीमारों में से बहुतेरे मर जाते हैं। यह विश्वास अदीना को कारखाने में पैदा हुआ था। कारखाने के मजूर जब टायफायड तथा दूसरी कठोर बीमारियों में फँसते, तो पहिले दुआ पढ़ने वालों तथा ऐरे-गैरे हकीमों की दवाई करते-फिरते। जब बचने की आशा न रह जाती, तब उनके साथी डाक्टरों को दिखलाते। भला ऐसी हालत में डाक्टर की दवा क्या फायदा करती? बीमार के मर जाने पर लोग यही कहते, कि डाक्टर की दवा बीमारी को अच्छा नहीं करती, बल्कि मौत को नजदीक लाती है। डाक्टर का इसमें कसूर नहीं था। वस्तुतः मरने का कारण यही होता था, कि बीमार को दवाई करने का समय बिता कर डाक्टर के पास लाया जाता था। अदीना को डाक्टर के खिलाफ विश्वास था, लेकिन जब शाह मिर्जा ने जोर दिया, तो उसने जवाब दिया—"बहुत अच्छा। लेकिन मैं डाक्टर से डरता हूँ। अगर मेहरबानी करके हकीम की दवा कराओ, तो अच्छा हो। इसके लिये किसी मुसलमान हकीम को दिखलायें। कहते हैं, कि ताशकंद बहुत बड़ा शहर है। शायद यहाँ बड़े-बड़े होशियार हकीम मिल जायें।"

शाह मिर्जा ने उत्तर दिया—"तू भूल मत कर। मैं भी पहिले तेरी ही तरह डाक्टरों को बुरा समझता था, लेकिन इस कारखाने में आने के बाद मैंने देखा, कि डाक्टर कितने होशियार हैं, और मानव-पुत्रों को कितना लाभ पहुँचाते हैं। प्रतिवर्ष बुखारा, समरकन्द, फरगाना तथा तुर्किस्तान के दूसरे इलाकों और शहरों से हजारों बीमार ताशकंद आते हैं। कितने ही सिर्फ डाक्टर को दिखलाने के लिए आते हैं। बीमारों में से कितने ही हमारे समावार-खाने में ठहरते हैं। उनमें से कितनों को डाक्टर के पास ले जाने का काम मैं करता हूँ। मैंने अपनी आँखों देखा है, कि डाक्टर की दवा से अधिकांश रोगी तन्दुरुस्त हो गये। उन रोगियों से मैंने सुना, कि उन्होंने कितने ही दुआ पढ़ने वालों और हकीमों के पीछे बहुत पैसा खर्च किया, किन्तु सब बेकार गया। बीमारी हटने का कोई रास्ता न देख कर, वह डाक्टर के पास आये। हाँ, ठीक है, उनमें से किसी-किसी का डाक्टर की दवा से फायदा नहीं हुआ, या उनमें से कुछ डाक्टर को दिखलाने के बाद मर गये; लेकिन यह इस कारण नहीं हुआ, कि डाक्टर ने दवा नहीं की, या दवा ने नुकसान पहुँचाया, बल्कि इसका कारण यही था, कि वह वक्त पर डाक्टर के पास नहीं आये। इसलिये उन ख्यालों को दिल से निकाल दे। तैयार हो जा। आज दोपहर बाद मैं तुझे डाक्टर के पास ले चलूँगा।"

शाह मिर्जा की दलीलों को सुन कर, अदीना को और कुछ कहने की हिम्मत नहीं हुई, और उसने जीभ दबा कर साथ चलना स्वीकार किया। तो भी अभी उसका दिल चंचल था। अब भी वह डरता था, कि डाक्टर की दवा खाने से मर जायगा, और गुल बीबी के मिलने से सदा के लिए महरूम हो जायेगा। फिर उसने सोचा, 'शाह मिर्जा को आज तक मैं नहीं जानता था, फिर कैसे कह सकता हूँ, कि वह मेरा दुश्मन है? जो मेहरबानी उसने मेरे साथ दिखलायी है, उससे मालूम होता है कि वह भला आदमी है। भला आदमी कभी किसी को खतरनाक रास्ते में नहीं ले जाता। इसलिये हो सकता है, कि डाक्टर के बारे में मेरा ख्याल गलत हो। शायद उसकी सहायता और पथ-प्रदर्शन से मैं बीमारी से छूट जाऊँ।'

इस तरह सोचने के बाद, दिल को मजबूत करके, अदीना ने फिर कहा—"अच्छा, डाक्टर के पास चलूँगा। जिस वक्त तू चाहे, उसी वक्त मैं चलने के लिये तैयार हूँ।"

डॉक्टर

डाक्टर-खाने में बीमारों की पाँत में शाह मिर्जा के साथ अदीना भी बैठा हुआ था। डाक्टर ने एक बीमार को देख कर, खिड़की से सिर बाहर निकाल, बीमारों में से एक-एक के ऊपर नजर दौड़ाई। जब उसने वहाँ शाह मिर्जा को देखा, तो उसे बारी से पहिले ही भीतर बुला लिया। शाह मिर्जा अदीना को साथ लेकर भीतर चला। और वहाँ बैठे रोगियों ने "यह कैसी बेतरतीबी है। डाक्टर अपने पसन्द के लोगों को बिना बारी ही के बुला लेता है," कह कर, कुर-कुर करना शुरू किया।

डाक्टर ने शाह मिर्जा के पीछे पुरानी पोशाक पहिने, रंग-उड़े अदीना को देख कर, कहा—"क्या यही तेरा बीमार है?"

शाह मिर्जा ने डाक्टर को खातिरजमा कराते हुए, जवाब दिया—"हाँ यही है। यह बेचारा एक गरीब, बेकस आदमी है। इसकी हालत पर रहम खा कर, मैं अपने खर्चे से दवा कराने के लिए इसे लाया हूँ।"

डाक्टर शाह मिर्जा की बात को सुन कर, कुछ लज्जित होकर भी, अनसुने की तरह बीमार को देखना शुरू किया। शाह मिर्जा के सन्देह को दूर करने के लिये, अदीना के अंग-प्रत्यंग को खूब अच्छी तरह देखा। फिर मेज पर बैठ, दवा लिखते हुए, कहा—"बीमार का नाम क्या है?"

शाह मिर्जा अभी तक मेहमान का नाम भी नहीं जानता था, इसलिये अदीना की ओर मुँह करके, पूछा—"हाँ, तेरा नाम क्या है?"

"अदीना।"

इस वक्त डाक्टर को स्वयं बहुत लज्जा आयी, और उसने अपने दिल में कहा, 'एक गरीब, अनपढ़ आदमी दूसरे गरीब की हालत को देख कर इतना दयार्द्र हो जाय, जब कि वह उसका नाम तक नहीं जानता, उसकी दवा के लिये वह पैसा भी खर्च करना चाहता है और दूसरी ओर हम पढ़े-लिखे लोग हैं, जो समझते हैं, कि हम मानवता की सेवा कर रहे हैं। किन्तु बीमार को देखते समय सबसे पहिले पैसेवाले का ख्याल करते हैं, और बे पैसे वाले को दूर रखते हैं।'

डाक्टर जिस वक्त दवा का पुर्जा लिख रहा था, उस वक्त ये ख्याल उसके दिमाग में चक्कर काट रहे थे। उसने पुर्जा लिख कर, दवा खाने का ढंग बतलाया।

शाह मिर्जा ने अपनी जेब में हाथ डाला, और चाहा कि उसकी फीस दे। पर डाक्टर ने कहा—"नहीं, इसकी जरूरत नहीं है। जिसके ऊपर तुझे दया आयी है, मुझे भी उस पर दया है। बेपैसा वाले बीमारों की दवा करने में जरा भी हर्ज नहीं है। इसमें हमारा क्या पैसा खर्च होता है?" लेकिन स्वभावतः वैसी सहानुभूति न होने के कारण, उसने फिर कुछ सोच कर, कहा—"दूसरे यह भी बात है, कि तू बहुत से पैसे वाले बीमारों को मेरे पास लाता है। अगर उनके बीच एक बेपैसेवाला भी हो, तो कोई हर्ज नहीं। कहावत है, कि 'एक बोरे खर्बूजे में दो कच्चा भी।' इसी तरह यह गरीब भी पैसे-वाले बीमारों के बीच 'कच्चा' की तरह है।" कहते हुए, वह हँस पड़ा।

डाक्टर ने शाह मिर्जा को छोड़ते समय हिदायत की—"कल खाना खाने से पहिले बीमार का थोड़ा-सा थूक एक बर्तन में रखकर लाना।"

डाक्टर के कहने के मुताबिक दूसरे दिन शाह मिर्जा अदीना का थोड़ा-सा थूक ले आया। डाक्टर ने उससे कहा—"इसकी बीमारी का कारण यक्ष्मा (टी० बी०) है। मालूम होता है, कि एक साल पहिले यह इस बीमारी में फँसा। लेकिन उसने कोई दवा-दारू नहीं की, और न आवश्यक भोजन ही खाया, जिससे कि स्वास्थ्य बना रहता। यह बीमारी बहुत आगे बढ़ गयी है। अभी मुझे यही मालूम हो रहा है, पीछे थूक का रासायनिक विश्लेषण करने के बाद बात और भी साफ होगी। बेचारा बीमार ऐसी हालत में पैसे से भी तंगदस्त है। इन सब बातों के ऊपर हाल में इसने ऐसी चीज खायी है, जिसकी वजह से हालत और बुरी हो गयी है। इसकी पाचन-शक्ति चली गयी है, भूख नहीं लगती। शरीर में खून कम है। कल दवा जो मैंने लिखी थी, वह इसी कम-खूनी के लिये है। अगर दवा ने ठीक काम किया, तो उम्मीद है, कि इसकी पाचन-शक्ति ठीक हो जायेगी। लेकिन यक्ष्मा की दवा थूक को अच्छी तरह देख कर लिखूँगा।"

शाह मिर्जा ने कहा—"आपने ठीक पता लगाया। बीमार के अपने कहने से मालूम होता है, कि आने से कुछ दिन पहले अंदीजान में एक मुसलमान हकीम ने उसे जुलाब की दवा दी थी।"

"खैरियत हुई, कि वह मरा नहीं," डाक्टर ने कहा—"इस तरह के बीमार के लिये जुलाब मौत का रास्ता है, विशेषकर पुराने हकीमों की ऐसी दवाइयाँ, जिनकी एक बूँद भी पेट में पेचिश पैदा कर देती है। वह तो अच्छे, हट्टे-कट्टे आदमियों को भी पटक देती है। यही कारण है, जो बेचारा ऐसी हालत में है।"

डाक्टर ने बात समाप्त करते हुए, कहा—"जो कुछ मैंने उस बीमार के बारे में कहा, उसे उसके सामने प्रकट न कर, यह कहते हुए तसल्ली देता रह, कि 'डाक्टर कहता है, कि तुम चंगे हो जाओगे?' नहीं तो भय के मारे उसकी आयु क्षीण हो जायगी।'

दूसरे दिन शाह मिर्जा डाक्टर के पास थूक की जाँच के बारे में पूछने गया। डाक्टर ने पिछले दिन की बात दुहराते हुए, कहा—"उसके थूक ने भी मेरी बात को पुष्ट किया।" फिर उसने दवा लिख कर, हिदायत की—"उसे ऐसा भोजन मिलना चाहिये, जो सुपच हो, और शक्तिवर्धक भी। रोज उबला हुआ दूध देना, और आधा-उबला अण्डा भी। यदि हो सके, तो बीमार स्वच्छ हवा में कुछ देर टहले, और धूप में सूरज के सामने बैठे। कीमिज (घोड़ी के दूध की ताड़ी) के मौसिम में यदि यह एक-डेढ़ माह कीमिज पिये, तो उससे बहुत लाभ होगा। अगर मेरी बातों पर चलेगा, तो पूरी तरह चंगा न होने पर भी मौत के मुँह से जरूर छूट जायेगा, और जिन्दगी बढ़ी कर पायेगा। यदि ऐसा न किया, तो थोड़ी-सी बदपरहेजी से भी जिन्दगी खतरे में पड़ जायेगी। यह भी जान रख, कि इस बीमारी के बीमार की खाँसी छूतवाली होती है, और थोड़ी-सी असावधानी से भी बीमारी दूसरेको लग सकती है। इसलिये इसके प्याले, तश्तरी, चायनिक, कटोरा आदि को दूसरों के बर्तनों से अलग करके रख। खा लेने के बाद बर्तनों को उबलते पानी में धोकर कपड़े से अच्छी तरह सुखा लेना चाहिये। हो सके, तो धूप में डाल देना चाहिये। इसके थूक और बलगम के लिये अलग थूकदानी रख दे। हर रोज थूक और बलगम को जमीन में गढ़ा खोदकर दबा दे। फिर थूकदानी को गरम पानी से धोकर धूप में सुखा ले। ऐसा ध्यान रख, जिसमें इनकी चीजें दूसरों के हाथ में न जायें, और इसका किया हुआ भोजन दूसरा न खाये, नहीं तो उसको भी बीमारी पकड़ लेगी।"

अक्तूबर क्रान्ति

ताशकंद की सड़कों पर बन्दूक और मशीनगन चलने की आवाज आ रही थी। लोग हर तरफ भाग रहे थे। दुकानें बन्द थीं। दरवाजे और खिड़कियाँ गोलियों के लगने से टूटी-फूटी और सूराखों से भरी थीं। शाह डरता-काँपता, गलियों से बेरास्ते हो कर, अपनी दुकान में पहुँचा। यह स्वाभाविक ही था, कि दूसरी दुकानों और हाटों की भाँति

इस समय शाह मिर्जा का समावार-खाना भी बन्द होता। पीछे का दरवाजा खोल, उसने दुकान में आकर देखा, कि वहाँ 15–20 अपरिचित आदमी इकट्ठा हो कर बैठे हैं। उनमे से हर एक बार-बार अपनी जगह से उठ कर, हाल जानने के लिये छेदों और दरारों से बाहर सड़क की ओर देखता है। यह वह लोग थे, जिन्होंने गड़बड़ी शुरू होने के समय ही भाग कर इस दुकान में शरण ली थी।

अदीना में इतनी शक्ति और हिम्मत न थी, कि उठ कर सूराख से सड़क की ओर झाँकता, लेकिन वह अपने स्थान पर आधा उठा, तकिया के सहारे बैठा था। इसी समय अदीना की नजर शाह मिर्जा पर पड़ी, और उसने "सकुशल आ गया ? इस बलवे में तू कहाँ था ? यह क्या बात है ?" कहते, सवालों की झड़ी लगा दी।

"जरा दम लेने दे," शाह मिर्जा ने कहते हुए कुर्ते को हाथ से हिला कर, हवा देने की कोशिश की। और फिर वह कहने लगा––"मैं सालार-पुल के ऊपर था, और इस तरफ आने के लिये ट्राम की प्रतीक्षा कर रहा था। किन्तु वह न मिली। लाचार पुश्किन सड़क से हो कर पैदल ही आने लगा। इसी समय एकाएक इसक्वेर (चौरस्ता) की ओर से बन्दूक की तड़-तड़ आवाज होने लगी। मैंने समझा, कि सिपाही चाँदमारी का अभ्यास कर रहे हैं, और आगे बढ़ता गया। लेकिन जितना ही चौरस्ते के नजदीक पहुँचना जा रहा था, उतना ही बन्दूकों की आवाज और लोगों का हल्ला अधिक ऊँचा होता जा रहा था। मैं अभी तक इस बात को सैनिकों की चाँदमारी ही समझता था। चन्द कदम और आगे आने पर, मेरे सामने भागने वाले दिखाई पड़े। जैसे बिल्ली से चूहे भागते हैं, उसी तरह वह बड़े भयभीत और परेशान हो भाग रहे थे। उनमें से हर एक से "क्या बात है, क्या हुआ ?" कह कर पूछा, किन्तु किसी ने कुछ जवाब न दे, इशारे से "मैं क्या जानूँ" प्रकट किया। फिर मैं चलने लगा। इसी समय एक गोली सनसनाती हुई मेरे कान के पास से चली गई मैं "हाय मरा" कहते, जमीन पर पड़ गया, और अपने हाथों को कानों पर रख कर मलने लगा। वहाँ कुछ-कुछ गरम-सा पानी बहता मालूम हुआ। मुझे निश्चय हो गया, कि गोली लग गयी है। "हाय, मुफ्त में मारा गया" कहते, अफसोस करके छटपटाने लगा। लेकिन जब अपने हाथ को आँखों के सामने करके देखा, तो देखा कि वह पानी-जैसी चीज खून नहीं है, बल्कि मेरे शरीर का पसीना है।"

वहाँ छिपे लोगों में से एक "शाबाश, शेर ! बिना गोली खाये ही अपने को मरा समझ लिया !" कहते हुए, शाह मिर्जा की हँसी उड़ायी।

"तुम भी कैसे मैदान के शेर-मर्द हो, कि भाग कर यहाँ छिपे हो ?" कहते हुए, शाह मिर्जा ने सभी छिपने वालों पर कटाक्ष किया।

"आ बैठ। बात बतला।" अदीना ने कहा।

शाह मिर्जा ने अपनी कहानी जारी रखते हुए, कहा––"हाँ, देखा, कि खून नहीं है। भगवान को धन्यवाद दिया। फिर मैं अपनी जगह से उठा। मुझे निश्चय हो गया,

कि यह सिपाहियों का चाँदमारी का अभ्यास नहीं है, बल्कि जान देने और जान लेने का अभ्यास है। फिर मैंने सड़क का रास्ता छोड़ा, और तंग गलियों में चल पड़ा। वहाँ से हवेलियों, बागों आदि के भीतर से होता गुजरा। बाद में भी कई बार मेरे सिर पर से गोली सरसराती चली गयी, लेकिन मैं पहिले की तरह भयभीत नहीं हुआ, बल्कि दीवारों के पीछे छिपता, गोली जिधर से आ रही थी, उधर की ओर बढ़ा।"

"अच्छा, इस झगड़े का कारण क्या है ? यह बात क्या है ?"––अदीना ने फिर, अपनी बात को दुहराते हुए, पूछा।

"जैसा कि मैंने अभी बतलाया," शाह मिर्जा ने कहा––"पहिले मैंने समझा, कि सिपाही अभ्यास कर रहे हैं। फिर मालूम हुआ, कि यह कोई भारी घटना है। लेकिन यह न मालूम कर सका, कि वह है क्या।"

जिस वक्त शाह मिर्जा अदीना से आखिरी बातें कह रहा था, उसी समय एक अपरिचित आदमी दूकान के भीतर आया। उसने बात में शामिल होते हुए, कहा–– "इस गड़बड़ी का कारण मैं जानता हूँ।"

यह सुनकर, सब की नजरें उसके चेहरे पर गड़ गयीं। अदीना ने पूछा–– "अच्छा, तो क्या बात हुई !"

अपरिचित व्यक्ति ने कहा––"निकोलाई जार को हटा कर, करेंस्की खुद उसकी जगह बादशाह बना था। मजूरों और मूजिकों (गरीब किसानों) ने उसे भी हटा कर, सरकार की बागडोर अपने हाथ में ले ली है। इस समय करेन्स्की के आदमी निकोलाई के आदमियों से मिल कर, मजूरों और मूजिकों के खिलाफ खड़े हुए हैं। यही इस बखेड़े का कारण है।"

"झूठी, बेकार की बात," कह कर, एक दूसरे आदमी ने अपरिचित आदमी को मिथ्या-भाषी बतलाया।

"क्यों बेकार की बात ?" कहते, अपरिचित ने सवाल किया।

दूसरे आदमी ने कहा––"करेन्स्की ऐसा बहादुर है, कि उसने निकोलाई-जैसे बादशाह को, जो कि दुनिया के चार महान् बादशाहों में से एक है, गद्दी से उतार दिया। फिर कौन ऐसी बात हुई, कि वह मुट्ठी भर नंगे-भूखों से हार खा गया ?"

"मैं इस बात को खुद गढ़ कर नहीं कह रहा हूँ। अपने दोस्त से मैंने ऐसा ही सुना है। वह कई साल से पियान बाजार में फेरी करता है। यद्यपि वह पढ़ा-लिखा नहीं है, तथापि रूसी भाषा जनता है, और उसे कितने ही कायदा-कानून का भी ज्ञान है। उसी से सुन कर मैं यह बात बतला रहा हूँ।" कह कर, अपरिचित ने अपनी बात का समर्थन किया।

अपरिचित आदमी राजनीति और राज-काज की बातों से बिलकुल अपरिचित था, और अपनी सुनी बातों को बहुत सीधी-सादी भाषा में कह रहा था। लेकिन उसकी

सीधी-सादी बातों से भी उस समय की राजनीतिक गम्भीर घटना का पता लग जाता था। यद्यपि करेन्स्की ने 'बादशाह' का नाम नहीं धारण किया था, तथापि बादशाही और पूंजी-शाही को उसने पहिले ही की तरह कायम रखा था। यहाँ तक कि महायुद्ध को भी उसने सभी तरह चलाये रखा यद्यपि रूस के मजूर और किसान उसके कारण बरबाद हो गये थे, और सारे देश का सत्यानाश हो चुका था। मजूरों और गरीबों ने बादशाह को इसीलिये हटाना चाहा था, जिसमें कि इस सत्यानाशी युद्ध को बन्द किया जाय।

मजूरों के नेता और पथ-प्रदर्शक साथी लेनिन ने अपने ज्ञान और अनुभव द्वारा इस बात को बहुत पहिले ही जान लिया था। इसीलिये फरवरी-क्रांति को उसने अंतिम लक्ष्य नहीं स्वीकार किया, बल्कि महान् क्रांति का दरवाजा समझ कर, दूसरी क्रांति को सामने आते देखा। इसीलिये अस्थायी सरकार से वह सन्तुष्ट नहीं था। जनता के भावों को लेकर, लेनिन ने आवाज लगायी—"सरकार सोवियतों (पंचायतों) की!" यही बात थी, जिससे कि 25 अक्टूबर (7 नवम्बर, नये पंचांग के अनुसार), 1917 की वह महाक्रांति आयी, जो कि इतिहास में 'अक्टूबर क्रांति' के नाम से प्रसिद्ध हुई।

जैसा कि ऊपर सीधे-सादे शब्दों में राजनीतिक बात को कहा गया, हर जगह मजूरों और अक्टूबर क्रांति के विरुद्ध निकोलाई और करेन्स्की के पक्षपाती उठ खड़े हुए थे।

एक ताशकंदी ने अपरिचित आदमी से जिज्ञासा करते हुए, पूछा—"शोराय-इस्लाम (इस्लामी पंचायत) किस ओर है?"

उस आदमी ने इस नाम को सुना नहीं था, इसलिये "नही जानता" कह के जवाब दिया।

अदीना ने पूछा—"शोराय-इस्लाम क्या है?" अदीना ने समझा था, कि शोराय इस्लाम नाम का कोई आदमी है।

वहाँ बैठे आदमियों में से एक ने कहा—"जब निकोलाई को गद्दी से उतार दिया गया, तो यहाँ के सेठों (बायों), बड़े आदमियों और मुल्लाओं ने एक हो कर, एक सभा खड़ी की। वही आज तक पुराना ताशकंद शहर में शासन कर रही है। इसी संगठन का नाम शोराय-इस्लाम है।"

दूसरे आदमी ने कहा—"शोराय-इस्लाम ने खूब काम किया है। सारे शहर को उसने मुसलमानाबाद बना दिया है। लोग खूब नमाज पढ़ते हैं। जो कोई नमाज नहीं पढ़ता, उसे मुहल्लों के इमाम सजा देते हैं, और शोराय-इस्लाम के नाम से जुर्माने में पैसा वसूल करते हैं।..."

अदीना ने बीच में पड़ कर, कहा—"अगर शोराय-इलाम से अर्थ है मुल्लों, बायों और बड़े लोगों की जमात, तो अवश्य वह मजूरों और गरीबों के खिलाफ होगा।"

अदीना अपने वर्ग की चेतना के अनुसार वर्ग-स्वार्थ को देखते हुए जानता था, कि कौन वर्ग किस पक्ष की ओर होगा। वह बचपन से लेकर आज तक की अपनी जीवनी और अपने अनुभव के बल पर अच्छी तरह जानता था, कि बाय (सेठ) और मुल्ला गरीबों के दुश्मन हैं। अरबाब कमाल बहुत ही छोटा बाय था, लेकिन उसने उसे कितनी तकलीफें दीं। मुल्ला खाकराह और गाँव के बड़े लोगों ने अरबाब के हरेक जुल्म और अन्याय में उसकी सहायता की। अरबाब और मुल्ला खाकराह के बर्तावों से शायद अदीना के दिल में यह वर्ग-भावना न जागती; लेकिन तीन साल तक उसने कारखाने में भी काम किया, और मजूरों के साथ रहा था, उसके ही कारण अपने जीवनी और अनुभव से वह निष्कर्ष पर पहुँचा था।...

तिक्-तिक्-तिक्-तिक्!

गुम्-गुम्-गुम्-गुम्-गुम्!

अदीना ने अभी अपनी बात खत्म नहीं की थी, कि बाहर की ओर से समावार-खाने में थपथप की आवाज आयी। सभी दम साध गये, और उनमें से अधिक 'दूरदर्शी' जाकर सन्दूक, मेज या किसी और चीज के पीछे छिप गये। शाह मिर्जा का जिस आदमी ने मजाक उड़ाया था, वह भेड़िये से डरे गये की तरह जाकर चूल्हे के पीछे अपने सिर को छिपा लिया। बाहर के आदमी ने दो-तीन-चार बार दरवाजे को जोर से थपथपा कर, "शाह मिर्जा" "शाह मिर्जा" कह कर, आवाज दी।

डरता-काँपता, धीरे से दरवाजे के पास जा कर, दरार से बाहर की ओर झांक कर, शाह मिर्जा बोला—"ईवान्, तू है? मैंने समझा, कि कोई पराया आदमी है, इसीलिये दरवाजा नहीं खोला। क्या कहता है?"

"दरवाजा खोल। प्यास से मर रहा हूँ।"

"पीछे के दरवाजे से।"

"किससे डरता है? दरवाजा खोल दे।"

"अगर पानी पीना चाहता है, तो पिछले दरवाजे से आ, नहीं तो मेरा पिंड छोड़ और अपना रास्ता पकड़।"

"चोर्त् (मूर्ख, शैतान)?" कह कर, ईवान् ने गाली दी। और वह पिछले दरवाजे से समावार खाने में आ गया।

उसके हाथ में तमंचा देख कर, वहाँ बैठे लोग डर के मारे काँपने लगे। शाह मिर्जा ने उनको धीरज धराते हुए कहा—"मत डर, यह मेरा पुराना दोस्त है। बुरा आदमी नहीं है।"

लोगों की जान में जान आयी, और चूल्हे की आड़ में छिपा बहादुर भी उठकर, पास में आ बैठा। चूल्हे की राख से उसका चेहरा काला हो गया था। शाह मिर्जा "वाह, घर के शेर! क्या चूल्हे के भीतर जा कर गोली खायी, कि तेरा मुँह स्याह हो गया?" बोलते हुए, हँस पड़ा।

ईवान् ने बेंच पर बैठ कर, तमंचे को एक ओर रख दिया। और वह फिर शाह मिर्जा से "जल्दी कर ! एक कटोरा ठंडा पानी मिला," कहते, अपने भूरे बालों पर हाथ फेरते हुए, उनकी ओर देखने लगा।

शाह मिर्जा ने कहा--"गरमी से पसीना-पसीना होकर आया है। ठंडा पानी शायद नुकसान करेगा। चाय कैसी रहेगी ?"

ईवान् ने अपने हाथों और बाहों की ओर इशारा करते हुए कहा--"यह हाथ और बाँहें आग की ढेर और बर्फ की चट्टानों के भीतर बढ़ी हैं। हम मजूर बड़ी तकलीफ में पले हैं, गरमी और सरदी के भीतर से तप कर पक्के हुए हैं। हमें न सरदी से परहेज है, और न गरमी से। ऐसी सलाह उन आदमियों को दे, जिन्होंने कि अपने हाथ से कभी काम नहीं किया, और सदा दूसरों की कमाई खाते, मुलायम् गद्दों पर सोते रहे हैं।"

शाह मिर्जा ने पानी से भरे कटोरे को ला कर, ईवान् के हाथ में देते हुए, कहा--"अच्छा ले, बहुत बात न बना। जल्दी पानी पी, और बतला कि क्या बात हुई है, जो सारे शहर में उथल-पुथल हो रही है ?"

ईवान् ने कहा--"शहर में कोई उथल-पुथल नहीं हुई है, और न कोई बड़ी बात हुई है। यदि मान लो कि इस शहर, या दूसरे सारे शहर, यहाँ तक कि सारी दुनिया में भी उथल-पुथल हो जाय, तो इसमें आश्चर्य क्या है, डर की बात क्या है ? आज नई दुनिया खड़ी हो रही है। उसके लिये पहिले पुरानी दुनिया को बरबाद करने की जरूरत है, और वह बरबाद होके रहेगी। यदि तू अपने समावार खाने के लिये नयी इमारत बनाना चाहता है, तो पहिले पुरानी जीर्ण-शीर्ण इमारत को ध्वस्त करना होगा। फिर वहाँ पर नयी इमारत के लिये नयी नींव डालनी होगी। फिर तू पुरानी इमारत के ध्वस्त होने की बात कह कर अफसोस भी नहीं करेगा।"

-'तेरी इन बातों से मेरे पल्ले कुछ नहीं पड़ रहा है," शाह मिर्जा ने कहा--"मालूम होता है, कि तू खुद भी कुछ नहीं जानता, ऐसे ही बातें बना रहा है। कहीं शराब तो नहीं पी है, जो मतवाले की तरह बातें बनाये जा रहा है ?"

"ठीक कहता हूँ, थोड़ी-सी शराब पी है। लेकिन जो बात मैं कह रहा हूँ, उसे खूब सोच-समझ कर कह रहा हूँ।"

"ऐसा ही सही। लेकिन जरा बात ऐसी भाषा में कह, कि हम भी समझें," शाह मिर्जा ने कहा--"हमें यह पहेली न बुझा।"

"अब जो कुछ कहूँगा, वह जो मैंने अभी कहा, उसी की टीका होगी। कान धर के सुन। अब बात बतलाता हूँ।"--कहते हुए, ईवान् ने एक कटोरा और पानी पी कर बात आरम्भ की--"हम लम्बे अरसे से मजूरी कर रहे हैं, और धनियो तथा जार की हकूमत के अत्याचार से पिसते पीड़ित होते चले आ रहे हैं। हम और हमारे-जैसे लाखों ने उनकी गुलामी में भुखमरी से जानें दीं। हम ने कारखानों, रेलवे, कोयला-खानों और तेल की खानों में काम किया, लेकिन सारा नफा मालिकों की जेब में गया। वह हमेशा ऐश करते रहे। जब हम पेट भर रोटी माँगते, तो रोटी की जगह वह हमें बादशाही हकूमत से गोली दिलवाते, या हम से नाराज हो जेल या सायबेरिया के कालापानी में भिजवाते, अथवा फाँसी पर चढ़वाते।

अन्त में मजूरों के नेता इस निश्चय पर पहुँचे, जब तक समाज की बनावट दूसरी नहीं होगी, जब तक पूँजीशाही को उखाड़ फेंका न जायगा, और जब तक काम की उपज मजूरों के हाथ में नहीं आ जायेगी, तब तक अधिकांश लोगों की जो कि श्रमिक और गरीब हैं, हालत बेहतरीन न होगी। इसीलिये मजूरों के पथप्रदर्शकों ने बहुत सालों से पूँजीवाद का ध्वंस करने और जीवन के नये ढंग को तैयार करने का प्रयत्न किया। इसी का यह परिणाम हुआ, कि पिछले फरवरी महीने में निकोलाई को गद्दी से उतारा गया, और उसके शासन को हटाया गया। लेकिन इससे हमारा मतलब पूरा नहीं हुआ, क्योंकि फिर भी हमारे दुश्मन, अर्थात् बहुसंख्यक जनता के दुश्मन, पूँजीपतियों के आदमियों ने राज-काज सँभाल लिया। यह अस्थायी सरकार, करेन्स्की की सरकार ऐसी ही थी।"

वहाँ बैठे लोगों में से किसी ने करेन्स्की की तरफदारी करते हुए कहा--"सुना तुमने ? मजूरों ने निकोलई को भी हटाया। करेन्स्की भी एक बेकार का मालिक था क्या ?"

"चुप रहो ! बोलो मत ! बात सुनने दो !"--कहते हुए, अदीना ने उस आदमी को चुप करा दिया।

ईवान ने फिर अपनी बात चालू की--"मजूर, सैनिक, किसान मेहनतकश इस काम के लिये राजी नहीं हो सकते थे, और न राजी हुए। दुनिया के श्रमिकों के एकमात्र नेता और पथ-प्रदर्शक साथी लेनिन ने बोलशेविक पार्टी की ओर से श्रमिक-वर्ग के लाभ पर दृष्टि रख कर, सारे श्रमिकों को संघबद्ध किया। मजूरों ने करेन्स्की की सरकार तथा पूँजीवादी व्यवस्था के खिलाफ उठ कर उसे निकाल बाहर किया, और शासन मजूरों और सैनिकों की सोवियतों के हाथ में दे दिया।"

वहाँ बैठे "राजनीतिज्ञ" ने अपने को रोकने में असमर्थ हो अपनी जगह से उठ कर, कहा--"मालादेश (शाबाश) ! जिन्दाबाद लेनिन !" और ईवान की तरफ निगाह करके, पूछा--"तवारिश (कामरेड), दुष्ट करेन्स्की का क्या हुआ ?"

"वह भाग गया," ईवान ने कहा।

"अफसोस, हाथ में नहीं आया ! कहाँ भागा होगा ?"

"चोर्तु (शैतान) जानता होगा। किसी कब्र में भागा होगा।"--कह कर उसे जवाब दे, ईवान ने फिर कहा--"करेन्स्की के भागने या हाथ में आने से कोई बात नहीं।

वह अब ऐसा आदमी है, जिसका मरना या जीना बराबर है। बात असल में उसके पक्षपातियों और उस वर्ग के बारे में है, जिन्होंने कि करेन्स्की को मैदान में ला खड़ा किया। अब इसी वर्ग तथा उसके हिमायतियों को पकड़ कर बरबाद करने की आवश्यकता है।"

"लेकिन यह काम आसान नहीं है।"

"दा (हाँ)," कह, ईवान थोड़ी देर चुप रहा। उस सीधे-सादे आदमी के जोश और प्रसन्नता के कारण उसका दिल थोड़ा बिखर गया था। उसे इकट्ठा कर के, ईवान ने अपनी बात को छोड़ी जगह से फिर आगे कहना शुरू किया—"ठीक, यह काम आसान नहीं है। वह वर्ग, जो कि सालों, नहीं शताब्दियों और युगों से शासन करता आया, सारे मेहनतकशों के खून को पीता रहा, अपने नफे के लिये मजूरों के सिर पर आग उछालता रहा, आसानी से हार न मानेगा, और अपने हाथों अपनी जान लेने के लिये राजी न होगा। बात भी ऐसी ही हुई है। सभी जगह इस वर्ग ने गुप्त रूप से या खुल्लम-खुल्ला मेहनतकशों और उनकी हकूमत के खिलाफ बगावत की, उसके खिलाफ लड़ाई की। यह स्वाभाविक ही था, कि मेहनतकश भी उसके मुकाबले में डटकर लड़ने से बाज नहीं आये। अब आज जो यह अधिकार हमारे हाथ में आया है, हम मजबूती से उसकी रखवाली कर रहे हैं। यह अब जरूरी है, कि दुश्मन को ऐसा मारा और बरबाद किया जाय, कि वह फिर सिर उठाने लायक न रह जाये। वस्तुतः ऐसा ही हुआ भी। सभी जगह गृह-युद्ध आरम्भ हो गया। आज जो घटना ताशकंद में घटी, वह उन्हीं देशव्यापी घटनाओं में से एक है। लेकिन यह घटना अन्तिम घटना नहीं है। हो सकता है, कि यह मुकाबिला और संघर्ष तब तक जारी रहे, जब तक कि पूँजीपति जड़ से खत्म न हो जायें—उनके पक्षपाती बरबाद न हो जायें, मजूरों-सैनिकों-किसानों की सरकार मजबूत न हो जाये, और जीवन का नया रास्ता शुरू हो कर, सुदृढ़ न बन जाये। हम सब बातों से पहिले यह चाहते हैं, कि पूँजीपतियों की सभी धन-सम्पत्ति को, जो वस्तुतः हमारी ही है, अपने हाथ में ले लें। मैंने अपनी पहिली बातों में इसी अभिप्राय को 'पुरानी दुनिया को बरबाद करने की जरूरत है। आज नयी दुनिया खड़ी हो रही है', कह कर संक्षेप में समझना चाहा था। लेकिन तूने नहीं समझा या समझना नहीं चाहा। अब शायद तूने समझ लिया होगा...कि मैंने जो बात कही, वह न शराब की वहक थी और न पहेली थी, बल्कि वह एक गम्भीर बात का संक्षेप और सार था।

ईवान की सीधी-सादी बातों और उपमाओं से केवल शाह मिर्जा ही नहीं, बल्कि वहाँ बैठे सभी लोग प्रभावित हुए। और ईवान को ऊँची आवाज में यह कहते हुए, उन्होंने मुबारकबाद दी—

"उर्रा ! जिन्दाबाद लेनिन ! जिन्दाबाद मजूर और इंकलाब-अक्तूबर ! मुर्दाबाद पूँजीपति ! जिन्दाबाद ईवान !"

वहाँ बैठा सिर्फ एक आदमी, जिसने कि केरेन्स्की की तारीफ की थी, इस सार्वजनिक प्रसन्नता में शामिल नहीं हुआ। उसने अपने मन में, 'हाय, अफसोस, सौ अफसोस ! चमड़े का कारखाना क्या मेरे हाथ से निकल जायेगा ?' कहते अफसोस किया। ईवान भी रेल की आवाज सुन कर, मजूरों को इकट्ठा करने के लिये आवाज देने को, एक कटोरा और ठंडा पानी पी कर, वहाँ से निकल कर चला गया।

अदीना में इतनी ताकत नहीं थी, कि वह ताली पीटता और 'उर्रा' कहता। लेकिन ईवान की बातों से प्रभावित हो, वह इन्कलाब की तारीफ में निम्न भाव के शेरों को अपने दिल में दुहराने लगा—

'कुछ समय अफसोस में बूढ़े जवान फँसे थे।
बूढ़ा घबराहट में, जवान रंजो-गम में।
जुल्म और अन्याय की अब जड़ें खुद गयीं।
छातियाँ खून से भरीं, आँखें आँसू से भरीं।
वह वर्ग जो अकारण न्यामत और ऐश में था।
वह वर्ग जो बेगुनाह बला और आफत में था।
वह वर्ग जो शासक था, अशान्त दुनिया में।
वह वर्ग जो हुक्मी बन्दा था, बिना सवाल और जवाब के।
वह वर्ग, जो रात-दिन था, संताप और रंज में,
वह वर्ग जो सुबह और शाम मस्त शराब के प्याले में,
इन विरोधी वर्गों से देश तबाह था,
इन विरोधी फिर्कों से देश पीड़ित था।
अब ऐसा हुआ, कि उठा एक तूफान,
किया जालिमों का खाना-खराब'
मेरा अचरज चला गया, कि यह क्या हुआ ?
आठों तरफ से ऐसा ही आया जवाब।
इन्कलाब, इन्कलाब, इन्कलाब, इन्कलाब !
इन्कलाब, इन्कलाब, इन्कलाब, इन्कलाब !'

उन्नीस सौ अट्ठारह

सन् 1918 तुर्किस्तान के मेहनतकशों (जाँगर चलाने वालों) के लिये बहुत बुरा आया। सन् 1917 में मध्य-एशिया में पानी न बरसने के कारण अकाल और सूखा पड़ गया। उस साल के अन्त तक साल का जमा किया हुआ जखीरा भी खत्म हो गया। कोने-कोने में जहाँ कुछ भी खाने की चीजें मिल सकीं, उनको जमा किया गया। भूखे लोगों को एक कौर रोटी दी जाती। इस साल की सर्दियों में देश रेगिस्तान-सा दिखाई

पड़ता था। किसान, भिखमंगे और मजूर बेबस हो गये थे। वह बेघर-बार के झुंड-के-झुंड-भेड़ों के रामों या गायों के गल्ले (झुंड) की तरह रोटी की तलाश में शहरों की ओर दौड़ रहे थे। हजारों भूखे कहीं रास्तों में, कहीं बरफ के टीलों पर, कहीं नदियों और नहरों के भीतर मरे पड़े थे। यह करुणापूर्ण दृश्य जंगलों, रेगिस्तानों और शहर के बाहर ही उपस्थित नहीं था, बल्कि शहरों के भीतर भी भूख से मरे बहुतेरे मुर्दे दिखायी पड़ते थे।

यह हालत थी, जब कि सन् 1918 आरम्भ हुआ। जितना ही बसंत नजदीक आता गया, उतना ही अन्न का जखीरा भी कम होता गया, और भूखों तथा भूख से मरने वाले लोगों की संख्या बढ़ती गई। ऊपर से टायफायड और इंफ्लुएंजा (जो कि अकाल और भूख की सन्तानें हैं) ने भी गजब ढाया, और बहुत बड़ी संख्या में लोगों को मार कर मिट्टी में मिला दिया। इसी समय खोकन्द में बलवा हो गया। ऐरगश और बासमाची (लुटेरे) पैदा हो गये, जिन्होंने और भी गड़बड़ी पैदा कर दी। इसके कारण मध्य-एशिया का बगीचा कहा जाने वाला फरगाना बरबाद हो गया। कालीसोफ-कांड के बाद अमीर बुखारा ने जुल्म और हत्या का वह खेल खेला, जिसके कारण भूखे मरते मेहनतकशों के सिर पर और भी आफत का पहाड़ ढाया जाने लगा।

हाँ, यह ठीक है, कि जिन जगहों में सोवियत-शासन कायम हो चुका था, वहाँ इस आफत के तूफान का मुकाबला करने की तैयारी की गयी थी। हर जगह कमीटियाँ और सभायें कायम की गयी थीं, जिनका काम था भुखमरी को रोकने का प्रबंध करना। यह कमेटियाँ-सभायें देश के अनाज के जखीरों को इकट्ठा करतीं, और हरेक आदमी को राशन के मुताबिक एक खास परिमाण में अनाज देतीं। इन्होंने न केवल अन्न बाँटने का इन्तजाम किया था, बल्कि रसोई-घर और सोने की जगहें भी तैयार की थीं। जहाँ तक हो सकता था, वह लोगों में खुराक और पोशाक बाँटतीं, तथा इन्फलुएंजा और टायफायड की चिकित्सा और देख-भाल का प्रबंध करती थीं। लेकिन काम केवल ऐसे ही शहरों और स्थानों में हो सका था, जहाँ सोवियत-शासन की स्थापना हो चुकी थी। दूसरी जगहों में, विशेषकर गाँवों में, मानव-पुत्र ने अपने आपको केवल भाग्य पर छोड़ दिया था। यह हालत तब तक रही, जब तक कि 1918 की फसल तैयार नहीं हो गयी। जब गल्ला-दाना लोगों के पास आने लगा, तो धीरे-धीरे हालत बेहतर होने लगी। लेकिन अब सारे रूस और तुर्किस्तान में भी गृह-युद्ध शुरू हो गया था। विदेशी पूँजीपतियों ने उसके भीतरी क्रांति-विरोधियों को सहायता दे, देश के अधिक भाग आगखाने और कसाई-खाने में बदल दिया था। ओरेन्बुर्ग (रूस) से तुर्किस्तान आने वाला रास्ता कट गया था, इसलिये तुर्किस्तान के मेहनतकशों को बाहर से कोई सहायता मिलने की आशा नहीं रह गयी, और उन्होंने सोवियत-शासन की रक्षा का काम अपने ऊपर लिया। इसी समय अश्काबाद के सफेदों (क्रांति विरोधियों) ने अँग्रेजों की मदद से बाकू का रास्ता काट दिया, जिससे मिट्टी का तेल आना बन्द हो गया, और घरों में

चिराग जलाना मुश्किल हो गया। क्रांति-विरोधियों ने भालों और तलवारों से सजकर तुर्किस्तान की सोवियत-सरकार और मेहनतकशों के ऊपर चारजूई के पास जमा हो, आक्रमण किया। इसके कारण आने-जाने के साधन बेकार हो गये। स्थानीय कारखाने बन्द हो गये। रेलों को मजबूर हो, लकड़ी के ईंधन से चलाते हुए, लाल तुर्किस्तान की रक्षा का काम करना पड़ा

यह स्वाभाविक ही था, कि ऐसी हालत में हमारे अदीना की बीमारी और भी बुरी हो जाती। कीमिज पीना और स्वास्थ्य-लाभ करना तो अलग, उसे गुल बीबी तक का ख्याल भुलाना पड़ा। यह अदीना का सौभाग्य था, जो शाह मिर्जा मौजूद था, नहीं तो देश पर, जो आफत आई थी, उसमें सब से पहिली बलि वही चढ़ता। शाह मिर्जा का समोवार-खाना पहिले की तरह नहीं चल रहा था। देश की बिगड़ी आर्थिक दशा का प्रभाव उसके ऊपर भी पड़ा था। यात्री कोई आता नहीं था। अगर कोई एक प्याला चाय पीना चाहता, तो बहुत खरच करके ही पा सकता था। इन सारी कठिनाइयों की परवाह न कर, शाह मिर्जा जब कभी एक रोटी पाता, तो सबसे पहिले अदीना को खिलाता, डाक्टर ने जो बतलाया था, उसी के अनुसार अदीना के बिस्तरे और कपड़ों को जहाँ तक हो सकता, साफ रखता। विशेषकर जब कि इन्फलुएंजा की महामारी फैल गयी, तो डाक्टर ने ताकीद करते हुए कहा था—"होशियार रहना, अगर एक भी इन्फ्लुएंजा वाला आदमी अदीना के शरीर के पास आ गया, तो उसी समय उसको इन्फ्लुएंजा की खाँसी शुरू हो जायेगी, और उसकी रही-सही ताकत नष्ट हो जायेगी। फिर मौत के आने में देर न होगी।"

शाह मिर्जा को डाक्टर की सभी बातों पर विश्वास था, क्योंकि बातों की सच्चाई को वह कई साल से अपनी आँखों देख रहा था। अदीना के साथ उसे असाधारण मुहब्बत हो गयी थी, इसलिये भी डाक्टर की एक-एक बात के अनुसार वह चलने की कोशिश करता था। यद्यपि इस सावधानी के कारण अदीना मरा नहीं था, तथापि वह अत्यन्त कृश और दुर्बल हो गया था, और बिना किसी के सहारे उठ-बैठ नहीं सकता था। खाँसने में अब उसके मुँह से कफ के साथ खून निकलता था। सबसे कठिन और असह्य बात उसके लिये यह थी, कि एक साल से अधिक हो गया, पर उसे अपनी प्रियतमा की कोई खबर नहीं मिली। वह नहीं जानता था, कि उसके ऊपर क्या बीती। कमजोरी से अब प्राण उसके ओंठों पर आ चुके थे। मालूम होता था, कि गुल बीबी की खबर सुनने ही के लिये अभी तक वह रुके हुए थे।

कोहिस्तान

बुखारा का कोहिस्तान (पहाड़ी प्रदेश) अमीर के हाथ में पड़ने के बाद भलाई की कैसे आशा रख सकता था? 1918 में उसकी हालत और बुरी हो गयी थी। एक

तो 1917 के साल में बारिश न होने के कारण सूखा पड़ना ही आफत ढा रहा था, लोग भूख से मर रहे थे, ऊपर से अमीर की हकूमत का अत्याचार। कोहिस्तान के गरीब निवासी अच्छे सालों में भी पैसा कमाने के लिये तुर्किस्तान की ओर आशा लगाये रहते थे। इस साल इसलिये उनकी हालत और बुरी हो गयी, कि बुखारा की सरकार ने वहाँ के लोगों को तुर्किस्तान जाने से मना कर दिया था, जिससे कोई कोहिस्तानी सीमा पार नहीं कर सकता था। वह डरते थे, कि अगर लोग तुर्किस्तान जायेंगे, तो बोलशेविकों और बुखारा से भागे हुए लोगों की बात में आ कर, अमीर की हकूमत के खिलाफ विद्रोह कर देंगे। कालिसोफ-कांड में जब अमीर-बुखारा को बहुत मुसीबत में पड़ना पड़ा, तो कड़ाई और भी ज्यादा कर दी गयी। इस सबके ऊपर यह, कि इस साल अमीर ने पहिले से बहुत अधिक कर और लगान लगा दिया था। अमीर की ओर से जो हाकिम कोहिस्तान में शासन करते थे, वह बादशाही कर और लगान को कई गुना करके लोगों से जबरदस्ती वसूल करते थे, जिसमें बहुत-सा भाग उसकी जेब में जाता था। जो लोग इस महसूल और लगान को नहीं दे सकते थे, उन्हें बन्दीखानों में डाल दिया जाता था, या बागी कह कर बुखारा भेज दिया जाता था। इस अत्याचार और जुल्म में स्थानीय अमले तथा मुल्ला हाकिमों की मदद और पथ-प्रदर्शन करते थे। बेचारी गरीब जनता का सर्वनाश कर के जो कुछ धन हाकिमों की जेब में जाता, उसमें से थोड़ा इनाम और भेंट उनको भी दे दिया जाता था।

कालिसोफ-कांड के समय जब कि अमीर मेहनतकशों के आक्रमण से बाल-बाल बच गया, तो उसने कोहिस्तान के अमलों और सरकारी नौकरों को बुखारा बुला भेजा। जब यह कांड खत्म हो गया, और किजिलतेप्पा के सुलहनामे पर हस्ताक्षर हो गये, तो अमीर-बुखारा ने अपनी शक्ति बढ़ाने की कोशिश करना, भविष्य के लिये सजग रहना चाहा। इस काम में सहायता देने के लिये उसने कोहिस्तान से भी आदमियों को बुलाया। यद्यपि तनख्वाह खाने वाले तथा बड़े-बड़े अमले अमीर की सहायता करने के लिये तैयार थे, तथापि उसे उतने से संतोष नहीं था। उसने चाहा, कि कोहिस्तान की आर्थिक और मानवी शक्तियों से मदद ले कर अपने तख्त और ताज की रक्षा का उपाय करे। इस काम के लिये बड़े-बड़े अमले तथा कोहिस्तानी मुल्ले भी लोगों में प्रचार कर रहे थे। एक तरफ उनका प्रचार और दूसरी तरफ सरकारी अत्याचार। दोनों ने मिलकर कुछ लोगों को अमीर की मदद करने के लिये मजबूर किया सही, लेकिन अधिकांश जनता, विशेष-कर गरीब लोग, जिनका कि अमीरी दरबार के साथ पैसा या जान देने के सिवा और कोई संबंध नहीं था, इस काम के लिये राजी नहीं हुए। मौका पा कर, वह अमीर और उसकी हकूमत की सहायता करने से भाग निकलते थे। धीरे-धीरे वह अमीर की सर-कार के खिलाफ कार्रवाई भी करने लगे। ऐसा करने के लिये कोहिस्तान के पुराने इतिहास में कम उदाहरण नहीं थे। ये कोहिस्तानी-ताजिक अपने बाप-दादों से ऐसे कितने ही विद्रोहों की कथाएँ और पँवारे सुनते चले आये थे। हम सरकार के खिलाफ

इस तरह के हुए विद्रोहों में से बहुतों को छोड़ देते हैं, और केवल मंकीत खानदान के अमीरों के समय जो विद्रोह हुए, उनमें से एकाध का उदाहरण देते हैं—

जिस वक्त अस्तराखानी राजवंश खतम हुआ, और बुखारा में मंकीत खानदान ने अपना शासन आरंभ किया, उस समय सारा कोहिस्तान स्वतंत्र था। यद्यपि उस समय वहाँ के जीवन का रंग-ढंग बिलकुल सीधा-सादा था, और शासन का तरीका भी अक्सक्काली (बड़े-बूढ़ों) का था; लेकिन तो भी उस समय वहाँ के किसान और पशु-पाल अपने काम में अच्छी तरह लगे हुए थे। उनके पुत्र-कलत्र तथा सम्मान और प्रतिष्ठा सुरक्षित थे। अपने घर में रहते हुए वे आराम से जिन्दगी बसर करते थे। रहीमखान मंकीत ने जब बुखारा में अपनी सलतनत मजबूत कर ली, तो उसने कोहिस्तान (ताजि-किस्तान) पर चढ़ाई की। उसका पहिला मुकाबिला हिसारियों ने खुर्द किले के पास किया। तंगदेवाँ के किले में 1169 हिजरी (1755 ई०) में भयंकर युद्ध हुआ। रहीम खाँ इस युद्ध में विजयी हुआ। उसने लोगों को बड़ी बेदर्दी से मरवाया, और उनकी स्त्रियों और लड़कियों को बन्दी बना कर, कुरसी में ला, बाजार में डुगडुगी पिटवा कर, उन अभागियों को बेंचवाया। इस युद्ध में जो अपार लूट की सम्पत्ति हाथ में आयी थी, उसे उसने छह रोज में खर्च कर दिया।

रहीम खाँ अपनी दूसरी चढ़ाई के लिये जब कोहिस्तान की ओर आया, तो शेराबाद किले के पास हिसारियों और दूसरे कोहिस्तान के स्वतंत्रता-प्रेमियों के साथ लड़ाई हुई। इस युद्ध में विजयी हो कर, रहीम खाँ ने हाथ आये सभी मर्दों को मरवा डाला, और उनके सिरों को चुन कर, एक मीनार खड़ा किया, और उनकी स्त्रियों और लड़कियों को अपने सिपाहियों में बाँट दिया। यह घटना 1170 हिजरी (1760) की है।

जब कोहिस्तान के बाकी लोगों ने इस आतंक और जंगलीपन को देखा, और उन्हें अपने जान-माल की रक्षा की कोई आशा न रह गयी, तो उन्होंने बिना लड़ाई के ही अपने किलों को रहीम खाँ के आदमियों के सिपुर्द कर दिया। किला करातेगिन भी इसी तरह समर्पित हुआ। हिसार का शासक मुहम्मद अमीर भाग कर, अफगानिस्तान चला गया।

रहीम खाँ ने कोहिस्तान पर अधिकार कर लेने के बाद, वहाँ के लोगों के बीस हजार परिवारों को बुखारा की तरफ भिजवाया। उसने कोहिस्तान से बीस हजार सोने की मुहर, तीन हजार घोड़े और पाँच सौ ऊँट लिये, और अपनी ओर से कोहिस्तान के हर एक इलाके में शासक नियुक्त किये। इन्हीं शासकों में शहर दुशाम्बेका शासक शरिम-शाग बेग का पुत्र गुलबाय बेग था। रहीम खाँ कोहिस्तान के लोगों को बरबाद करने तथा उनके गले में गुलामी का तौक बाँधने के बाद बुखारा लौट गया। उसके हाकिमों ने अपने अमीर से भी ज्यादा अत्याचार लोगों पर करना शुरू किया। लोग इस जुल्म

से तंग आ कर, तीन साल बाद विद्रोह करने के लिये मजबूर हुए। चुरजक के किले को मजबूत बना कर, वहाँ उन्होंने अपनी रक्षा का इंतजाम किया। तब रहीम खाँ के आदमियों ने चुर्जक पर आक्रमण किया, तो स्वतंत्रता-प्रेमियों ने उसे छोड़, सीना के किले में शरण ली। फिर वहाँ से भी चल कर, दर्रा निहाँ में जा, सारे मुल्क में बलवे की तैयारी शुरू की। जब उनकी ताकत काफी मजबूत हो गयी, तो उन्होंने तारीख 22 रमजान, 1171, हिजरी (30 मई, 1761 ई०) को देहनवौ के किले पर आक्रमण कर के, शहर पर अधिकार कर लिया। रहीम खाँ के आदमी देहनवौ के अर्क (दुर्ग) के भीतर घिर गये। उस समय रहीम खाँ के अधिकतर सैनिक बाला हिसार में थे। जब उन्होंने यह खबर सुनी, तो और भी सेना जमा करके, आकर देहनवौ शहर को घेर लिया। इस समय स्वतंत्रता-प्रेमियों ने दोनों ओर के आक्रमण के खिलाफ लड़ाई लड़ी। भीतर अर्क के लोग गोलाबारी कर रहे थे, और बाहर से नये आये आक्रमणकारी। यह लड़ाई 40 रोज तक जारी रही। अंत में रहीम खाँ खुद आया। तब जाकर शहर पर विजय प्राप्त हुई। रहीम खाँ स्वतंत्रता-प्रेमियों के नेता अमान बाकी के सिर को भाले पर लटका, लौट गया। दूसरे जो हाथ में आये, उनके सिरों को काट कर, देहनवी शहर के सामने वाले फाटक के बाहर मीनार की तरह चुनवा दिया गया। इसके बाद सरेजुय, रेजर, दुशाम्बे (आधुनिक स्तालिनाबाद) तथा दूसरे किलों और शहरों पर अधिकार कर के, जिन लोगों को मारा गया, उनके सिरों को भी देहनवौ भेज कर उसी मीनार में चुना गया। खोजन्द के हाकिम फाजिल बे के हुक्म से उस समय 400 खोजन्दी और उरातेपी हिसारियों की मदद के लिये आ रहे थे, उन्हें दर्रा-निहान में रहीम खाँ के आदमियों ने घेर कर मार डाला, और उनके सिर भी देहनवौ के मीनार को ऊँचा करने के काम आये।

ऐसी घटनायें केवल हिसार या कोहिस्तान में ही नहीं हुई थीं, बल्कि पंजकेन्त, यारी किश्तुत, उरमेतन, भागीयान, फाराब और फलगार में भी इसी तरह के अत्याचार और खूँरेजी 1166 हिजरी (1752 ई०) में रहीम खाँ के हाथों से हुई। यह बातें काजी मुहम्मद वफा (सुरद), पुत्र काजी जुहेर करमीना-बासी ने अपनी किताब 'तोफये खानी' में दर्ज किया है, जिसे कि अमीर दानियाल के हुकुम से उक्त काजी ने लिखा था।

रहीम खाँ के बाद अमीर दानियाल के समय भी वही बातें दोहरायी गयीं। कोहिस्तानी लोग स्वतंत्रता चाहते थे, और यह भी कि अपनी धन-दौलत के स्वयं मालिक हों, अपनी खेती और पशु-पालन से प्राप्त धन और सम्पत्ति को खुद भोगें। दानियाल चाहता था उनको गुलाम बनाना, उनके सर्वस्व को हरण करना, जिसके लिये उसने छल-बल, मार-काट और मीनार चुनाई आदि के सभी तरीके इस्तेमाल किये।

अमीर हैदर नसरुल्लाह (बतुरखान) और मुजफ्फर ने फिर उन्हीं अत्याचारों को दुहराया था। विशेषकर मुजफ्फर के शासन-काल में रहीम खाँ के तरीके को पूरे तौर

पर बरता गया। याकूब कुशबेगी के नायकत्व में रूसी तोप और तोपखाने से लैस एक सेना कोहिस्तान भेजी गयी। लोगों के सर्वस्व को हरण किया गया, और देहनवौ शहर को जला कर खाक कर दिया गया। 'ताजुक-तवारीख' के शब्दों में अमीर मुजफ्फर ने कुर्बानी की गायों की भाँति सिरों को काटा—रहीम खाँ और मुजफ्फर खाँ, दोनों बहादुरों की एक खास विशेषता देखी जाती है। रहीम खाँ ने जिस तरह अपनी नादिर-शाही तोपों और तफंगों की मदद से ईरान, अफगानिस्तान, हिन्दुस्तान, एशिया और मध्य एशिया को एक केन्द्रीय सल्तनत के नीचे लाने की कोशिश की और छोटे-छोटे राज्यों को बड़ी निर्द-यता के साथ बर्बाद किया, उसी तरह मुजफ्फर खाँ ने भी रूसी जार से हार खाने के बाद रूसी तोपों और बन्दूकों को लेकर यही काम करना चाहा।

अमीर अब्दुल अहमद और आलिम खाँ के शासन-काल में कोहिस्तान के लोगों में हिलने-डोलने की ताकत नहीं रह गयी थी। उनका धन-माल, बीबी-बच्चे, इज्जत-सम्मान सब-कुछ अमीर के आदमियों के हाथों बरबाद हो चुका था।

मंकीत राजवंश के यह कारनामे कोहिस्तानियों के लिये भूलने की बात नहीं थी। और अब अमीर आलम खाँ ने फिर चाहा, कि इन्हीं लोगों की शक्ति से मदद लेकर, अपनी सल्तनत और अत्याचारी शासन को मजबूत करें। जिनका खून बुखारा के अमीरों ने पानी की तरह बहाया, वही अब अपने खून को उनके लिये बहायें! हाँ, जिनका लाभ अमीर के लाभ से बँधा हुआ था, उन्होंने जरूर सहायता करनी चाही, और अन्य लोगों को वैसा करने के लिये भी प्रेरित किया, लेकिन कोहिस्तानी जनसाधारण अपनी खुशी से इसके लिये राजी नहीं हुए। अमीर के हाकिमों ने राजी या बेराजी, जैसे भी हो सका, लोगों को पकड़कर जमा किया, और उन्हें विशेष प्रबन्ध के साथ बुखारा भेजा। इन लोगों में वे भी शामिल थे, जो कि कोहिस्तान के जेलखानों में बन्द थे। बुखारा में उन्हें बादशाह के चारबागों तथा लोगों के घरों में रखा गया। 'शेर-बच्चा' के नाम से बन्दियों की पल्टन संगठित की गयी। कोहिस्तान के ठंड इलाके के रहने वाले लोग बुखारा की गर्म हवा को बर्दाश्त नहीं कर सके। उनमें से कितने ही मर गये, कितने ही भाग गये और जो बड़े-बड़े अमले बच रहे थे, वह अमीर की सहायता में लगे रहे।

अपरिचित पुरुष

अदीना दो साल से आफत में फँसा हुआ था। डाक्टर के कहने के मुताबिक अधिकतर वह धूप में बैठा रहता। गरमी के दिनों में, कन्या (सितम्बर) के महीनों में सबेरे और शाम के थोड़े से समय को छोड़कर गरमी के कारण धूप में बैठना सम्भव नहीं

था। तुला (अक्तूबर) महीने में वह अधिकतर धूप में बैठा रहता, क्योंकि उस समय उतनी गरमी नहीं थी, कि आदमी बर्दाश्त न कर सके। इस समय शाह मिर्जा खाट को सबेरे ही बाहर निकाल के रख देता और अदीना को उस पर लिटा देता। यह इसी तरह शाम तक लेटा रहता। एक दिन जब कि अदीना अपनी चारपाई पर धूप में आधी नींद में लम्बा पड़ा था, और शाह मिर्जा आने-जाने वालों को चाय और चिलम तैयार करके दे रहा था, एक अपरिचित पुरुष ने आकर समोवार-खाने में मेज के किनारे बैठे, शाह मिर्जा से चाय माँगी। यद्यपि इस आदमी का रंग-ढंग ताजिक-जैसा मालूम होता था, तथापि उसकी पोशक थी, एक पुरानी कफ्काजी टोपी, सैनिकों की फटी वर्दी और लाल पायजामा। अपनी पोशाक से वह दाखुन्दा (कोहिस्तानी, ताजिक) जैसा मालूम नहीं होता था।

यद्यपि उसकी पोशाक बेगानी थी, तथापि उसकी शकल-सूरत से शाह मिर्जा को निश्चय हो गया, कि वह ताजिक है। इसलिये उसकी हालत जनाने के लिये उसने एक चायनिक चाय गरम करके ला कर सामने रख, प्याले में चाय डालनी शुरू की। पहिले चाय को खुद पी कर, उसने प्याला अपरिचित पुरुष के हाथ में दिया। फिर चाय-पान के मध्य में उसकी ओर निगाह करके, बोला—"मेहमान, यह पूछना बुरा नहीं है कि आप कहाँ के हो ?"

"करातेगिन," अपरिचित पुरुष ने कहा।

अदीना ने जब 'करातेगिन' शब्द को सुना, तो अपनी अधखुली आँखों को पूरी तरह खोल कर, उस आदमी की तरफ ध्यान से देखने लगा। उसे मालूम हुआ, कि उसने कहीं उसे देखा है, लेकिन यह याद नहीं आता था, कि कहाँ देखा था। उसने बहुत कोशिश की, कि मन एकाग्र करके उसको पहिचानने की कोशिश करे, लेकिन उसमें सफल नहीं हो सका। 'करातेगिन' शब्द ने कानों में पड़ कर, उसके सामने वहाँ के अपने मीठे-कड़वे तजुर्बों को एक-एक करके नजर के सामने ला दिया। इसमें सबसे ज्यादा जिस ओर उसका ख्याल गया, वह थी गुल बीबी। करातेगिन वही बरबाद, जुल्माबाद इलाका था, जहाँ कि अरबाब कमाल-जैसों का जुल्म और अत्याचार चल रहा था, जिसके कारण अदीना को अपनी प्रियतमा से सदा के लिये विदा होना पड़ा। हाँ, अदीना अपने को अपनी कृपामयी प्यारी से सदा के लिये जुदा हुआ समझता था, क्योंकि अब उसकी बीमारी बहुत जोर पकड़ चुकी थी, और उसके चंगुल से बचने की बिलकुल उम्मीद न रह गयी थी। उसके दिल में सिर्फ एक ही आरजू रह गयी थी कि अपने यार और दयार की कोई खबर सुन पाता। यदि वह खबर अच्छी है, तो उसके आनन्द से, और अगर बुरी है, तो उसकी कड़वाहट से वह अपनी जान दे सकेगा। इसी लालसा से वह अपरिचित पुरुष की बातें ध्यान देके सुनने लगा। शाह मिर्जा उस आदमी से कह रहा था—

"क्या उस शहर से हाल ही में आये हो ?"

"एक महीना हुआ।"

"करातेगिन से कब चले थे ?"

"करीब चार महीना हुए।"

"फरगाना की ओर से यहाँ आते हुए कहाँ-कहाँ रहे ?"

"नहीं, करातेगिन और फरगाना का रास्ता बन्द है। करातेगिन के हाकिम उधर से जाने नहीं देते, इसलिये कोई फरगाना नहीं पहुँच सकता।"

"अगर ऐसा है, तो तुम कैसे और कौन रास्ते से आये ?"

"मैं पहिले करातेगिन से बुखारा आया। सच्ची बात यह है, कि वे मुझे बुरा लाये, जहाँ से कुछ समय बाद मैं इस ओर भाग आया।"

"बिरादर !" अपनी और अदीना की ओर संकेत करते हुए, शाह मिर्जाने कहा—"हम भी ताजिक हैं। तुम्हारे बारे में अच्छी तरह जानना चाहते हैं। इसलिये हमारे बार-बार पूछने को बुरा न मानना।"

"मैं भी जानता हूँ, कि तुम ताजिक हो। जब से मैं ताशकंद आया, हर रोज हर-एक आदमी से 'इस शहर में कोई ताजिक है कि नहीं' कह के पता लगाता रहा। कल एक आदमी ने तुम्हारा और तुम्हारी दुकान का पता बताया। इसलिये जान-पहिचान करने के लिये मैं यहाँ आया हूँ।"

"बहुत अच्छे आये। अपनी बात कहो। करातेगिन से कैसे आये, और बुखारा में क्या करते रहे ?"

"मैं करातेगिन के जेलखाने में बन्दी था। इस साल अमीर ने बन्दियों को भी नौकरों के साथ बुखारा बुलाया। वहाँ के हाकिम ने मुझे दूसरे बन्दियों के साथ बुखारा भेज दिया। यहाँ चोरों की एक पल्टन संगठित की गयी, जिसका नाम 'शेरबच्चा' रखा गया। मुझे भी उसमें शामिल कर दिया गया। इस पल्टन में हमारे-जैसे थोड़े लोग चाहे चोर कह कर बदनाम किये गये हों, लेकिन अधिकतर खूँख्वार, नामी डाकू और चोर थे। पल्टन के साथ बुखारा और उसके आस-पास कुछ समय तक मैंने देख-भाल का काम किया। लेकिन वह ऐसी देख-भाल थी, जिसके लिये लोग पनाह माँगते थे। हमारी पल्टन और अफसर जिस किसी गाँव में जाते, वहाँ निरीह बच्चों, बेटियों और औरतों को जबर-दस्ती पकड़वा कर जलसा रचाते, मार-पीट करते, और लोगों के माल को उनकी आँखों के सामने लूट लेते। यदि कोई उनके कामों के लिये नाराजगी प्रकट करते, तो उन्हें हाथ पैर-बाँध के 'जदीद' कहकर बुखारा भेज देते। वहाँ उनमें से जिनके पास पैसा काफी होता, और वह घूस-रिश्वत दे सकते, उन्हें छुट्टी मिल जाती थी। छुट्टी मिलने पर भी वह अपने गाँव को नहीं लौट सकते थे, क्योंकि लौटने पर दुबारा उन्हीं हत्यारों के हाथ में पड़ना पड़ता। जो रिश्वत नहीं दे पाते थे, उन्हें बुखारा के 'आबखाना' नामक जेल में डालकर मार डालते। उनकी लाश उगलान दरवाजे की नहर में फेंक दी जाती। यह बात उस वक्त की है, जब कि राज्य में कोई गड़बड़ी नहीं हुई थी। लेकिन जब कारीलोफ

वाली लड़ाई हुई, तो उसके दो सप्ताह बाद तक लोग बतलाते हैं, कि आदमियों को कीड़े-मकोड़े की तरह मारकर उनकी लाशों को गलियों में छोड़ दिया गया था। खैरियत हुई, कि मैं उस वक्त बुखारा में नहीं था, नहीं तो इस सारी खूँरेजी और हत्या-कांड को देख कर अपने को न रोक, बेकार ही मारा जाता। उस समय लोगों को अकेले-अकेले ही नहीं, बल्कि झुंड-के-झुंड मारा गया। जब कि जिलतप्पे की ओर हम आ-जा रहे थे, उस समय मैंने एक कपास के जले हुए कारखाने को देखा। वहाँ एक कुंड में आदमियों की हड्डियों का ढेर देख, मैंने अपने साथियों में से एक से पूछा, जो कि वहीं का रहने वाला था——

"क्या यह हड्डी जंग के शहीदों की हैं? ओह, इनको कब्र में दफनाया क्यों नहीं गया? इन्हें इस हालत में क्यों छोड़ दिया गया?"

"यह जंग के शहीद नहीं," उसने जवाब दिया—"बल्कि बरबरी और ताजिक परदेशी थे, जो कि इस कारखाने में रूसी मजूरों के साथ काम करते थे। यह कारखाना-बुखारा के एक जदीद की मिलकियत थी। जब जदीद और बोलशेविक हार खाकर कागान से भागे, तो मजूरों ने भी अपने कारखाने को छोड़ कर समरकन्द का रास्ता लिया। लेकिन परदेशी ताजिक यहीं रह गये। इसी समय हम यहाँ आ पहुँचे। हमारी पल्टन के अफसरों ने हुक्म दिया, और हमने इस कारखाने के आदमियों को कत्ल कर डाला। जब हमने मजूरों को मारना शुरू किया, तो उन्होंने कहा, 'हम ताजिक हैं। हम मुसलमान हैं। क्यों हमें मार रहे हो? हमारा कसूर यही है, कि रूसी मजूरों के साथ चलने के लिये कहने पर भी हमने उनकी बात न मानी, इस्लामी बादशाह की शरण में रहना पसन्द किया। क्या उन लोगों के साथ यही न्याय है, जिन्होंने इस्लाम के बादशाह से लड़ाई नहीं लड़ी, बल्कि उसके साये में रहना चाहा, और रूसियों के साथ नहीं भागे?' उन्होंने बात बनाके हमें धोखे में रखना चाहा, और चाहा कि हम उनकी हत्या न करें।"

"लेकिन क्या उन्होंने झूठ कहा था? या सचमुच युद्ध में शामिल हुए थे?" मैंने अपने साथी से पूछा।

"नहीं, वह सच बोलते थे। वह अमीर के खिलाफ जंग में शामिल नहीं हुए थे, और हमेशा इस्लामी बादशाह की हिमायत करके बैठे रहने का दावा कर सकते थे। लेकिन जिन लोगों ने जार-जैसे एक बड़े बादशाह को तख्त से उतार दिया था, क्या वह मजूर नहीं थे? जिन लोगों ने बुखारा में जदीदों की सहायता करते हुए, जनाब आली अमीर के खिलाफ तलवार उठायी थी, क्या वह मजूर नहीं थे? यह भी आज न सही, तो कल जनाब आली के खिलाफ तलवार उठायेंगे। इसीलिये हमने उन काफिरों की बात को कान में न ला, आँख मूँद कर सभी को काट-काट कर उसी कुंड में डाल दिया, जिसमें कारखाने के लिये पानी जमा रखा जाता था। फिर कारखाने में जो कीमती चीजें मिलीं, उन्हें लेकर कारखाने के मकान और गोदाम में आग लगा, उसे जलाकर खाक कर दिया। कारखाने के जलते समय यह मुर्दे पानी के भीतर थे, इसीलिये जल नहीं सके, नहीं तो इनकी राख भी कारखाने की राख के भीतर एक होकर न दिखायी पड़ती। पीछे दूसरे भगोड़े यहाँ पहुँचे, जिन्होंने पानी पीकर कुंड को सुखा दिया, और मुर्दे दिखलायी पड़ने लगे। पशु-पक्षियों ने इनके गोश्त खा लिया। और अब यहाँ हड्डियों का ढेर भर बचा हुआ है।

अपरिचित पुरुष ने अपनी बात को समाप्त करते हुए कहा——"अगर यह कहानी किसी के मुँह से सुनता, तो विश्वास नहीं करता, लेकिन उन हड्डियों को अपनी आँखों देख, और उन हत्यारों में से एक के बयान को सुनकर विश्वास करने के लिये मैं मजबूर हुआ। यह देखकर मुझे बड़ा ताज्जुब हुआ, कि जुल्म और अत्याचार इस सीमा तक पहुँच सकता है, इस्लामी बादशाह के नाम से इस्लामी सरकार के शासन में गरीब बेगुनाह मुसलमानों को इतनी बेदर्दी से मारा जा सकता है!"

अदीना इस भीषण कथा को सुन कर, बदला लेने के जोश के कारण गुस्से से पागल हो गया। उसकी आँखें अंगारे की तरह लाल थीं। उसने अपने सूखे हाथों को हिलाते हुए कहा——"ऐ बिरादर, वे ताजिक वस्तुतः अपराधी थे। उनका सबसे बड़ा गुनाह था अज्ञान। उनका बड़ा गुनाह यही था, कि उन्होंने नहीं समझा, कि दीन और धरम, जाति और कौम का नाम एक हथियार है, जिससे उनको धोखे में रखा जाता है, जिसमें वह अपने दुश्मन को बरबाद करके, उनका किस्सा खत्म न कर दें। अगर गाँव के किसान तथा गरीब इस बात को नहीं जानते तो उनका दोष नहीं। लेकिन मजूर तो कारखाने में इकठ्ठा हो कर काम करते हैं, उन्हें अपने वर्ग के शत्रुओं के धोखे-फरेब को जानना चाहिये था। आखिर उनके बीच में भी कोई समझदार रहे होंगे। यदि उनमें नहीं, तो रूसियों से समझदारी सीख सकते थे। अवश्य ये समझदार मजदूर अपने साथ काम करने वाले मुसलमान मजदूरों को समझा सकते थे, कि अरबाबी और दौलतमन्दों की धार्मिकता, पूँजीपतियों की जाति-भक्ति का धोखा किस के वास्ते है। दुखियों, गरीबों, मजूरों को मुक्ति पाने का यही रास्ता है, कि चाहे वह किसी धर्म और जाति के हों, उन्हें चाहिये, कि सब एक होकर बादशाह और उसके अत्याचारी आदमियों के खिलाफ, जुल्म और अत्याचार के खिलाफ, पूँजीवाद और अमीरी के खिलाफ खड़े हो जाएँ, और अपने वर्ग के शत्रुओं का कभी विश्वास न करें, उनकी बात को ठीक न समझें। ऐसा होने पर भी 'हम एक दीन के और एक जाति के हैं' कह कर, उन्होंने भेड़ों की तरह अपने को आदमखोर दुश्मनों के हाथ में दे दिया। क्या यह अपराध नहीं था?......यह अपराध और दंड बीत चुके। लेकिन हम इन बातों से शिक्षा लें, और बाद में जानें कि हमारे दुश्मन कौन हैं, और अपने भाइयों के खून का बदला लेने के लिये तैयार हो जायं, तो उन बेगुनाहों का खून बेकार नहीं जायेगा।"

शाह मिर्जा ने अदीना की ओर देखते हुए कहा——"खैर, रहने दे। अपने को बहुत तकलीफ में मत डाल। तेरे ही कहने के अनुसार यह बातें गुजर चुकीं। शायद इस

घटना से शिक्षा लेने के लिये गरीब और मजूर आगे सजग रह कर काम करेंगे। अब आगे की कहानी को सुन। (अपरिचित पुरुष की ओर निगाह करके बोला) फिर क्या हुआ ?"

अपरिचित पुरुष ने कहा—"क्या हुआ ? मैंने देखा, कि अगर गरीबों के खून को बहाने में जरा भी हिचकिचाहट की, तो मुझे भी मार डालेंगे, इसलिये चुपके से चल देने का इरादा किया। इसके बाद हमारी पलटन को एक योकातची तुकशाबा की अधीनता में करमीना भेज दिया गया। योकातची अमीर के पुराने साथी-समाजियों में से था। उसका काम था, यूरोप की बदचलन औरतों से लेकर देश के कलन्दर-बच्चों तक को अमीर के पास भेजना। करमीना सीमा पर बोलशेविकों के इलाके के समीप था, इसलिये योकातची को उस जगह भेजा गया। जब हम करमीना पहुँचे, तो हमारी पलटन ने लूट-मार का बाकायदा इंतजाम किया। हर रोज पलटन की अलग-अलग टुकड़ियाँ समरकन्द के रास्ते की देख-भाल और जूले-मलिक की रखवाली के लिये घूमती फिरतीं। कोई आदमी रास्ते में मिल जाता, तो 'तू जदीद और बोलशेविक है' कह कर, उसे पकड़ लेते। पूछ-ताछ के बाद यदि सन्देह हुआ, तो उसे बन्दी बनाते, नहीं तो छोड़ देते। जो उनका विरोध करता, या नाराजी प्रकट करता, उसे मार डालते। बन्दियों के हाथ और गर्दन को बाँध कर करमीना में योकातची के पास भेज देते। वह अगर उचित समझता, तो बन्दी को बुखारा भेज देता, नहीं तो चन्द रोज जेल में रख, सख्त तकलीफ दे कर, रिश्वत ले, किसी विश्वास के आदमी की जमानत पर छोड़ देता।

"पकड़े हुओं में से कुछ जब तक चोरों के हाथ में रहते, तब तक मुँह न खोल, करमीना में जा योकातची के पास शिकायत करके, इन्साफ पाने की दरख्वास्त देते। वह कहता, 'कौन जानता है, कि तुम्हारे माल को हमारे आदमियों ने लिया ? शायद तुम बोलशेविक या जदीद हो, और हमारे जनाब आली पर जान न्योछावर करने वाले इन सिपाहियों को बदनाम करना चाहते हो। मेरी आँखों के सामने से दूर हो जाओ, नहीं तो अभी जेल में भेजूँगा।"

"लूट-खसोट करना, बच्चे-बीबियों पर हाथ साफ करना इन शेरबच्चोंका आम काम था। इन घटनाओं को देखते हुए मैं अपने को जरा भी रोकने की शक्ति नहीं रख पाता था। मेरी यही इच्छा हुई, कि जैसे ही मौका मिले, इन जल्लाद के गिरोह से निकल भागूँ। लेकिन मैं नहीं जानता था, कहाँ जाऊँ और कैसे भागूँ। अपने देश को भाग सकता था लेकिन अगर रास्ते में पकड़ा जाता, तो मुफ्त में मारा जाता, या फिर से जेल में पड़ना तो निश्चय ही था। समरकन्द और ताशकन्द की तरफ भागने की हिम्मत नहीं होती थी, क्योंकि मुझे लोगों ने बतलाया था, कि जो कोई बुखारा से उधर भागता है, उसे बोल-शेविक मार डालते हैं, और वहाँ के बाशिन्दे स्वयं बोलशेविकों के हाथ से बहुत बुरी तरह सताये जा रहे हैं। बोलशेविकों के इलाके से जो बाय और मुल्ला भागकर बुखारा की ओर गये थे, उनकी झूठी-झूठी बातों को एक को चार करके अमीर के आदमियों को सुना, उन्हें पक्का करते थे। अगर बुखारा से भागे हुओं की बात चलती, तो कह देते, 'यह काफिर बागी मुर्दे हैं, जो यहाँ से भाग गये हैं। अब इन काफिरों के लिये दुनिया में कोई नामो-निशान नहीं रह गया।'।"

"इसी समय एक आदमी को कत्ताकुरगाना की ओर से बन्दी बना कर ले आये। योकातची ने उस बन्दी से पूछा, 'ऐ मुर्तिद (पतित), अब जब कि तू मेरे हाथ में आया है, कुत्ते या गधे की मौत मरेगा। यदि सच बता दे, कि बुखारा से भागे हुए आदमी समर-कन्द और ताशकन्द में जाकर क्या काम करते हैं, और जनाबआली (अमीर बुखारा) के विरुद्ध क्या कार्यवाई कर रहे हैं, बोलशेविकों के साथ उनका कैसा सम्बन्ध है; तो जनाब आली से प्रार्थना करके हम तेरी जान बख्शवा देंगे।"

"बन्दी ने कहा—'व्यर्थ का मुझे धोखा मत देने की कोशिश कर। मैं उन बेव-कूफों में नहीं हूँ. कि तेरे जैसे झूठों की बात पर विश्वास करूँ। अच्छी तरह समझ ले, कि मैं मरने से नहीं डरता। जिस वक्त मैं या मेरे दूसरे साथी अमीर के विरुद्ध उठ खड़े हुए, उसी समय हमने मौत को अपनी गर्दन पर उठा लिया। अब जब कि मैं तेरे हाथ में पड़ा हूँ, अवश्य मारा जाऊँगा, इसमें जरा भी सन्देह नहीं है। लेकिन यह अच्छी तरह समझ रख, कि मेरे मारे जाने से तुझे और तेरे अमीर को कुछ भी नफा नहीं होगा। केवल मैं ही नहीं, बुखारा से भागे यदि सारे ही लोग मारे जायें, तो भी तुम्हारे प्राण बचने के नहीं। मेरे पीछे आने वाले तुम्हें दुनिया से नष्ट कर देंगे, भूमंडल को तेरे-जैसे मुर्दारों के अस्तित्व से पाक कर देंगे। बुखारा के भगोड़ों की बात क्या पूछता है। उनकी कोई बात छिपी नहीं है, जिसे कि मैं कहूँ। दुनिया जानती है, कि वह रात-दिन इस दिन के लिये तैयारी कर रहे हैं, जब कि आकर तुमसे बदला लेंगे। वह शुभ दिन भी बहुत नजदीक है। अगर विश्वास नहीं करता, तो जल्दी ही अपनी आँखों से उसे देखेगा। बुखारा के भगोड़ों का बोलशेविकों के साथ क्या संबंध है, इसे भी सब लोग जानते हैं। जिस समय वह भाग कर बोलशेविकों की छाया में गये, उसी समय से उन्होंने अपने भाग्य को उनके भाग्य के साथ बाँध दिया।"

"योकातची ने जब यह आग भड़काने वाली, निर्भीक बात सुनी, तो उसने गुस्से में लाल होकर उसी वक्त चाहा, कि बन्दी को टुकड़े-टुकड़े करके उसकी लाश को आग में जला दें, लेकिन इस शिकार को बड़ी मुश्किल से वह पकड़ पाया था, इसलिये उचित समझा, कि उसे अमीर के पास भेंट के तौर पर भेजे। अपने गुस्से को शान्त करने के लिये, उसने उसकी गर्दन पर चंद कोड़ों की मार से ही सन्तोष किया। उसने बन्दी को दौड़ाहों के साथ तुरन्त बुखारा भेज दिया। अमीर ने उस बन्दी के मुँह से जब उसी तरह की निर्भीक बातें सुनीं, तो तलवार से टुकड़े-टुकड़े करवा कर उसे मरवा डाला। पीछे पूछ-ताछ करने पर मालूम हुआ, कि यह बन्दी मिर्जा उसमान नामक एक जदीद था, जो कि बुखारा भागकर ताशकन्द जा, वहाँ बोलशेविक बन गया था। इसी समय कत्ताकुर-

गाना के नंबरदारों में से एक ने उसे ताशकन्द से अपने यहाँ बुलवाया, और फिर पकड़ कर योकातची के पास शेरबच्चों के साथ भेज दिया।"

"मुझे इस घटना से पता लग गया, कि तुर्किस्तान में शरण लेने की जगह है, और वहाँ गये भगोड़े काम को आग बढ़ाने की तैयारी कर रहे हैं। मैंने समरकन्द और ताशकन्द की ओर भागने का इरादा कर लिया। एक दिन सबेरे के वक्त करमीना के रेलवे स्टेशन पर गया, और अपने दिल की हालत को रेलवे-मजूरों से कहा। उन्हीं की मदद से मैं भाग कर यहाँ आ सका।"

अदीना ने दूसरी बार करातेगिन की बात को लेकर, उस आदमी से पूछा—करातेगिन में किस अपराध के लिये बन्दी हुआ था?"

उस पुरुष ने कहा—"वह बात भी बड़ी विचित्र है। मैं फरगान से लौटते ताजिक मुसाफिरों के साथ करातेगिन जा रहा था। सीमा पर अमीर के आदमियों ने मुझे जदीद कहकर......"

अपरिचित पुरुष अभी अपनी बात को खतम न कर पाया था कि अदीना ने अपने शरीर को सीधा कर, बड़े ध्यान से उसकी आँखों की ओर देखते हुए, चिल्ला कर कहा—'बाय, तू शरीफ नहीं है क्या?"

अपरिचित पुरुष एकाएक इस बात को सुनकर, बड़े अचरज में पड़ गया और उससे सवाल-जवाब करने की जगह बड़े ध्यान से उसकी ओर देख कर, बोल उठा—"बाय, तू अदीना नहीं है क्या?"

दोनों पुराने दोस्त अब सवाल-जवाब कैसे करते? उन्होंने एक दूसरे को गले लगाया, मुँह को चूमा, और फिर अपनी जगह बैठ कर, दुबारा हाल-चाल पूछना शुरू किया।

शरीफ़

यह दृश्य बड़ा ही विचित्र था। एक-दो क्षण ही पहिले अदीना उस अपरिचित पुरुष का हाल-चाल जानने के लिये कोशिश कर रहा था, और अब वह उसका पुराना मित्र निकल आया। अब संकोच करने की आवश्यकता नहीं थी। वह उससे हर एक बात पूछ सकता था, और आपबीती को भी सुना सकता था। सबसे ज्यादा प्रसन्नता थी शाह मिर्जा को। एक घंटा पहिले उसने अपनी आँखों से देखा था, कि वह आदमी अदीना को नहीं पहिचानता, और अदीना को भी उसका कोई परिचय नहीं था। क्या बात हुई, कि वे दोनों अपरिचित एकाएक इतने मित्र हो गये, और एक-दूसरे को नाम और पता देने लगे।

इस विचित्र घटना ने शाह मिर्जा को भी अचरज में डाल दिया। उसे बड़ी इच्छा हुई, कि इसी क्षण रहस्य को जान ले, लेकिन अदीना ने शाह मिर्जा की इच्छा पूरी होने दी। वह बीच में बोल उठा—"अका, शरीफ मेरा बहुत ही प्यारा मित्र है। अगर तकलीफ न हो, तो भोजन तैयार कर लो। पुलाव पके, तो बेहतर हो। मैं भी आज परहेज को छोड़ कर तुम्हारे साथ आज पुलाव खाऊँगा!"

वस्तुतः शरीफ के साथ परिचय होना या पुराने परिचित शरीफ से मिलना अदीना के लिये बड़ी प्रसन्नता की बात थी। वह खुशी के मारे फूला नहीं समाता था, और उसे मालूम हो रहा था, कि उसकी बीमारी चली गयी है। वह अपने में शक्ति अनुभव कर रहा था, इसीलिये समझता था, कि इस समय परहेज तोड़ने में कोई हर्ज नहीं।

शाह मिर्जा ने अदीना से कहा—"दो देग मेरे पास हैं। एक में तेरे लिये मुर्ग का एक कटोरा शोरवा पकाऊँगा। जब तक तू अच्छी तरह स्वस्थ न हो जाय, तब तक परहेज को मत छोड़।"

"मेरे लिये तकलीफ न करो रहने की जगह पर भोजन तैयार है। एक दूसरे का कुशल-आनन्द मालूम हो गया, यही बहुत है। अभी मैं भोजन नहीं करना चाहता।" कहते हुए, शरीफ ने क्षमा माँगनी चाही।

"स्वयं भी हमें भूख लगी है। भोजन पकाना मेरे लिये जरा भी तकलीफ की बात नहीं है। अगर तुम न होते, तब भी कोई चीज पकाकर खाते ही।" कहते, शाह मिर्जा चायनिक में ताजी चाय बना कर ले आया, और खुद देग के नीचे आग जलाने चला गया।

अदीना और शरीफ दोनों चायनिक की चाय को अपने बीच में रखकर, निकाल कर पीते हुए, फिर बात करने में लग गये। अदीना ने समझा, कि शरीफ उसकी सारी बातों से परिचित नहीं है। इसलिये पहिले उसने बीच के समय में जो कुछ अपने ऊपर बीती थी, उसे कहा। फिर अपने घरवालों की खबर जानने के लिये बोला—"भाई, मैंने इस जवानी और थोड़ी सी जिन्दगानी में ही दुनिया में बहुत-कुछ देख लिया है। तू जानता है, कि पहिली बार कितनी मुश्किल से अरबाब कमाल के हाथ से भाग कर फरगाना आया था। जब हम देश लौट रहे थे, उस वक्त दूसरे मुसाफिरों की तरह मेरी चीजों को भी जकातचियों ने कैसे लूटा, यह भी तुझे मालूम ही है।" इस तरह उसने आज तक जो उसके सिर पर बीती थी, एक-एक करके, सबको कह डाला। और अन्त में कहा—"एक साल से अधिक हुआ, कि नानी की कोई खबर नहीं मिली। अगर तू उनके बारे में कुछ जानता हो, तो बतला।"

"जिस वक्त मुझे सीमान्त पर बाँध कर ले गये," कहते हुए शरीफ ने बात शुरू करनी चाही। किन्तु उसे बीच में ही काट कर, अदीना ने कहा—"सीमान्त पर तुझे

बंदी बनाया गया, यह मैंने खुद देखा था, इसलिये उसके बारे में और दुहराने की जरूरत नहीं। अपने परिवार की खबर न मिलने के कारण मेरा चित्त बड़ा व्याकुल है। अगर उनके बारे में कुछ जानता हो, तो जल्दी कह, जिसमें मेरी व्याकुलता दूर हो।"

"उतनी खबर तो नहीं मालूम है," शरीफ ने कहा—"जिस वक्त बन्दी बनकर तुझसे विदा हुआ, उस वक्त से लेकर बुखारा भेजे जाने के समय तक मैं बन्दीखाने में ही रहा," यह कहते, शरीफ ने बात को टालना चाहा।

लेकिन 'उतनी खबर भी नहीं मालूम है,' इस वाक्य को सुनकर, अदीना के दिल में कुछ सन्देह पैदा हो गया। उसने शरीफ को बात से हटने न देकर, फिर पूछा—"यदि थोड़ा ही मालूम है, तो भी जल्दी कर। बतला, वह बुरी है या अच्छी, जिसमें कि मेरे दिल को धीरज मिले।"

शरीफ को भागने का कोई रास्ता नहीं था। जिस बात को वह कहना नहीं चाहता था, उसे अब कहना आवश्यक हो गया। लेकिन वह कोशिश करता रहा, कि बात को थोड़ी और हल्की करके कहे। उसने कहानी शुरू करते हुए कहा—"थोड़ा-सा धीरज धर। जो मुझे मालूम है, वह बतलाता हूँ, जो बात मैं तुझसे कहने जा रहा हूँ, उसी में तेरा भी मतलब पूरा हो जायेगा। जब मुझे बन्दी बनाकर करातेगिन ले गये, तो कुरगान के फाटक पर मेरे सभी कपड़ों को उन्होंने उतार लिया, और मुझे एक छोटी कोठरी में रखकर, बाहर से ताला बन्द कर दिया। एक घड़ी बाद कुछ आदमियों के साथ मीर गजब (कोतवाल) खुद कोठरी में आया। उसने मेरा और मेरे बाप का नाम रहने की जगह और फरगाना में क्या काम करता हूँ, आदि-आदि बातें पूछीं। उसने जो-जो बातें पूछीं, मैंने उनका ठीक-ठीक जवाब दिया।

मीर गजब ने पूछा—'जदीदी (जदीदवाद) को कहाँ से सीखा?'

मैं जदीद-मदीद को नहीं जानता,' मैंने कहा।

"मीर गजब ने मेरे पास खड़े अपने दो आदमियों को हुक्म दिया। उन दोनों प्रेत-जैसे आदमियों ने मेरे मुँह पर खींच कर थप्पड़ मारना शुरू किया, जिससे सिर से धुआँ निकल पड़ा, आँखों के सामने अँधेरा छा गया। दो-चार बार मारने के बाद उन्होंने मुझे पेट के बल जमीन पर गिरा दिया। दोनों ने मेरी बाँहों को पकड़ कर सीधा किया, और फिर मीर गजब के सामने उकड़ूँ बैठा दिया। मीर गजब ने गुस्सा में आकर, कहा—'बादशाही एकबाल को देखा? अब जल्दी कर, सच-सच बता, जिसमें साँसत से छुट्टी पाये!'

"मैंने कहा—जिस चीज के बारे में मैं नहीं जानता, उसे कैसे बताऊँ? मेरे सिर पर जो भी पड़ेगी, यही समझूँगा, कि मेरे भाग्य में यही बदा था।"

"'बेतें ले आ,' कह कर, मीर गजब ने अपने एक आदमी को हुक्म दिया।

"वह 'बहुत अच्छा, तकसीर' कहते गया, और बीरी की कमचियों का एक मुट्ठा, जिसमें तीस-चालीस कमचियाँ होंगी, लाकर, घर के भीतर पटक दिया।"

"मीर गजब ने कहा—'बतला, नहीं तो इन बेतों की मार से तेरे शरीर के टुकड़े-टुकड़े उड़ जायेंगे, और तू बड़ी बुरी मौत मरेगा'।"

'क्या कहूँ?'

'जदीदवाद के बारे में जो कुछ जानता है।'

'मैंने कहा नहीं, कि मुझे कुछ भी मालूम नहीं?'

"मीर गजब ने आँखें लाल-लाल कर, अपने आदमियों की ओर नजर करके कहा—'बात से काम नहीं चलेगा। थोड़ा ठहरो। इस पतित को पछाड़ो।'

"उन्होंने पेट के बल मुझे जमीन पर लिटा दिया। फिर एक ने मेरी गर्दन पर सवार होकर, मजबूती से दबाये रखा। दूसरे ने पैरों की ओर खड़े हो, मेरे पैरों को खूब अच्छी तरह पकड़ा। दो आदमी हाथ में कमची लेकर दो तरफ खड़े हो कन्धे से लेकर जाँघ तक अनगिनत बेंत मारने लगे। कुछ देर पीटने के बाद, मीर गजब ने फिर कहा—'ठहर, अभी क्या हुआ है? अभी और साँसत होगी। तब देखेगा'!"

"इसके बाद उन्होंने फिर मुझे खड़ा कर दिया। मुझमें बैठने की भी शक्ति नहीं रह गई थी।"

"मीर गजब ने कहा—'कैसा है तू! अभी एक लकड़ी भी तेरे ऊपर टूटी नहीं है, लेकिन देख रहा है, कि तेरी क्या हालत हुई! क्यों सच-सच नहीं बतलाता? यह बादशाही हुकूमत है। इसके बाद तेरी जाँघ और नखों में खपाचियाँ ठोंकी जाएँगी। सारे शरीर से खून बहने लगेगा। फिर नमक छिड़का जायगा। तेल गरम करके सिर पर डाला जायेगा। फिर तू सब स्वीकार करेगा, और एक-एक करके सारी बातें उगल देगा। अब भी तेरे लिये मौका है, कि अपनी तरुणाई पर रहम खा। अपने को इस अजाब में मत डाल, और जदीद होकर जो कुछ काम किया है, उसे बतला दे'।"

'मैं...........'

"मीर गजब ने अपने एक चपरासी से कहा—'अब थोड़ा गरम हुआ। आज नहीं कहा, लेकिन कल जरूर कह देगा। आज रात तक ठहर जाओ। इसे खूब सोचने-विचारने का मौका दो। यदि कल भी नहीं बोला, तब उपाय करेंगे।......आज देर भी हो गयी। जो कुछ करना होगा, कल करेंगे। इसकी गर्दन में जंजीर और पैरों में कुन्दा डाल दो। अच्छी तरह ध्यान रखना, कहीं भाग न जाये।' कह कर, वह चला गया।"

"सिपाहियों ने गर्दन में जंजीर डाली, और पैरों में कुन्दा किया। कुन्दा करने के समय पैरों को जो तकलीफ हुई थी, उसे याद करने से आज भी रोंगटे खड़े हो जाते जाते हैं।" कहते हुए, शरीफ ने अपने पैर अदीना को दिखलाये। अब भी उसके पैरों में सफेद दाग पड़े हुए थे।

शरीफ ने फिर अपनी बात आरम्भ करते हुए, कहा—"हाँ, उस रात को सुबह होने तक मैं सो नहीं सका। एक तरफ पैरों का दर्द नींद आने नहीं देता था; दूसरी ओर

अगले दिन की साँसत का ख्याल आता, तो पलक पर पलक कहाँ पड़ सकती थी ? सबेरा हुआ। सूर्य उग आया। नाश्ते का वक्त आया। दिन बहुत चढ़ आया। अब भी मीर गजब का कहीं पता नहीं था। दो रोज हो गये थे, किन्तु बेंत खाने के सिवा और कुछ खाने को मिला नहीं था, तो भी भूख का कहीं पता नहीं था। लेकिन क्या होने वाला है, इस डर ने मेरी हालत को बहुत तंग कर दिया था। मेरा गला सूख-सूख जाता था। कुछ देर बाद कोई मेरी कोठरी का दरवाजा खोलने लगा। मैं दूसरी साँसत के लिये अपने को तैयार करने लगा। द्वार खुल गया। इस समय एक बन्दीवान (जेल का सिपाही) एक हाथ में पानी का गड़वा (आफताबा) और दूसरे में रोटी लिये मेरे पास आया, और बिना कुछ बात किये हुए ही, कुन्दे से मुझे निकाल कर, कोठरी के कोने में मौजूद गढ़े की तरफ इशारा करके, कहा—'पाखाना जाने की जरूरत हो, तो वहाँ कर।'

"मेरे फरागत होने के बाद उसने फिर पैरों को कुन्दे में डाल दिया। लेकिन इस बार उसे उतना कड़ा नहीं किया। फिर उसने मुझसे कहा—मैंने तेरे पैरों को आराम से रहने दिया है। इस खिदमत को भूलना नहीं। अगर तेरा कोई सगा-सबंधी आये, तो उसे बतला देना, जिसमें मुझे वह अच्छा खिदमताना दे।'

"मैं कुछ बोला। उसके बाद वह आफताबे के पानी और रोटी के टुकड़ों को मेरे सामने रख, दरवाजे में दुबारा ताला बन्द कर चला गया।

"बन्दीबान हफ्ता भर प्रतिदिन एक बार आता, मुझे फरागत के लिये खोलता, फिर दुबारा बन्द करते हुये खिदमतान की बात करता, और वही रोटी-पानी सामने रख कर चला जाता। आठवें दिन कुछ सबेरे ही दरवाजा खुला। दो बन्दीबानों ने आकर, मेरे गर्दन से जेल (जंजीर) और पैरों से कुन्दे को अलग किया, और मेरे हाथों को पीठ पर बाँधा। इस हालत में जब मुझे दूसरी कोठरियों के बन्दियों ने सूराख से देखा, तो उन्होंने मुबारकबादी दी। मैंने पूछा—'भाइयो, यहाँ मुबारकबादी की कहाँ जगह ? अगर मैं मुक्त होने वाला होता, तो मेरे हाथों को न बाँधते। इन्होंने हाथों को बाँध दिया, जिससे मालूम होता है, कि मेरी कैद सदा के लिये है। फिर क्यों मुबारक-बाद दे रहे हो ?'

"बन्दियों में से एक ने कहा—'तेरे हाथों को पीठ पर बाँधा गया है, जिससे स्पष्ट है, कि तू मारा नहीं जायेगा। अगर मारना होता, तो सामने की ओर बाँधते। मारे जाने से तू छुट्टी पा चुका है। इसके लिये तू मुबारकबादी के लायक है। तेरी चाहे जो साँसत हो, वह मौत से कम ही होगी।'

"मैंने अपने दिल में कहा, 'यह ढंग मृत्यु से छुट्टी पाने का निशान, बुरा नहीं है। इसलिये आम रिवाज के मुताबिक मैं भी मरने से छुट्टी पाने की बात को अमीर की सरकार का इन्साफ कह सकता हूँ।''

"बारे, मुझे उसी तरह हाथ बाँधे हाकिम के सामने ले गये। यसावुलबाश हाथ में डंडा लिये, वहाँ पास में खड़ा था। हाकिम ने उससे पूछा—'शरीफ जदीद यही है ?'

" 'यही है।'

" 'ले जाओ', कह कर, हाकिम ने इशारा किया।

"मुझे खींचते हुए कुरगान के फाटक के नीचे ले गये, और वहाँ मेरी पीठ को नंगी करके चालीस बेंत मारा। फिर यसावुलबाश ने कहा—'जबाब आली के नाम से अब दुआ माँग !'

"लेकिन जनाब आली के लिये दुआ करने की बात तो अलग, मुझमें उसे गाली देने की भी ताकत नहीं थी। इसके बाद यसावुलबाश ने बन्दीखाना ले जाने के लिये मुझे मीरशब के हाथ में दे दिया। मीरशब ने मुझे ले जाने के लिये अपने आदमियों को कह दिया यद्यपि बन्दीखाने में भी मेरे गले में जेल और पैरों में जंजीर रही, यद्यपि पैरों को कुन्दे में नहीं डाला गया। बन्दीखाने में मेरे सिवा और भी कितने ही बन्दी थे। उनमें से हर एक ने मुझसे बन्दी बनने का कारण पूछा। मैंने उन्हें अपनी कथा कह सुनायी।"

"एक दिन यसावुलबाश का एक आदमी जेल में आया, और उसने मुझसे मेरे सगे-संबंधियों का नाम पूछा। बूढ़ी माँ के सिवा मेरा कोई नहीं था, कि मैं उसे बतलाता। उसने कहा—'अगर तू चाहता है, और मुझे अच्छा खिदमताना देने का वादा करता है, तो मैं तेरी माँ को खबर देकर उसे देखने के लिये बुलवा भेजता हूँ।'

"मैंने कहा—'अभी जरूरत नहीं है बल्कि उसे न बतलाना ही ठीक है।' यदि बेचारी माँ मुझे इस हालत में देखेगी, तो दुख के मारे मर जायेगी।

"लेकिन मेरे ऐसा कहने के बाद भी खिदमताना पाने की आशा से माँ को उन्होंने खबर दी। चार दिन बाद बेचारी बुढ़िया आयी। मेरे लिये अपने साथ एक कुर्त्ता, एक मुर्गा यखनी के लिये, थोड़ी-बहुत रोटी और एक कटोरी घी लेती आयी। बन्दीखाने में दरवाजे पर बन्दीबानों ने मुर्ग और घी को खिदमताना कह कर, उसके हाथ से ले लिया, और रोटी तथा कपड़ा मेरे हिस्से में रख रखा। माँ जेलखाने के भीतर आकर, मेरे पास आयी। उसने मुझे उस हालत में देखा, जिसमें कि वह अपने दुश्मन को भी देखना न चाहती। मेरे बाल बिखर हुए थे, मुँह पर झुर्रियाँ पड़ी थीं, बहुत रोने के कारण आँखें लाल हो गयी थीं, आवाज भी बहुत सुस्त और करुण थी, जिसको मुँह से निकालने में भी मुझे बड़ी तकलीफ होती थी। वह बेचारी भी बहुत कमजोर और क्षीण हो गयी थी, और चिल्लाने की उसमें ताकत नहीं थी। मुझे देखकर रोते हुए, उसने मेरे सिर और मुँह को चूमा, फिर बेहोश होकर गिर पड़ी। बहुत कोशिश की, कि वह होश में आवे और आँखों को खोले, लेकिन एक बार फिर वह मेरी ओर चिल्लाकर, दुबारा बेहोश हो गयी। मुझे निश्चय हो गया, कि अब उसके प्राण नहीं बचेंगे। दूसरे

बन्दी भी, मेरी सहायता के लिये आ गये। थोड़ा ठंडा पानी लाकर, उसके मुँह पर छींटा दिया गया। वह होश में आ, मेरे सामने उठ बैठी। मेरी हालत और बन्दी होने के कारण के बारे में भी पूछा।"

" 'यही मेरी भाग्य, तेरा दुर्भाग्य है,' कह कर मैंने उसे जवाब दिया।

"एक घंटा बैठी रहने के बाद, हर हफ्ता एक बार देखने के लिये आने का वादा करके, वह चली गयी। बाहर जाते वक्त जेलखाने वालों ने उससे कहा, कि यदि देखने के लिये आते वक्त हर बार एक कटोरी घी खिदमताना नहीं लायेगी, तो अपने बेटे को नहीं देख सकेगी। बेचारी माँ अपने बेटे को देखने का लालच छोड़ना नहीं चाहती थी, और खिदमाताना के लिये हर बार एक कटोरी घी लाना भी उसकी शक्ति से बाहर था। शरीर में उसके इतनी ताकत नहीं थी, कि कहीं मजूरी करती। अन्त में वह भीख माँगने पर उतारू हुई, और घर-घर जाकर मेरे बन्दी होने और अपनी बदबख्ती की कथा सुनाकर, कैदखाने वालों को घी देने तथा अपने पास गाय या भेड़ न होने की बात कहते हुए प्रार्थना करती। अगर घर के मालिक के पास घी होता, और उसकी हालत पर उसे रहम आता, तो वह थोड़ा-सा घी दे देता। इस तरह कितने ही घरों में फिर कर कटोरी घी जमा करके, मुझे देखने के लिये आती। इस प्रकार घी के लिये भिखमंगी करती, वह शाम-सबेरे कोहिस्तान में इधर-उधर घूमा करती। जब तक मुझे बुखारा नहीं भेजा गया, माँ का यही काम था। उसके बाद उस बेचारी के सिर पर क्या पड़ी, सो मुझे मालूम नहीं। जो हो, आशा यही है, कि वह अब तक जीवित होगी।"

यह कह कर, शरीफ ने अपनी आप-बीती को समाप्त किया। कहानी के अन्तिम हिस्से पर पहुँचने के वक्त उसकी आँखों से कुछ आँसुओं की बूँदें गालों पर से बहने लगी थीं। रूमाल निकालकर उसने अपने आँसुओं को पोंछकर, मुँह बन्द कर लिया।

शरीफ की रामकहानी सुनने से अदीना बहुत प्रभावित हुआ था, और करीब-करीब अपनी उत्सुकता भी भूल चुका था, या समझने लगा था, कि उसने जो तकलीफें आज तक सही हैं, शरीफ की तकलीफें उनसे कहीं ज्यादा थीं। अब शरीफ अदीना की नजर में एक अपरिचित व्यक्ति नहीं था, या कि वह वही सरायवान था, बल्कि वह मानवता की एक भव्य मूर्ति था। वह ऐसा रत्न था, कि इतने जोर-जुल्म की आग में भी मलिन नहीं हुआ। इसीलिये अदीना को हिम्मत नहीं हुई, कि स्वार्थ के खयाल से अपने परिवार की हालत के बारे में खास तौर से जानने की इच्छा प्रकट करे। उसने शरीफ को तसल्ली देते हुए, कहा—"बिरादर रंज मत कर, अफसोस न कर दुनिया में और विशेषकर कोहिस्तान में हमारे तेरे जैसे तकलीफ में पड़े ताजिक ही केवल नहीं हैं, बल्कि न जाने कितने शरीफ, कितने अदीना और कितने संगीन जेलों में पड़े अन्याय के शिकार हुए मिट्टी में मिल गये। अगर ऐसे दुख और तकलीफ में पड़े मैं और तू मर गये होते, तो हो सकता है, कि हम दुनिया से बेनामोनिशान ही मिट कर चले जाते। चूंकि

अत्याचारियों से पीड़ितों की संख्या बहुत है, तकलीफ में पड़े लोग अनगिनत हैं, इसलिये आज न सही, कल वह जरूर उठ खड़े होंगे, और जिन्होंने आज हमें बरबाद कर रखा है, उन्हें नेस्तोनाबूद करके छोड़ेंगे। विशेषकर, इस जमाने में, जब कि रूस के मेहनतकशों ने मैदान में आकर जार के तख्त और ताज को, उसके रोब और दबदबे को, उसके सरदारों सहित मिट्टी में मिला दिया। ऐसे समय में अगर ताजिक गरीब भी उनके पथ-प्रदर्शन पर चलें, तो कभी मुमकिन नहीं है, कि इस क्रान्ति के तूफान के सामने अरबाब कमाल, मुल्ला खाकराह, हाकिम और अमीर खड़े होने की ताकत रख सकेंगे। देर हो या जल्दी, ताजिक मेहनतकश भी अपने लक्ष्य को पायेंगे, और कोहिस्तान के उत्पीड़ित जन भी आजाद होंगे। ऐसी हालत में मेरे और तेरे लुप्त होने से कोई डर नहीं, बल्कि इस रास्ते में अपने आपको कुर्बान करना मेरे और तेरे लिये एक बड़ी इज्जत की बात है। तेरी रामकहानी सुनकर मेरी हालत ऐसी हो गई है, कि यद्यपि नानी का प्यार और गुल बीबी की मुहब्बत की मेरे लिये बड़ी कीमत है, लेकिन उसके बारे में भी कुछ पूछने की इच्छा नहीं रह गई है।"

[illegible]

शरीफ ने अदीना को उसके परिवार के बारे में क्या बतलाया, इसे कहने से पहिले जरूरी है, कि हम अदीना के दूसरी बार फरगाना जाने के समय के बाद जो बातें करातेगिन में हुई थीं, उन्हें बतला दें। यह मालूम ही है, कि अदीना ने बीबी आइशा और गुल बीबी को बड़ी बुरी हालत में छोड़, फरगाना की यात्रा की थी। उनके पास खाने-पीने की कोई चीज नहीं थी, और न कोई उनकी पूछ-ताछ करने वाला ही था। बेचारी दोनों वस्तुतः बेकस और अनाथ थीं। सबसे बुरी बात यह थी, कि अरबाब कमाल सदा बदला लेने की ताक में रहता था। वह चाहता था, कि गुल बीबी का ब्याह अपने बेटे इबाद से करा दे। इस प्रकार उसका पुराना हिसाब भी बेबाक हो जायेगा, और अदीना तथा बीबी आइशा से बदला भी ले लिया जायेगा। अरबाब की बुरी नीयत को जहाँ-तहाँ से सुनकर, बीबी आइशा को बड़ी चिन्ता हुई। लेकिन उसे यह भी मालूम था, जिस तरह एक बार उसने अरबाब को डरवाया था, उसे याद कर वह दूसरी बार उसे परेशान करने की हिम्मत नहीं करेगा। सचमुच अरबाब कमाल बीबी आइशा से डरता था, इसलिये सीधे बीबी आइशा पर प्रहार करने की बात छोड़कर, उचित समय की प्रतीक्षा करके, उसने धोखा-फरेब का रास्ता पकड़ना पसन्द किया।

फरगाना और करातेगिन के बीच का रास्ता जाड़ों में बन्द हो गया, और आना-जाना भी रुक गया। इस समय अरबाब की आशा पनपी, और उसके पूरा करने

का इरादा अधिक मजबूत हो गया। उधर उसी परिमाण में बीबी आइशा का भय भी बढ़ गया। अरबाब कमाल ने सोचा, कि रास्ता बन्द हो जाने से दूर-गत अदीना मुर्दा-सा है। अब जैसे भी हो अपने मतलब को पूरा करना चाहिये। बीबी आइशा डरने लगी थी। अदीना को गये बहुत समय हो गया था। उसके आने की आशा क्षीण होती जाती थी। उसे डर था, कि इच्छा या अनिच्छा से, जैसे भी हो लड़की को दुश्मनों के हाथ में पड़ना पड़ेगा। वह कैसे एक सयानी लड़की को ऐसे दीन-हीन घर में सालों रख के रक्षा कर सकती थी ? वहाँ हर तरह के आक्रमण और जोर-जबरदस्ती की सम्भावना थी। फिर बुढ़िया भी 74 साल से ऊपर की हो चुकी थी। मौत किसी घड़ी भी सामने आकर खड़ी होने के लिए तैयार थी। अगर आज वह दुनिया में आँख मींच ले, तो इसी समय गुल बीबी के ऊपर दुश्मन टूट पड़ेंगे, यह निश्चित था, कि जिस बात ने बीबी आइशा को तसल्ली दी थी, वह इबाद की रुचि थी। इबाद बिलकुल नहीं चाहता था, कि गुल बीबी से अपना ब्याह करे, क्योंकि उसका दिल एक दूसरी जगह बँधा हुआ था। इबाद अपनी समवयस्क गुलन्दाम से बहुत मुहब्बत करता था। गुलन्दाम का बाप शाह नजर गाँव के बड़े लोगों में था। धन-दौलत और इज्जत-मरतब में वह अरबाब कमाल से कम नहीं था। दोनों बच्चे एक-दूसरे के लँगोटिया यार थे। इबाद की माँ और गुलन्दाम की माँ भी आपस में बहुत दोस्त थीं। इसके कारण दोनों परिवारों में बहुत आवा-जाही रहती थी। जिस वक्त इबाद और गुलन्दाम अभी दूध पीने वाले बच्चे थे, उसी समय दोनों के माँ-बाप उन्हें बहू और दामाद कह कर पुकारते थे। इबाद और गुलन्दाम दौड़ने और बातचीत करने लायक हुए, तो वह बहू और दामाद का खेल खेलते थे, और उनकी माताएँ इस खेल को बड़े आनन्द के साथ देखा करती थीं। जब उनकी उम्र कुछ और बढ़ी, जो यद्यपि माँ-बाप के सामने शरमाते हुए, इस तरह का खेल नहीं खेलते थे, तथापि एक-दूसरे से मिलने का आनन्द लेते थे। धीरे-धीरे खेल और मजाक को दृढ़ प्रेम के रूप में बदल कर, दोनों आशिक और माशूक हो गये। लेकिन अब दोनों के पिताओं के विचार बदल गये थे। अरबाब कमाल सोचता था, कि अगर गुलन्दाम से ब्याह करेंगे, तो खर्च बहुत ज्यादा होगा, क्योंकि शाह नजर अपने को अपने समय का बड़ा आदमी समझता है, इसलिये सस्ते में अपनी लड़की का ब्याह करने के लिये राजी नहीं होगा। वह भारी मेहर (स्त्री-धन) माँगेगा और भोज-तमाशे में भी बड़ी रकम खर्च करने के लिये कहेगा।

यदि अरबाब कमाल गुलन्दाम की जगह गुल बीबी को बहू बना के लाये, तो एक तरफ खर्च से बच जायेगा, और दूसरी तरफ बीबी आइशा और अदीना से बदला लेकर, लोगों के बीच में अपना सिर ऊँचा करेगा। लोग कहेंगे, कि 'अरबाब के पंजे से निकलना आसान नहीं है। देखा नहीं, कि उसने अदीना के साथ कैसा बदला लिया ? उसे बेनाम और बेनिशान करके देश से निकाल दिया, और उसकी मंगेतर को अपनी कनीज (लौंडी) बना लिया !

'मैं शाह नजर की लड़की को बहू नहीं बनाऊँगा, क्योंकि उसका सौन्दर्य मेरे लड़के के लायक नहीं है। गुल बीबी यद्यपि अनाथ है, तथापि अपने रूप-गुण के कारण वह मेरी बहू होने लायक है।' अरबाब कमाल ऐसा अपने मन में सोचता था और कितनी ही बार उसने दूसरे लोगों के सामने भी इसे कह डाला था। धीरे-धीरे यह बात शाह नजर के कानों तक पहुँची। उसने इसे अपनी बड़ी बेइज्जती समझी, और बिना किसी से सलाह किये, अपनी लड़की की सगाई अमान बाकी नामक एक आदमी से कर दी।

अमान बाकी की उम्र 50 साल से अधिक हो चुकी थी। वह तीन बार ब्याह कर चुका था, और अब अकेले जिन्दगी बसर कर रहा था। उसकी अधिकांश औरतें मर गयी थीं, इसलिये उसे 'जनकुश' (स्त्री-मार) और 'अभागा' कह कर कोई अपनी लड़की नहीं देता था। अब जब कि शाह नजर ने स्वयं उसे अपना दामाद बनाना चाहा, तो अमान बाकी ने उसकी जेब भर के खुश कर दिया। शाह नजर ने अपने इस काम द्वारा मानो अरबाब से कहा, 'यदि तू ने मेरी लड़की को बहू न बनाया, तो दूसरा ऐसा आदमी मिला, जिसने तुझ से तीन गुना अधिक पैसा खर्च करके मेरी और मेरी लड़की की इज्जत को ऊँचा किया।' लेकिन लड़के-लड़की की माताएँ इस काम से बिलकुल प्रसन्न न हुई। इबाद की माँ ने अरबाब कमाल से प्रार्थना करके, गुलन्दाम को लेने की बात कही। गुलन्दाम की माँ भी शाह नजर से रो-रोकर अपनी फूल-जैसी लड़की को उस 50 साला 'जनकुश' मरदुये के गले न बाँधने के लिये बड़ी प्रार्थना की। लेकिन इस सारे रोने-धोने और मिन्नत-प्रार्थना का दोनों मर्दों पर कोई असर नहीं हुआ। जो होना था, वही हुआ। तो भी इबाद और गुलन्दाम का प्रेम-सम्बन्ध टूटा नहीं।

बहू लाना

जल्दी ही अरबाब को अपनी मनोकामना पूरी करने का अवसर मिला। निराश और बेबस, दुखों की मारी बीबी आइशा एक हफ्ता बीमार रह कर मर गयी। इस खबर को सब से पहिले गाँव के इमाम मुल्ला खाकराह ने अरबाब कमाल के पास पहुँचा दिया। मुबारकबादी देते हुए, कहा—"यह बीबी आइशा के लिये गमी नहीं है, बल्कि तेरा उत्सव है। शुक्रवार बीतने के बाद गुल बीबी का निकाह कर देना चाहिये। लेकिन मेरी दक्षिणा अच्छी होनी चाहिये।"

अरबाब ने कहा—"मुल्ला जी, आप निश्चिन्त रहें, खुदा आपको खुश करेगा। दक्षिणा कोई बड़ी बात नहीं है। हम दोनों को सलामत रहना चाहिये। अब लोगों को

सूचित करें। जल्दी मुर्दे को गुसुल करा के और दफन करके इससे छुट्टी पायें, जिससे गुल बीबी को जल्दी अपने घर ला सकें।"

अर्थी उठाने के लिये जाने से पहिले अरबाब अपने घर में जाकर, बीबी से बोला—"बीबी आइशा मर गयी। उसे दफनाने के बाद बहू को अपने घर लायेंगे। तू इबाद और बहू के लिये कुछ जरूरी पोशाक तैयार कर दे। इसी सप्ताह के भीतर निकाह पढ़ायेंगे।"

बीबी ने कहा—"दादेश, तुमको क्या हो गया है? क्या ब्याह-भोज और बहू लाना इसी तरह होता है? लोग क्या कहेंगे? मैं कभी ऐसी अनाथ, बेकस लड़की को अपनी बहू नहीं बनाऊँगी। हमें ऐसी बहू चाहिये, जो हमारे योग्य हो। वह उसके पास जेबर-कपड़ा भेजेंगे, आना-जाना करेंगे। जो दुनिया का रीति-रिवाज है, उसको पूरा करके, अपनी लालसाओं को भी पूरा करके बहू को लायेंगे। यह नहीं हो सकता, कि मुर्दाखाने से एक लड़की को बाल घसीटते लाकर अपने घर में बैठा लें, और लोगों से कहें, कि यह हमारी बहू है। क्या इसी लालसा से मैंने तुम्हारे साथ एक बालिश्त ऊपर सिर रखा था? क्या इसी उम्मीद पर लड़के को सयाना किया था?"

अरबाब ने कुपित होकर कहा—"मेहरिया, बड़ी बातें न बना। अरबाब कमाल जो कुछ करता है, उसमें वह अरबाब कमाल है। लोग मेरा दोष नहीं दिखलायेंगे। जब तक मेरे पास धन-दौलत है, तब तक मेरी सभी इज्जत करेंगे। मैं बेवकूफ नहीं हूँ। लोग मेरी निन्दा करेंगे, इस ख्याल से मैं पैसा लुटा कर बहू लाऊँ, जब कि मुफ्त में मिलने वाली यह लड़की मौजूद है?"

"मैं कभी भी इस काम के लिये राजी नहीं हूँगी, कि तुम मुर्दाखाना से एक लप्पी-लुच्ची लड़की को बहू बनाकर घर में ला बैठाओ। यह कौन-सी बात है?"

"अच्छा, तेरी ही बात रही। पहिले बहू को मुल्ला जी के घर में भेज देता हूँ। फिर मुर्दा के मरने के बाद के शुक्र के बीतने के बाद भोज-भाज और शादी-तमाशा के रीति-रिवाज को पूरा कर के उसे अपने घर लाऊँगा।"

"मुल्ला जी के घर भेज देने से एक अनाथ लड़की इज्जतदार कन्या नहीं बन जायेगी। भिखमंगे की लड़की जहाँ कहीं भी रहे, भिखमंगे की लड़की ही रहेगी। मुल्ला जी के घर रहे, तब भी वह भिखमंगे की लड़की है, और अरबाब कमाल की बहू बने, तब भी भिखमंगे की लड़की है।"

"मैंने नहीं कहा, कि गुल बीबी बाय (सेठ) की लड़की है। मैं भी जानता हूँ, कि वह भिखमंगे की लड़की है। लेकिन मेरा जो पैसा डूबा था, उसके बदले वह मुफ्त में आ रही है। तू जानती है, कि अदीना ने कितनी नमकहरामी करके मेरे पैसे को मार लिया, और बीबी आइशा ने मेरी कितनी बेइज्जती की। इस समय देव मेरी सहायता

करने के लिए तैयार है। मैं आज जिन्दा अदीना और मुर्दा बीबी आइशा से बदला लूँगा!"

"इबाद क्या करेगा? वह मरने के लिये राजी है, लेकिन इस काम के लिये नहीं।"

"उसके राजी होने, न होने कोई मतलब नहीं। इबाद को इस काम में दखल देने का क्या अधिकार है? राजी हो तब भी वही, न राजी हो तब भी वही। उसकी क्या मजाल है, कि मेरे सोचे-समझे काम को बरबाद करे?" कह कर, अरबाब घर से बाहर चला गया।

"दादेश, मेरी ओर निगाह करो, मेरी ओर निगाह करो!" कहती, उसकी बीबी घर में बैठी रोती-धोती रही।...

एक बेचहारदीवारी की हवेली थी। उसके भीतर की एक कोठरी की छत गिर गयी थी। उसके पास एक दूसरी कोठरी थी, जिसकी दीवारें टेढ़ी हो गयी थीं। गली की तरफ रास्ते की ओर इस हवेली में गाँव के छोटे-बड़े इकट्ठा हुए थे। घर के भीतर एक कोने में अपने सिर को जाँघों पर रख कर, दीवार के साथ एक सत्रह-अठारह साल की लड़की बैठी हुई थी। उस लड़की के रंग-ढंग से मालूम होता था, कि वह बड़ी सुन्दरी होगी। लेकिन अब उसके ऊपर ऐसा दुख और आफत पड़ी थी, कि पतझड़ के फूल की तरह वह बिलकुल मुर्झायी-सी नजर आती थी। लड़की रोना-चिल्लाना नहीं कर रही थी। लेकिन अपनी आँखों को जिस तरह वह कभी घर की ओर, कभी छत की ओर घुमाती थी, उससे मालूम होता था, कि उसके ऊपर दिल को जला कर खाक कर देने वाली आफत आ पड़ी है, और रोने के लिये उसके पास आँसू नहीं रह गये हैं। उसकी उस करुण मूर्ति को देख कर, देखने वाले का दिल दहल जाता था। लड़की के सामने एक 70 साला बुढ़िया बैठी थी, जो कि अपने आप से कह रही थी, 'दुनिया नाशमान है। यह दिन हर एक आदमी के सामने आने वाला है। आज बीबी आइशा मर गयी है, तो कल हम भी नहीं बच रहेंगे। जल्दी या देर में हम सभी इस दुनिया से चल देंगे। फिर उसने लड़की की ओर निगाह कर, कहा—"मेरी बच्ची, अपने को सँभाल। इस मुसीबत में अपने आपको हाथ से न जाने दे। अगर तेरी नानी मर गयी है, तो मुझे उसकी जगह कबूल कर। मैं जानती हूँ, तुझे अकेली रह जाने का डर है। लेकिन खातिरजमा रख, मैं तुझे अकेला रहने नहीं दूँगी। अगर चाहती है, तो यहीं रह। मैं तेरे पास माँ बन के रहूँगी। अगर चाहती है, तो मेरे गरीबखाने में चल। वहाँ हमारे साथ जीवन बसर कर। तू जानती है, कि आका शरीफ के सिवा मेरा और कोई नहीं था। वह मेरा बेटा भी पकड़ कर जेल में चला गया। कब मुक्ति पायेगा, यह मालूम नहीं। मैं भी तेरी ही तरह बेकस, दुखियारी हूँ। हम दोनों एक जगह रहेंगे, और एक दूसरे की हमदर्दी करेंगे।"

यह कहने की आवश्यकता नहीं, कि यह लड़की गुल बीबी थी, और बुढ़िया थी

शरीफ की माँ। बुढ़िया अपने बेटे को देखने के लिये हर हफ्ता भिखमंगी करके एक कटोरी घी जमा करती थी। इसी भिखमंगी के जमाने वह बीबी आइशा के घर आते-जाते उससे परिचित हो गयी थी। जब शरीफ की माँ अपने दुर्भाग्य और शरीफ की गिरफ्तारी की बात कह कर, बीबी आइशा को सुनाते हुए, अपने दिल के दुख को हल्का करती, तो बीबी आइशा भी अदीना की रामकहानी और अपनी तकलीफों को कह कर, उसके साथ हमदर्दी जाहिर करती। दोनों बुढ़िया यद्यपि हाल ही में एक-दूसरे से परिचित हुई थीं, लेकिन उनके सिर पर पड़े दुख के पहाड़ ने दोनों के बीच पुरानी मित्रता स्थापित करके, एक-दूसरे के नजदीक कर दिया था। शरीफ की माँ का घर काफी दूर था, लेकिन शायद ही कोई हफ्ता जाता हो, जब कि वह बीबी आइशा के पास न आती हो, वहाँ न सोती हो।

जब बीबी आइशा बीमार पड़ी, तब से उसके मरने के समय तक शरीफ की माँ उस जगह से नहीं हिली। बुढ़िया के मरने के बाद उसकी लाश को उसने बाँधा, पानी और कफन दिया, उसके लिये शोक मनाया। जब बीबी आइशा की लाश कब्रिस्तान में चली गयी, और दफनाने की क्रिया खतम हो गयी, तब वह गुल बीबी के पास बैठी हुई, उसे तसल्ली दे रही थी, और उसे अपने साथ ले जाने तथा सहायता करने की बात कर रही थी। कोठरी में पड़ोस की दो-तीन और भी स्त्रियाँ थीं, और बाहर गाँव के लोग जमा थे। बीबी आइशा की लाश को ले जाते समय स्त्रियों ने अपने मुर्दों को याद कर-करके कुछ रोना-धोना किया, फिर अपनी बात में लग गयीं। जिस वक्त गुल बीबी दुख के समुद्र में डूब रही थी, शरीफ की माँ उसे ढाँढ़स बँधाना चाहती थी। लेकिन वहाँ बैठी दूसरी औरतों में से एक अपने शौहर की शिकायत कर रही थी, दूसरी अपने दामाद की नालायकी बतला रही थी, तीसरी अपनी लड़की की बदकिस्मती की कहानी कह रही थी। बीबी आइशा और गुल बीबी से संबंध रखने वाली बात कहते हुए एक औरत ने कहा––"मुझे मालूम होता था, कि बीबी आइशा की लाश रास्ते में पड़ी रहेगी। लेकिन अब देखा, कि उसके जनाजे (अर्थी) में बायों की औरतों के जनाजे से भी अधिक जमा हुए, अधिक लोगों ने उसके ताबूत पर हाथ लगाया।"

दूसरी स्त्री ने उसकी बात का समर्थन करते हुए कहा––"गली की ओर देखो। बड़े-छोटे सभी इकट्ठा हो फातेहा पढ़ रहे हैं। आरिफ बाय की औरत जिस दिन मरी थी, उस दिन इससे आधे भी आदमी नहीं जमा हुए थे।"

तीसरी औरत ने कहा––"यह सब अरबाब कमाल के कारण हो रहा है।"

एक स्त्री ने आश्चर्य करते हुए, पूछा––"बीबी आइशा के मुर्दे का अरबाब कमाल से क्या संबंध है?"

"बीबी, तुम कैसी हो? दुनिया का क्या कुछ भी पता नहीं है तुम्हें? न जाने कब से अरबाब ने गुल बीबी की सगाई अपने बेटे से कर दी है। दो-तीन दिन में भोज और निकाह भी हो जायगा।"

"कब सगाई की थी? अभी तक तो किसी ने इसके बारे में सुना नहीं।"

"उसी रोज जिस दिन बीबी आइशा मरी।"

"मुर्दे के भोज-भाज की बात कर रही है क्या?"

"चाहे मुर्दा का भोज हो, चाहे कुछ भी हो, जो होना था, सो हो गया।"

जब मर्द अपने-अपने घर चले गये, तो अरबाब कमाल और मुल्ला इमाम घर के दरवाजे पर आये। इमाम ने स्त्रियों से कहा––"रहमत बीबी, आइशा को दफन करके हम लोग आ गये। तुम भी अपने-अपने घर जाओ। मेरी बेटी गुल बीबी, आ मेरे साथ, मेरे घर चल। वहाँ अपनी माँ के साथ रहना।"

स्त्रियाँ अपनी चादरों को सिर पर रख कर चली गयीं और घर में गुल बीबी तथा शरीफ की माँ भर रह गयीं। कुछ क्षण बाद मुल्ला ने फिर कहा––"जल्दी आ, बेटी। शाम नजदीक आ गयी है। मैं तुझे अपने घर में पहुँचा कर मसजिद जाऊँगा।"

गुल बीबी चुप।

"सोती है, या जागती? बेवक्त हो रहा है। तुझे जल्दी करने के लिये कह रहा हूँ।" मुल्ला ने कहा।

"नानी के मरने के बाद पहिली रात यहाँ बिना बिताये कहाँ जायेगी?" शरीफ की माँ ने कहा––"आज रात को यहाँ चिराग जला कर रोती हुई शोक मनायेगी।"

"एक छोटी उम्र की लड़की को जिस घर में आदमी मरा हो, उसमें रहना ठीक नहीं। कैसे सोयेगी यहाँ? चिराग जलाया है, तो अपने आप जलेगा। उसके लिये यहाँ गुल बीबी को सुलाने की जरूरत नहीं।"

"गुल बीबी अकेली नहीं है। यद्यपि बीबी आइशा मर गयी है, तथापि मैं उसकी जगह गुल बीबी की देखभाल करूँगी।" शरीफ की माँ ने कहा।

अरबाब कमाल जब तक चुपचाप खड़ा था। लेकिन अब बेकाबू हो, उसने एकदम चिल्लाकर, कहा––"यह नयी बीबी आइशा कहाँ से आ टपकी? हम तो उसे दफना आये, फिर कौन-सी कब्र से उठ कर चली आयी? तू कौन है? कहाँ से तू बीबी आइशा की नायब और गुल बीबी की मालकिन बन कर आ गयी? अभी भाग जा, नहीं तो तेरी खाल खींच लूँगा!" फिर मुल्ला इमाम की ओर निगाह करके, कहा––"आप जानते हैं, कि कौन है? मैं तो इसे नहीं पहिचानता।"

मुल्ला ने दरवाजे से भीतर मुँह करके नजर डाली, और वहाँ बुढ़िया को देख कर, अरबाब से कहा––"यह वही औरत है, जो रोज गलियों में भिखमंगी करती फिरती है। शायद गुल बीबी को भी बुरे रास्ते पर ले जाने के लिये आई है।" फिर घर की ओर निगाह करके, उसने कहा––"ओ बुढ़िया हरजाई! अभी इस जगह से निकल,

जिस रास्ते से आयी, उसी रास्ते चली जा। गुल बीबी से तेरा कोई संबंध नहीं है। धर्म-शास्त्र के अनुसार गली में फिरनेवाली औरतों के लिये अपरिचित मर्द की तरह औरतों और लड़कियों की देख-भाल करना हराम है। उठ, भाग जा! भागने को कह रहा हूँ। भाग!"

मुल्ला इमाम ने अपनी आखिरी बात कहते हुए, हाथ के डंडे को घर की तरफ करके, मानो कहा, 'अगर जल्दी नहीं हटती, तो यह तेरे सिर पर पड़ना चाहता है!'

संकट

रात हो गयी थी। चारों ओर अंधकार था, इतना अंधकार कि यदि धरती की ओर निगाह करे, तो अपने पैरों को भी नहीं देख सकते। आसमान की ओर अगर नजर करें, तो जगह-जगह बिखरे सितारों के सिवा वह अधिकतर बादल से ढँका मालूम होता। कोई चीज आँखों के सामने नहीं दिखलायी पड़ती। संसार मौन था। जब-तब वर्षा की बूँदों की टपटपाहट की आवाज के सिवा इस मौन को भंग करने वाली कोई चीज नहीं थी। इसी समय अरबाब कमाल गली से आया। आज रात को नमाज पढ़ने के बाद वह मुल्ला इमाम के साथ चख-चख करता बैठा हुआ था। उसे अधिक समय हो जाने का पता नहीं लगा, नहीं तो हर रात को अब से दो घड़ी पहिले ही वह घर लौट आया करता था। जब अरबाब अपनी हवेली के भीतर आया, तो उसकी निगाह सबसे पहिले इबाद की कोठरी की ओर गयी। वह धीरे-धीरे वहाँ पहुँच कर, किवाड़ की दराज से भीतर झाँकने लगा। वहाँ एक कोने में लकड़ी के दीवट के ऊपर चिराग टिम-टिमा रहा था। शायद तेल कम था, इसलिये रोशनी भी कम थी, जिसकी वजह से भीतर अच्छी तरह दिखायी नहीं पड़ता था। अरबाब ने दराज से भीतर चारों ओर नजर दौड़ायी। गुल बीबी दीवार के पास दिखाई पड़ी। वह उसी तरह वहाँ बैठी थी, जैसे बीबी आइशा के मरने के दिन अपनी कोठरी में देखी गयी थी। फर्क इतना ही था, कि आज उस दिन की तरह शोकाकुल और चकित हो, अपनी दृष्टि को नीचे-ऊपर नहीं डाल रही थी, बल्कि बिलकुल शान्त हो, सिर को जाँघ पर रख के मानो सो रही थी। उसकी आँखें मूँदी हुई थीं, लेकिन हमें विश्वास नहीं, कि वह सो रही थी। अत्यन्त दुख, भारी रंज, और अत्यधिक निराशा ने उसको ऐसी दशा में पहुँचा दिया था, कि देखने वाला समझता कि वह सो रही है।

अरबाब कमाल ने इधर-उधर नजर डाली, लेकिन इबाद को वहाँ नहीं देखा। वहाँ से दूसरी ओर जा उसने कपास ओटने में लगी अपनी बीबी से पूछा—"रोज ही मैं तुझे ओटने में लगी देखता हूँ। इतनी रूई क्या करेगी?"

"भोज-भाज की कमी को पूरा करने के लिये काम करती हूँ। हमारे घर बहू देखने के लिये जब कोई आता है, तो मैं शर्म से मर जाती हूँ। जमीन नहीं फटती, कि उसमें समा जाऊँ। नयी बहू है, नया वर है; लेकिन एक भी नया गद्दा या रजाई नहीं है, एक भी नया जामा या कुरता नहीं है। घर की दीवार पर एक भी न सूजनी है, न बिछाने के लिये बिछौना। अगर तुम मेरी बात को माने होते, तो यह सब चीजें बहू के साथ आतीं। अब मैं ही देर तक मेहनत कर रही हूँ और चाहती हूँ, कि कुछ चीजों को तैयार कर लूँ।"

अरबाब ने कहा—"तू कभी अपने व्यंग्यबाण को छोड़े बिना नहीं रहती। जहाँ तेरा मुँह खुला, कि तेरी बातें बाण की तरह कलेजे को बेंधने लगीं। तू क्या समझती है, कि यह बहू हमें मुफ्त में मिली है? नहीं, यह बात नहीं है। अदीना के बाप की लाश का काम-काज किया, खुद उसको तीन साल तक पाला-पोसा, हाकिमों को रिश्वत देकर उसे जबरदस्ती काम पर भेजे जाने से बचाया। इन सब नेकियों के बदले उसने मेरी एक भेड़ को बरबाद किया, मेरी नौकरी से भाग गया। अंत में भी एक भेड़ और कितना खर्च करके मुझे जान बचानी पड़ी। इधर देखती ही है, कि बीबी आइशा के मुर्दे का भी क्रिया-कर्म करना पड़ा। इन सारे खर्चों और तकलीफों के बाद वह लड़की हमारे घर बहू होकर आयी है। तू सारी बातों का ख्याल नहीं करती, और जब तक जान-में-जान है, तब तक जबान चलाती जा रही है। इन बातों को छोड़। निकाह किये चालीस रोज हो गये, लेकिन अभी तक यह मालूम नहीं, कि ये दोनों एक जगह सोये भी या नहीं। यदि नहीं, तो दोष बहू का है या इबाद का?"

बीबी ने कहा—"दोष न बहू का है, न इबाद का। दोष केवल तुम्हारा है, जो कि एक पागल भिखमंगे की लड़की को बहू बना के ले आये। ऐसी औरत को मैं स्वीकार नहीं करूँगी। बहू है, लेकिन जिस दिन से आयी, उस दिन से आज तक न मुझ से, न इबाद से और न वह देखने वाली किसी औरत से उसने मुँह खोल कर एक भी बात कही। कितना भी पूछती हूँ, जवाब ही नहीं देती। जवाब तो अलग, हमारी तरफ निगाह भी नहीं करती। अगर बहुत पूछ-ताछ कर तंग करते हैं, तो मेरी तरफ एक बार तीखी निगाह से देख कर, आँखों को धरती में गड़ा देती है। अब तक उसे किसी ने खाते-सोते नहीं देखा। जब देखती हूँ, तब अपने सिर को पैरों पर रखे बैठी रहती है।"

अरबाब ने कहा—"तू हर काम में मेरे ऊपर दोष डालती है। यह तेरा दोष है, कि अपने बेटे को शिक्षा नहीं देती। यह तेरा दोष है, कि बहू का अपने बेटे के साथ मेल नहीं कराती, बल्कि आजीवन इन दोनों के बीच में बैर और फूट डालना चाहती है, और उसके बाद सारा दोष मेरे सिर मढ़ना चाहती है। मैं इन दोनों को नजदीक लाने पर बहुत सोचता रहा हूँ। लेकिन अब तक मैंने कुछ नहीं किया। सोचा था, कि तू खुद

सब बात ठीक कर देगी। अब विश्वास हो गया, कि तू कोई काम नहीं करेगी। आज ही रात से इस काम के करने का कोई उपाय ढूढूंगा। मैंने मुल्ला इमाम से मिल कर उसे दुआ पढ़ने के लिये कह दिया है। देख, मैं आज रात किस तरह काम ठीक करता हूँ।"

इसी वक्त इबाद के पैर की आहट मालूम हुई। अरबाब ने उसको पुकारते हुए, कहा--"इबाद !"

"लब्बे (जी) !"

"रात को इस वक्त तक तू कहाँ था, कुत्ते ?"

"कहीं नही", कहते, इबाद बाप के सामने आया।

"कैसे कहीं नहीं ? अभी तो बाहर से आया है।"

',कहीं नहीं। कूचे में लड़कों के साथ बात करता बैठा था।"

"नये घर वाले बने आदमी को ऐसे नहीं रहना चाहिये। क्यों घर नहीं बैठता ? क्यों अपनी बीबी के दिल को अपने हाथ में नहीं लेता ? तू समझता है, कि इसे कबूल नहीं करेगा, तो मैं दूसरी औरत लाकर तुझे दूंगा। इस कच्चे ख्याल को अपने दिमाग से निकाल दे। इसी को अपनी स्त्री बना, तो बना। अगर यह नहीं करेगा, तो तुम दोनों को जिन्दा ही कब्र में भेज दूंगा। मुझे अरबाब कमाल कहते हैं। बड़ी मुश्किल से यह नाम कमाया है। क्या तू इसे नहीं जानता ?"

अरबाब कमाल ने बातचीत को ऐसी हालत में पहुँचा दिया था, कि यदि इबाद के मुँह से एक भी उल्टी-सीधी बात निकलती, तो मार कर उसका सिर फोड़ देता। इबाद भी अपने बाप की आदत को जानता था, इसीलिये बहाना करते हुए बोला--"मैं तो चाहता हूँ लेकिन वह नहीं चाहती। इसमें मेरा दोष क्या है ?"

"मैं सब जानता हूँ तू पहिले ही से उसे नहीं चाहता था। अब जो होना था, हो गया, तो सारा दोष उसके मत्थे मढ़ना चाहता है। अगर तेरा दिल होता, तो एक मुट्ठी पँख भर की एक स्त्री से क्या हो सकता था ?"

"आप ठीक कहते हैं। पहिले नहीं चाहता था, लेकिन जब हर तरह से आपको उसके लिये उतारू देखा, तो मैंने भी स्वीकार किया। करूँ क्या, जब कभी उसके पास जाता हूँ, तो भागती है। अगर हाथ बढ़ा कर पकड़ना चाहता हूँ, बड़ा असभ्य बर्ताव करती है।" कह कर, इबाद ने रोने-जैसा मुँह बना लिया।

अरबाब ने कहा--"जा, अपने कमरे में। एक हफ्ता और तुझे समय देता हूँ। अगर इतने में ठीक कर लिया, तो बहुत अच्छा, नहीं क्या करना चाहिये, इसे मैं खुद जानता हूँ।"

इबाद अपने कमरे में चला गया। उसे पूरा विश्वास था, कि उसका बाप उसके पीछे-पीछे जरूर आयेगा, इसलिये रोज की तरह उसने दीये को बुझाया नहीं, और उस

दिन, जो कि निकाह की 40 वीं रात थी, पहिली बार गुल बीबी के पास जा कर उसका हाथ पकड़ना चाहा। गुल बीबी चालीस रोज से अपनी जगह से हिली नहीं थी। वह उठ कर, पीठ को दीवार से लगा के, खड़ी हो गयी। इबाद ने नजदीक जा कर, अपने हाथ को उसकी गर्दन पर रखना चाहा। गुल बीबी ने अपने दोनों हाथों को उसकी छाती पर लगा ढकेल दिया। इबाद पीठ के बल जमीन पर जा गिरा। गुल बीबी बहुत कमजोर थी। उसके पास इतनी ताकत कहाँ से आयी, कि इबाद-जैसे एक जवान को उस तरह धक्का दे सकती ? वस्तुतः अपने बाप को दिखलाने के लिये इबाद ने खुद ही यह सारा अभिनय किया था।

अरबाब कमाल किवाड़ के दराज से झांक रहा था। जब उसने इबाद को जमीन पर पड़ते देखा, तो रोक नहीं सका। कमरे के भीतर घुस, गुल बीबी से बोला--"ओ बेहया लड़की, यह कैसी बेशरमी की बात है, जो कि अपने शौहर के साथ तूने किया ?" इस घर में आये चालीस रोज हो गये थे, लेकिन आज तक गुल बीबी की आवाज को किसी ने नहीं सुना। आज उसने शेर की तरह दहाड़ते हुए कहा--"बेहया तू ! जालिम तू ! बेशरम तू !"

"अब इस बेहयाई को देख !" कहते हुए, अरबाब गुल बीबी की ओर दौड़ा, और उसे अपने पैरों के नीचे दबा कर, उसके दोनों हाथों को पकड़ना चाहा। गुल बीबी ने भी अरबाब की बेदमजनूँ की शाखाओं की तरह सारे छाती का ढाँके, लम्बी सफेद दाढ़ी को दोनों हाथों में लपेट कर पकड़ लिया। जब अरबाब गुल बीबी के हाथों को पकड़, जमीन पर पटक कर मारने लगा, तो गुल बीबी के जोर से गिरने के कारण अरबाब की मुट्ठी दाढ़ी उसके हाथ में उमड़ आयी। अरबाब पहिले डराने-धमकाने पर ही उतारू था; लेकिन दाढ़ी उखड़ जाने से उसका गुस्सा बहुत बढ़ गया, और उसने जमीन पर पड़ी गुल बीबी को लात और हाथ से मारना शुरू किया।

इस वक्त अरबाब के हल्ले-गुल्ले को सुन कर, उसकी बीबी ने दौड़ी-दौड़ी घर में आकर देखा, कि उसका शौहर गुल बीबी को मार रहा है, और बेटा मूर्ति की तरह दीवार का सहारा लिये खड़ा है। उसने अपने बेटे से कहा--"तु कैसा मर्द है ? इस जालिम के हाथ से अपनी औरत को छुड़ाता क्यों नहीं ?"

अरबाब अपनी बीबी के मुँह से अपने लिये 'जालिम' का नाम सुन कर, गुल बीबी को छोड़, सीधे अपनी बीबी की तरफ लपका, और उसे उठा कर जमीन पर पटक दिया। उसे भी लात-मुक्के से खूब मारा, फिर उसे वहीं छोड़, 'इस सारी खराबियों की जड़ तू है' कहते हुए अपने बेटे की ओर दौड़, उसे भी पीटना चाहा। लेकिन इबाद ने इसके लिये मौका नहीं दिया, और घर से निकल, बाहर की ओर भागा। अरबाब भी उसका पीछा करने के लिये बाहर निकला, लेकिन उलझ कर गिर पड़ा। घर में लौट कर, जले हुए कुत्ते की तरह वह अपनी दाढ़ी के लिये रोता रहा। गुल बीबी बेचारी ने

डर के मारे अरबाब की दाढ़ी पकड़ ली थी। जमीन पर गिरायी जा कर, अरबाब के हाथ से उसने उतनी मार खायी। वहाँ गिरी, तो फिर अपनी जगह से नहीं उठी।

इस घटना के बाद, बहुत दिनों तक किसी ने अरबाब को कूचे में नहीं देखा। ऊँची दाढ़ी की शरम से वह बीमार होने का बहाना कर, घर से बाहर नहीं निकला। कुछ और समय बीता। दाढ़ी थोड़ी-थोड़ी जम आयी थी। इसी वक्त उसकी बहू गुल बीबी मर गयी। जनाजा और सोगवारी के लिये अरबाब को बाहर आने के लिये मजबूर होना पड़ा। जो कोई भी फातेहा पढ़ने के लिये आता, और अरबाब से कुशल-मंगल पूछता, तो अरबाब जवाब में कहता—"खुदा ने मुझे दूसरा जन्म दिया है। बीमारी बहुत सख्त थी। मुँह के बाल सब झड़ गये, और अब फिर से नये जम रहे हैं। देखिये, अभी भी बीमारी का असर मेरी दाढ़ी पर है।"

गुल बीबी इबाद से जितनी घृणा करती थी, उतना ही इबाद भी उसे पसन्द नहीं करता था। वह गुलन्दाम के पीछे पागल हो रहा था। वह उनके पीछे इतना पागल हो गया था, कि सिर्फ गुल बीबी की ही परवाह नहीं करता था, बल्कि अपने माँ-बाप, खानदान, यहाँ तक कि अपनी इज्जत-आबरू को भी भूल गया था। गुलन्दाम भी एक घड़ी अगर इबाद को न देख पाती, तो विह्वल हो जाती। शादी हो जाने के बाद भी दोनों प्रेमी कोई-न-कोई उपाय निकाल कर, एक दूसरे से मिलते, और अपना दुख-सुख बयान करते। जब इबाद का गुल बीबी के साथ निकाह हो गया, और गुलन्दाम भी अमान बाकी के घर में बंद हो गई, तो इबाद की बेकली और बढ़ गई। वह पागल की तरह हमेशा अमान बाकी के घर के इर्द-गिर्द चक्कर लगाता फिरता, और जैसे ही मौका मिलता, पीछे की दीवार फाँद, भीतर घुस पशुशाला था रसोई-घर के कोने में गुलन्दाम से मिलता। अमान बाकी को, इबाद को अपने घर के इर्द-गिर्द बहुत घूमते देख कर सुबहा हुआ। वह गुलन्दाम के बारे में भी बुरा ख्याल करने लगा। असलियत जानने के लिये एक दिन वह गुलन्दाम से बोला—"आज रात को मैं अपने एक दोस्त के घर मेहमानी के लिये जा रहा हूँ। रास्ता लंबा और रात अँधेरी है, इसलिये वहीं सो जाऊँगा। अगर चाहती है, तो तू अपने बाप के घर चली जा, या अपनी माँ को बुला कर यहीं सो जा।"

गुलन्दाम ने कहा—"अच्छी बात, ऐसा ही करेंगे।"

अमान बाकी, मानो मेहमानी के लिये जा रहा हो, शाम होने के समय अपने कपड़े को ठीक करके बाहर गया। एक घंटा गली में जहाँ-तहाँ घूम कर, लौट कर वह

बिना पैर की आवाज किये, दीवार फाँद, हवेली के भीतर चला आया और वह असली बात जानने के ख्याल से भूसा घर के कोने में छिपकर बैठ रहा।

सप्तमी का चाँद उगने को आया। दीवारों के नीचे की जमीन दरख्तों की छाया से काली हो गयी थी, जिससे वहाँ आने-जाने वालों को पहिचाना नहीं जा सकता था। जब चाँद चारों ओर अपने प्रकाश को फैला चुका, तो गुलन्दाम बगीचे की ओर जा, घूमने लगी। फिर एक छायादार अँधेरी जगह में आ कर खड़ी हो गयी। यही जगह थी, जहाँ शौहर के घर न रहने पर दोस्त के आने के लिये उसने संकेत किया था।

गुलन्दाम को बहुत देर तक इन्तजार नहीं करना पड़ा। कोई बादाम की गुठली-सी चीज आ कर, उसके पैरों पर गिरी। उसने भी अपने हाथ की दो कंकड़ियों में से एक उसी ओर फेंक दी। जरा देर के बाद दीवार के ऊपर एक काली-काली चीज प्रकट हुई। गुलन्दाम ने दूसरी कंकड़ी भी उसी तरफ फेंकी। गुलन्दाम का दिल हर्ष और आशंका से काँपने लगा। वह लौट कर, दरवाजे को आधा खोल कर, कमरे में चली गयी। दीवार के ऊपर की काली छाया भी नीचे उतर कर, धीरे-धीरे दरवाजे की ओर बढ़ी। उसके भीतर चले जाने पर, दरवाजा बन्द हो गया। अमान बाकी भी भूसा-घर की खिड़की से एक-एक करके सभी बातें देखता रहा। गुलन्दाम को इस बात का कुछ भी पता नहीं था। अमान बाकी शिकार को हाथ से निकल जाने देना नहीं चाहता था। वह वहाँ से तेजी से आगे बढ़ कर घर के भीतर घुस आया। घर में अँधेरा था। शिकार कौन-से कोने में है, इसका उसे पता नहीं लग सकता था। असावधानी के कारण वह नाकामयाब नहीं होना चाहता था। शिकार तो घर के भीतर जरूर था, लेकिन डर था, दरवाजे से कहीं बाहर न निकल भागे। उसने बड़ी सावधानी से अंदाज लेना शुरू किया। उसे घर के एक कोने में दो आदमियों के साँस लेने की आवाज आती मालूम पड़ी। अमान बाकी ने भागने न देने के लिये, जा कर दरवाजे को बन्द कर दिया। हाथ से टटोल कर उसने दियासलाई पा कर उसे जलाया। रोशनी में अमान बाकी की आँखें दिये की तरह चमक उठीं। प्रकाश में अपने शिकार को उसने देख लिया। फिर वह चूहे पर बिल्ली की तरह टूट पड़ा। शिकार तो हाथ में आया, लेकिन शिकार एक 25 साला मजबूत जवान था, जब कि शिकारी 50 साल का कमजोर बूढ़ा था। शिकार ने साँड़ की तरह अमान बाकी को उठा कर जमीन पर दे पटका, और खुद दरवाजे से निकल कर बाहर हो गया। जिस वक्त अमान बाकी की जवान के साथ हाथापाई हो रही थी, उसी समय गुलन्दाम भी घर से भाग कर बाहर हो गई। वह अपने मुँह को नोच, बालों को बिखरा, अपने माँ-बाप के घर चली गयी। और उसने उनसे जाकर कहा—"चोर ने मेरे पति को मार डाला। करीब था, कि वह मुझे भी मार डालता, किन्तु मैं भाग निकली।"

अमान बाकी बड़ी मुश्किल में पड़ा हुआ था। उसकी समझ में नहीं आता था, कि कहाँ जाय, क्या करे, किससे दिल की बात कहे। वह किससे कहता, कि 'मेरी औरत ने मुझसे विश्वासघात किया है।' हाँ, यदि दुश्मन हाथ आ गया होता, तो जैसा कि

रिवाज है, उसे अपनी बीबी के साथ मार कर, अपनी बदनामी को दूर करते हुए, इस बात को कह सकता था। लेकिन वह भी नहीं हो सका। अब क्या करना चाहिये। इस वक्त जहर के घूँट को पी कर, चुप रहना भी ठीक नहीं था। औरत को छोड़ कर इन सारे रंज और तकलीफ को दूर करना भी मुश्किल था। औरत को कबूल किया, ऐसा इमाम के पूछने पर, "कबूल किया" कह कर, उसे हलाल माल बना कर, उसने रखा था। अब उस पर एक चोर दस्तन्दाजी कर रहा था। उससे बदला लेने की जरूरत थी। यह सब सोचते हुए, अमान बाकी के दिल में चोर का शब्द आया, जिससे उसको बड़ी मदद मिली। उसने समझा कि रास्ता निकल आया, वह अपनी चोट की जगह को हाथ से सहलाते उठ कर कोठरी से बाहर आया, और बड़ी मुश्किल से छत पर पहुँच कर, जितने जोर से बोल सकता था, उतने जोर से चिल्ला उठा—"चोर को भागने न दें!"

अरबाब कमाल दाढ़ी नुची होने से घर से बाहर नहीं आना चाहता था, और शाह नजर भी अपनी लड़की की शिकायत के कारण दामाद से प्रसन्न नहीं था। इन दोनों को छोड़ कर गाँव के सभी छोटे-बड़े "क्या बात, क्या बात" कहते, अमान बाकी की हवेली के सामने जमा हो गये। अमान बाकी कोठे पर से नीचे उतर कर, लोगों के सामने आ के बोला—"उसे पकड़ा नहीं?"

"किसको?" गाँव के एक आदमी ने कहा।

"चोर को, इबाद को।"

"कौन-से इबाद को।"

"अरबाब कमाल के पुत्र को।"

"अरबाब कमाल का पुत्र चोर है? हमें विश्वास नहीं।"

"मैं भी विश्वास नहीं करता था," अमान बाकी ने कहा—"लेकिन जब खुद अपनी आँखों से देखा, तो विश्वास करने के लिये मजबूर हुआ। बात यों है। रात को मेरी स्त्री अपने बाप के घर गयी थी। मैं अकेला सोया था। घर का दरवाजा धीरे-धीरे खुला, और कोई आदमी मेरे घर के भीतर घुस आया। वह इधर-उधर से चीजों को जमा करने लगा। मैंने उठ कर दियासलाई बाल, चिराग जला कर देखा, कि इबाद है। दुश्मन को पकड़ना चाहा, लेकिन उसने मुझे उठा कर जमीन पर पटक दिया। और खुद बाहर निकल गया। यही कारण था, जो मैंने कोठे पर चढ़ कर पुकार की। मुझे विश्वास था कि लोग उसे पकड़ लेंगे, लेकिन यह नहीं हुआ। शिकार हाथ से निकल गया। अब शहर जाऊँगा, तो वहाँ हाकिम के पास दरख्वास्त दूँगा, और यसावुल को ले आ कर, उसे बन्दी कर शहर पहुँच, मीरशब के बेतों की जबान से उससे बातचीत करूँगा।"

"अमान बाकी, आज रात को रह जा। जो कुछ करना हो, कल करना।"—कहते हुए लोगों ने मना किया। लेकिन उसने एक न सुनी, और उसी समय निकल कर, शहर की ओर चला गया।

यद्यपि कुछ सीधे-सादे लोगों ने अमान बाकी के झूठ के ताने-बाने पर विश्वास कर लिया, तथापि अधिकांश तजर्बेकारों को मालूम हो गया, कि यह चोर कौन था। शाह नजर ने भी भाग कर अपने घर आ लड़की से चोर की बात सुनी, तो उसे विश्वास हो गया, कि सचमुच ही यह चोर आम चोर नहीं हो सकता था। लेकिन अपने लाभ का ख्याल करके, उसने इस भेद को खोलना पसन्द नहीं किया।....

शरीफ करातेगिन के बन्दीखाने में था, जब कि एक दिन एक 24–25 साला जवान जेल के भीतर लाया गया। जब नये मेहमान ने आकर बन्दियों के गले में जेल (जंजीर) और पैरों में बेड़ी देखी, तथा इस कब्र-जैसी छोटी, तंग और अँधेरी कोठरी में उनकी तकलीफें देखीं, तो डरके मारे रोने लगा। बोला—"तुहमत लगा कर नाहक ही मुझे गिरफ्तार किया गया।"

उस समय एक बन्दी ने उससे पूछा—"तू कहाँ का रहने वाला है, और किसका लड़का है?"

"फलाँ गाँव का रहने वाला तथा अरबाब कमाल का पुत्र हूँ।"

"तेरा बाप जिन्दा है?"

"हाँ।"

"माल और मिलकियत उसके पास है?"

"हाँ, भेड़ों का रामा (झुँड) भी है, खेती का काम भी है, घर और जायदाद भी है। मेरे पिता प्रतिष्ठित तथा धनी आदमी हैं, और गाँव के दो-तीन बड़े लोगों में गिने जाते हैं।"

"अगर ऐसा है, तो क्यों डरता है? जेलखाने में सदा रहना, जेल और बेड़ी पहिनना, मीर गजब के बेतों की मार से जान देना, यह सब हमारे जैसे गरीब, बेकारों के लिये हैं। तू चाहे झूठी तोहमत के कारण पकड़ा गया हो, या सच्ची, जल्दी ही तुझे छुट्टी मिल जायेगी, और जितने दिनों यहाँ रहेगा, इज्जत और प्रतिष्ठा के साथ एक मेहमान की तरह दिन गुजारेगा। जब तेरा पिता धनी और पैसेवाला है, तो हाकिम से लेकर कैदखाने के सिपाही तक, सभी तेरी नाजबरदारी करेंगे, अगर तुझे छोड़ किसी दूसरे को बन्दीखाना में लाये होते, और उसके बाप से पैसा मिलना सम्भव न होता, तो दूसरी बात थी। तुझे ऐसे ही यहाँ नहीं लाये हैं। तेरे आने से सभी सरकारी लोगों की रोटी पर घी पड़ेगा, इसीलिये तुझे यहाँ लाये हैं। जिस वक्त उनका काम ठीक हो जायेगा, तुझे छुट्टी दे देंगे। अगर हमारे या हमारे बापों के पास चार पैसा होता, तो हम इस हालत में न पड़े रहते।"

जवान ने नये आये बन्दी को कुछ तसल्ली देनी चाही थी; लेकिन जैसे ही बाहर से पैर की आहट सुनायी दी, वह डर के मारे काँपने लगा। ताला और किवाड़ खोलने की आवाज जब सुनी, तो जान पड़ा कि भय के मारे उसके प्राण निकले जा रहे हैं।

इसलिये उसने अपने को बन्दियों के पीछे छिपा लिया, लेकिन भीतर आने वाला था जेलखाने का सिपाही। एक हाथ में रोटी और दूसरे में एक चायनिक चाय लिये हुए पास आकर, उसने बन्दियों से पूछा—"बाय-बच्चा कहाँ है ?"

"कौन-सा बाय-बच्चा ?" एक बन्दी ने पूछा।

सिपाही—"अरबाब कमाल का पुत्र इबाद।"

इबाद ने सिपाही के हाथ में जब चाय और रोटी देखी, तो प्रसन्न हो, बिना भय के अपनी जगह खड़ा होकर, बोला—"मैं ही इबाद हूँ। क्या कहते हो ?"

"कुछ नहीं। तुम्हारे लिये चाय और रोटी लाया हूँ। खुदा चाहेगा, तो जल्दी ही छूट जाओगे। लेकिन उस वक्त मेरी खिदमत को भूलना नहीं।" फिर पास जाकर, इबाद के कान में बोला—"रोटी और चाय यसावुलबाशी ने भेजी है। उन्होंने कहा है, 'जिस वक्त बाप देखने आये, अगर हमारी दोस्ती चाहते हो, तो उससे पैसा खरच करने में कंजूसी न करने के लिये कहना, नहीं तो वही हालत होगी, जो कि यहाँ दूसरे बन्दियों की देख रहे हो।"

इस बातचीत से शरीफ को मालूम हो गया, कि यह उसी अरबाब कमाल का बेटा है, जिसने उसकी माँ को बीबी आइशा के घर से "हरजाई औरत" कहकर भगा दिया, और रोती-चिल्लाती गुल बीबी को पकड़ ले गया। गुल बीबी की हालत जानने के लिये ही, शरीफ ने इबाद के साथ नजदीकी सम्बन्ध स्थापित करना चाहा और कुछ दिन जो इबाद ने जेलखाने में काटे, उसमें उसने सारी बातें जान लीं।

अदीना ने समावार-खाने में जब अपने परिवार की बात शरीफ से पूछी, तो इस भय से, कि अदीना की हालत कहीं बुरी न हो जाये, सब कुछ जानते हुए भी शरीफ ने उसे बतलाना नहीं चाहा। अपनी रामकहानी सुनाने के बाद जब उसे दुखी, किन्तु कुछ धीरज धरे देखा, और फिर आगे की बात उसने पूछी, तो शरीफ ने संक्षेप में सारी बात कह सुनायी। शरीफ अपनी कहानी अदीना को सुनाते समय हर थोड़ी-थोड़ी देर पर उसकी हालत को ध्यान से देखता, और उसे पहिले से भी ज्यादा शान्त देख, फिर आगे की बात सुनाता। जब कहानी खत्म हो गयी, तो उसने देखा, कि अदीना सो गया है। उसने समझ लिया, कि इस कथा का उसके ऊपर कोई असर नहीं हुआ। इसी बीच में शाह मिर्जा पुलाव और शोरबा लेकर आया, और साथ खाना खिलाने के लिये चाहा, कि अदीना को जगा दे। उसने बहुत कोशिश की, लेकिन अदीना नहीं जगा। मालूम

हुआ, कि वह बेहोश हो गया है। अब शरीफ ने समझा, कि यह सारी शान्ति और गम्भीरता उस घटना को महत्व न देने के कारण नहीं बल्कि कमजोरी के कारण थी।

शाह मिर्जा ने अदीना के हाथ-पैर मले, और उसके मुँह पर पानी का छींटा दिया। तब अदीना ने होश में आकर अपनी आँखों को खोला। लेकिन खाने की बात तो अलग, उसमें हिलने-डुलने की भी शक्ति नहीं रह गयी थी। केवल अपनी आँखों को खोल कर, एक बार गौर से थोड़ी देर देखकर उसने फिर उन्हें मींच लिया। अदीना की इस हालत को देखकर वह आश और रोटी शाह मिर्जा और शरीफ के गले से भी नीचे नहीं उतरी। दोनों ने अदीना की चारपाई को उठाकर, समावार-खाने के भीतर पहुँचाया।

शरीफ फिर आने का वचन देकर, अपने रहने की जगह चला गया।

पतझड़

बाईस अक्तूबर, 1918, को ताशकन्द की आब-हवा मामूली से ज्यादा ठंडी हो गयी थी। वृक्षों के पत्ते, जो पहिले से ही पीले हो गये थे, इस सर्दी के कारण अपने को और नहीं रोक सके, और बाज के झपेटे में पड़े कबूतर के परों की तरह हर तरफ बिखर कर गिरने लगे। उनमें से कुछ छतों पर उड़कर गये, कुछ नहरों में, और कुछ दूसरी जगहों में। पतझड़ की वर्षा भी उनके पीछे पड़ी हुई थी। इसी के कारण मानो वह अपने लिये शरण-स्थान ढूंढ़ रहे थे। अधिक सर्दी की वजह से वर्षा भी बरफ से मिली हुई पड़ रही थी। जमीन पर पड़ी यह बरफ अभी हवा से इधर-उधर उड़ती ठीक से सब जगह को न ढाँक, सबको कुरसी-सा बनाये हुए थी। जाड़े के समय से पहिले आ जाने के कारण, अभी लोगों ने सरदी की पोशाक अपने लिये तैयार नहीं करायी थी, इसलिये आने-जाने वाले इस बरफ की बारिश में पानी में गोता खाये मुर्गी के चूजों की तरह काँपते, अपने हाथों को छिपाये, बराण्डों, दुकानों के छज्जों या दूसरी जगहों में खड़े किंकर्त्तव्यविमूढ़ से दिखाई पड़ते थे। बादल काला था, सूरज छिपा, दिन अँधेरा, ऋतु भीषण, जमीन पंकिल और आसमान बरफ की वर्षा करता था। धीरे-धीरे मौसिम ने ऐसा कर दिया, कि कूचे और सड़कों पर आदमियों के आने-जाने की कोई आवाज सुनायी नहीं देती थी। ताशकन्द जैसे एक कोलाहलपूर्ण बड़े शहर के लिये यह नीरवता बड़ी विचित्र थी। अन्त में हवा की सरसराहट के सिवा कहीं कोई शब्द नहीं सुनायी पड़ता था।

इसी वक्त ताशकन्द के कफ्कर मुहल्ला की ओर से एक गरीब का ताबूत (अर्थी) आता दिखलायी पड़ा, जिसके ऊपर चार गज मोटा रँगा कपड़ा पड़ा हुआ था। ताबूत के साथ आठ-नौ गरीब मजदूरों के सिवा और कोई नहीं था। वे ही थे ताबूत उठाने

वाले भी, शोक मनाने वाले भी, और मुर्दे के संबंधी भी। भारी बोझ से लदे-ऊँट की तरह ताबूत बहुत धीरे-धीरे चल रहा था। हाँ, वह बहुत बोझिल ताबूत था। लेकिन उसका बोझ वह बोझ नहीं था, जिसे ऊँट, घोड़ा या मनुष्य उठा सके। यह बोझ था दुख, रंज, गम, हसरत, वियोग और निराशा का, जो कि पहाड़ों की कमर को भी झुका सकता था। निश्चय ही ऐसे बोझ को वे ही आदमी उठा सकते थे, जो कि ताबूत को ले जा रहे थे।

ताबूत धीरे-धीरे उरदा से पार हो, और कितने मुहल्लों से गुजरते, शेखाबन्दी-तहर के कब्रिस्तान में पहुँचा। वहाँ आज ही एक नयी कब्र खोदी गयी थी, जिसमें उन्होंने मुर्दे को लेटा दिया, और फिर कब्र को ठीक से बन्द कर दिया। लोगों ने आस-पास मिट्टी डाल कर, वहाँ ऊँट के कोहान की तरह एक कब्र खड़ी कर दी। लिखित पत्थर की जगह वहाँ कुछ कंकड़ियाँ चुन दीं। यह सब काम खतम हो जाने के बाद, उन आदमियों में से एक ने पूछा—"अदीना कैसा आदमी था?"

दूसरे ने जवाब दिया—"अदीना एक ऐसा फकीर, गरीब, निराश जवान था, जो तरुणाई में ही अकारण विश्वासघात, खयानत, जुल्म और अन्याय की बलि हो गया! धनियों और बायों ने उसे वेसमय ही खतम कर दिया!"

प्रश्नकर्ता शाह मिर्जा था, और उत्तरदाता शरीफ।

फिर सबने एक ही बार आवाज लगाया—"अदीना मुर्द (मर गया)! जिन्दाबाद इन्कलाब!"

"नेस्तबाद अन्याय!" नारा लगा. वे लोग जिस रास्ते से आये थे, उसी रास्ते से लौट गये।

समोवर-खाने में जिस दिन अदीना ने शरीफ से बातचीत की थी, उसके एक महीने बाद वह मर गया।

इतिहास बतलाता है, कि ताजिक कोहिस्तान में बहुत जुल्म और अत्याचार हुआ, बहुत खून बहाया गया, बहुत से परिवार उजाड़ दिये गये। मध्य-एशिया के और लोगों को भी बहुत तकलीफें बर्दाश्त करनी पड़ी होंगी; लेकिन कोहिस्तान के ताजिकों का तो सारा इतिहास ऐसे अत्याचारों से भरा पड़ा है, जैसा अन्यत्र शायद ही कहीं देखा गया हो। एक ओर बुखारा के अमीर उनको बरबाद करते, दूसरी ओर खुद उनके अपने धनी बाय और अमलदार हर तरह से लूट-खसोट करते हुए, उनकी जिन्दगी को दूभर करते। ऊपर से उनके पुराने जमाने से चले आये रीति-रिवाज भी पहाड़ की तरह छाती को दाबे हुए थे। यह था उनका जीवन-पथ। इस पथ में बहुतेरे अदीना, बहुतेरे शरीफ, बहुतेरे शाह मिर्जा, बहुतेरे संगीन, बहुतेरी गुल बीबियाँ, बहुतेरी बीबी आइशाएँ और बहुतेरी गुलन्दाएँ बलि चढ़ी कुर्बान हुईं।

यद्यपि 1920 की क्रान्ति ने बुखारा से अमीर की हुकूमत को खतम कर दिया, उसके हाकिमों को मार भगाया, तथापि स्थानीय धनिकों और बड़ों को जोर-जुल्म देर तक चलता रहा। आखिरी अमीर बुखारा के पैदा किये बासमचियों (डाकुओं) के जुल्म से ताजिक-जाति को बहुत तकलीफ उठानी पड़ी। उन्होंने बेगुनाह ताजिक मर्द-औरतों, बच्चे-बूढ़ों को हजारों की तादाद में कत्ल किया, और उनके गाँव-के-गाँव जला दिये। उस समय ताजिकिस्तान ने ऐसा जुल्म सहा, जिसका उदाहरण इतिहासों में बहुत कम मिलता है। लेकिन अन्त में दुख की कालरात्रि खत्म हुई।

सन् 1924 में मध्य-एशिया की जातियों की नयी राजनीतिक सीमाएँ निश्चित हुईं, जिसके साथ ताजिक कोहिस्तान के आकाश में सुख और समृद्धि, शान्ति और स्वतंत्रता की उषा प्रकट हुई। इस सीमाबन्दी के अनुसार स्वतंत्र सोवियत ताजिकिस्तान की सरकार कायम हुई। लाल सेना और ताजिक गरीब किसानों ने मिलकर, बासमचियों (डाकुओं) की जड़ उखाड़ फेंकी।

ताजिकिस्तान केवल बासमचियों से ही मुक्त नहीं हुआ, बल्कि उसने अपने यहाँ के जमींदारों और पशुमालिकों को भी निकाल बाहर किया, जिससे एक नया ताजिकिस्तान पैदा हुआ।

अब ताजिक पहाड़ों के आकाश में हवाई जहाज उड़ते हैं, ताजिकिस्तान के पहाड़ों की ऊँची-नीची, टेढ़ी-मेढ़ी सड़कों पर मोटरें और मोटर-बसें दौड़ती हैं। वह समय भी दूर नहीं है, जब कि इन पहाड़ों पर रेलें दौड़ा करेंगी (अब दौड़ रही हैं)। अब केवल शहरों में ही नहीं, बल्कि गाँवों में भी स्कूल, शिशु-शालाएँ, दवाखाने, क्लब, किताबखाने, वाचनालय, सैंकड़ों-हजारों की तादाद में स्थापित हो गये हैं। आज वहाँ खोपड़ी के मीनारों की जगह बेतार के मीनार, कपास के कारखानों की चिमनियाँ और रेलवे के सिगनल खड़े दिखाई पड़ते हैं।

अदीना मर गया। शरीफ और शाह मिर्जा के जीने-मरने की बात हमें मालूम नहीं। लेकिन हम इतना जानते हैं, कि पहले के अदीना, शरीफ और शाह मिर्जा जैसे फकीर और उत्पीड़ित आजकल ताजिक मेहनतकशों के 'डेपुटी' (पार्लमिंट मेम्बर) बने हुए हैं। गुल बीबी और बीबी आइशा तथा उन जैसी हजारों ताजिक स्त्रियाँ कुर्बान हुईं, लेकिन अब ऐसी हजारों गुल बीबियाँ और बीबी आइशाएँ पैदा हुई हैं, जिन्होंने कि

ताजिक स्त्रियों को मर्दों की गुलामी तथा पुराने अत्याचारपूर्ण रीति-रिवाजों से सदा के लिये मुक्त कर दिया है। आज जैसे कल के गरीब ताजिक मर्द स्वतंत्रतापूर्वक अपना काम करते हैं, उसी तरह स्त्रियाँ भी अधिकार-प्राप्त और स्वतंत्र हैं।

मुमकिन है, कि अभी भी ताजिक जाति के भीतर अरबाब कमालों, मुल्ला खाकराहों और मर्दे-खुदाओं-जैसे लोग हों, जो ताजिक लोगों के रास्ते में हर तरह काँटा बिछाना चाहते हैं, लेकिन हमें विश्वास है, कि जिस गरीब-वर्ग ने बाहरी जालिमों को अपने भीतर से निकाल फेंका, वह फिर अपने भीतर के अत्याचारियों के धोखे और फरेब में न पड़ेंगे, और उनकी सारी वहानेबाजियों को झुठला करके, दुनिया से उन्हें नेस्त-नाबद कर डालेंगे। आज ताजिकिस्तान में जो फूल खिला है, वह पूर्वी दुनिया को मधुर मेवा प्रदान करेगा।

—:o:—